अप्रैल-जून, 2017 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक
अविनाश शुक्ला

महत्वपूर्ण निर्णय

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 112 – विवाहित स्थिति के दौरान बच्चे का जन्म – यदि बच्चे का जन्म उसकी माता और किसी पुरुष के मध्य विधिमान्य विवाह के कायम रहने के दौरान हुआ तो जब तक कि यह दर्शित न किया जा सके कि विवाह के पक्षकारों की परस्पर पहुंच ऐसे किसी समय नहीं थी जब उसका गर्भाधान किया जा सकता था, यह इस बात का निश्चायक सबूत होगा कि वह उसी पुरुष का धर्मज पुत्र है ।

प्रकाश बनाम **कर्पागम और एक अन्य** 253

संसद् के अधिनियम

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (195) – (234) क्रमशः

पृष्ठ संख्या 161 – 310 **(2017) 1 दा. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका – अप्रैल-जून, 2017 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 161 –310)

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार,
विधि मंत्रालय

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी
परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य,
संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री असलम खान और पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 36

वार्षिक : ₹ 135

© 2017 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

अप्रैल-जून, 2017

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अन्नपूरण नाथ **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	272
अनिल कुमार सिंह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	161
कन्हैया रामचंद थावरानी **बनाम** महाराष्ट्र राज्य	216
गुजरात राज्य **बनाम** महेन्द्र सुभाषभाई वानखेड़े	177
टी. कोट्टाइसामी **बनाम** पुलिस आयुक्त, चेन्नई और एक अन्य	267
तबाती बेह डेली (श्रीमती) बनाम ओडिशा राज्य और अन्य	170
प्रकाश **बनाम** कर्पागम और एक अन्य	253
राजेन्द्र सिंह **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	306
वीरदीन **उर्फ** बीरू **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	300
स्वपन पॉल **बनाम** त्रिपुरा राज्य	201
हिमाचल प्रदेश राज्य **बनाम** दलीप कुमार	280

संसद् के अधिनियम

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	195 – 234

पृष्ठ संख्या

अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (1989 का 33)

– धारा 3(1)(x)(xi) [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 341, 323, 354, 294 और 34] – सार्वजनिक स्थान पर अनुसूचित जाति के सदस्य का अपमान किए जाने के प्रयोजनार्थ अपशब्दों का प्रयोग किया जाना, बल प्रयोग किया जाना और डराया-धमकाया जाना – अन्वेषण अधिकारी के समक्ष आहत और साक्षियों के कथनों की पुष्टि का होना – दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर यह साबित होना कि आहत अनुसूचित जनजाति की सदस्य है और अभियुक्त किसी अन्य धर्म के – अतः अभियुक्तों को उन्मोचित किया जाना उचित नहीं था ।

तबाती बेह डेली (श्रीमती) बनाम **ओडिशा राज्य और अन्य** 170

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43)

– धारा 12, 20 और 23 – मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन – यदि अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन केवल पत्नी द्वारा फाइल किया जाता है, तो अवयस्क बच्चे भी भरणपोषण के हकदार होंगे – भरणपोषण अंतिम और साथ ही अंतरिम रूप में प्रदान किया जा सकता है ।

अनिल कुमार सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 161

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 438 [सपठित स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की जमानत के लिए धारा 37 की कठोरता और धारा 15, 25, 19 या 24 या 27(क)] – जहां आवेदक के ऊपर कुछ समय पूर्व अलग-अलग

पृष्ठ संख्या

अपराधों में सात अपराध दर्ज हैं और वर्तमान समय का एक अपराध मिलाकर आठ अपराध हैं तो वहां पर आवेदक को जमानत पर निर्मुक्त किया जाना न्यायसंगत नहीं होगा ।

वीरदीन उर्फ **बीरू** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 300

– धारा 438 [सपठित स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की जमानत के लिए धारा 37 की कठोरता और धारा 15, 25, 19 या 24 या 27(क)] – आवेदक द्वारा गिरफ्तारी से पूर्व जमानत आवेदन – दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 की प्रयोज्यता – यदि आवेदक के पास से वाणिज्यिक मात्रा से कम मात्रा की अफीम की भूसी बरामद की गई है और एन. डी. पी. एस. अधिनियम की धारा 19 या 24 या 27(क) के अधीन अपराध नहीं है तो जमानत के लिए धारा 438 लागू होगी ।

वीरदीन उर्फ **बीरू** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 300

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302 – हत्या – साक्ष्य – यदि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा मृतक की हत्या किए जाने की घटना को देखे जाने का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है और साक्षियों का साक्ष्य सुना-सुनाया है तथा विचारण न्यायालय द्वारा निर्णय पारित करने में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं बरती गई है तो अभियुक्त दोषमुक्त होने का हकदार है ।

हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम **दलीप कुमार** 280

– धारा 307 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227] – हत्या का प्रयत्न – आरोप की विरचना – याची ने छड़ जो प्रथमदृष्ट्या घातक हथियार है, से पीड़ित

पृष्ठ संख्या

के सिर पर हमला किया जिससे पीड़ित को क्षति पहुंची क्योंकि क्षति की प्रकृति यह विनिश्चित करने के कारकों में से एक है कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध का प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं, अतः विद्वान् विचारण न्यायालय ने याची के विरुद्ध हत्या के प्रयत्न के लिए आरोप की विरचना में कोई विधिक या तथ्यात्मक गलती नहीं की ।

अन्नपूरण नाथ बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 272

– धारा 354, 385, 452 और 506 – गृह अतिचार – महिला का शीलभंग किया जाना – यदि अभियुक्त- पुलिस पदधारियों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि उन्होंने शिकायतकर्ता/पीड़िता के घर में घुसकर उसका शीलभंग किया और उससे धन उगाही करने का प्रयत्न किया तथा इन बातों को पुलिस या लोगों के समक्ष प्रकट किए जाने पर उसे भयानक परिणाम भुगतने की चेतावनी भी दी गई और उपरोक्त बातों की उसके संपूर्ण परिसाक्ष्य तथा दस्तावेजी साक्ष्य से संपुष्टि हुई है तो अभियुक्त-पुलिस पदधारियों को दोषसिद्ध किया जाना न्यायसंगत है ।

स्वपन पॉल बनाम **त्रिपुरा राज्य** 201

– धारा 354, 385, 452 और 506 – गृह अतिचार – महिला का शीलभंग किया जाना – जहां मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में एक दिन का विलंब हुआ हो और घटना की गलत तारीख लिखी गई है, वहां पर पीड़िता के संपूर्ण परिसाक्ष्य जिसे मौखिक और कई दस्तावेजी साक्ष्य से समर्थन मिलता है, उन बातों को व्यक्त नहीं किया जा सकता, अतः अभियुक्त-पुलिस पदधारियों की दोषसिद्धि उचित है और पुलिस महा निदेशक को यह भी निदेश दिया जाता है कि अभियुक्त-पुलिस पदधारियों के विरुद्ध जांच करें और अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करें ।

स्वपन पॉल बनाम **त्रिपुरा राज्य** 201

पृष्ठ संख्या

– धारा 363, 366 और 376 – अपहरण और बलात्संग – दंड – विचारण न्यायालय द्वारा न्यूनतम दंड विहित किया जाना – पीड़िता का अप्राप्तवय होना और अभियुक्त-अपीलार्थी का केवल 18 वर्ष आयु का होना – पीड़िता व अभियुक्त के बीच प्रेम-प्रसंग का मामला होना – न्यूनतम दंड को घटाने का कोई विशेष कारण प्रतीत नहीं होता है और ऐसे अपराधों के लिए न्याय हेतु सामाजिक मूल्य को दिशा देने के लिए 2 वर्ष 9 मास के कारावास सहित 100/- रुपए के जुर्माने के दंड को बढ़ाते हुए 7 वर्ष का कठोर कारावास और 5,000/- रुपए जुर्माने का दंड अधिरोपित किया जाना न्यायसंगत है ।

गुजरात राज्य बनाम **महेन्द्र सुभाषभाई वानखेड़े** 177

– धारा 379 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438] – जमानत आवेदन – यदि अभियुक्त-आवेदक अभियोजन साक्ष्य में हेरफेर करने की स्थिति में नहीं है और विधि के अनुसरण में अभियुक्त-आवेदक बुलाए जाने पर अन्वेषण कार्यवाही में सम्मिलित होता है तथा न्यायालय की अनुज्ञा बिना भारत से बाहर नहीं जाता है तथा अभियुक्त-आवेदक अधिकारी या न्यायालय के समक्ष किसी व्यक्ति द्वारा कोई बात प्रकट करने पर रोकता नहीं है तो उसे जमानत पर निर्मुक्त किया जाएगा ।

राजेन्द्र सिंह बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 306

प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 (1956 का 42)

– धारा 23, 25, 26, 26ख और 26घ [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2(ग) और अध्याय 15, 16] – धारणा उपबंध द्वारा धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध की संज्ञेयता – किसी भी स्थिति में प्रतिभूति अधिनियम की

पृष्ठ संख्या

धारा 25 के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि यह धारा पुलिस को धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों के मामलों में भी अन्वेषण करने की शक्ति मात्र इस कारणवश प्रदान करती है कि दंडनीय अपराधों को संज्ञेय अपराध के रूप में प्रतीत किया जाता है जिसके लिए पुलिस अधिकारी बिना वारंट गिरफ्तार कर सकता है – संज्ञेय अपराध के मामले में बिना वारंट गिरफ्तार करने के प्राधिकार और मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना अन्वेषण करने की शक्ति के मध्य दृश्यमान भिन्नता होती है ।

कन्हैया रामचंद थावरानी बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 216

– धारा 23, 25 और 26 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2(ग) और अध्याय 15, 16] – धारणा उपबंध द्वारा धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध की संज्ञेयता – प्रतिभूति अधिनियम 23 के अधीन दंडनीय अपराध के कारण की शिकायत केवल केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड, मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज या किसी व्यक्ति जो धारा 26 के अधीन उल्लिखित प्राधिकारियों की कोटि के अंतर्गत आता है, द्वारा फाइल की जा सकती है ।

कन्हैया रामचंद थावरानी बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 216

– धारा 23, 25 और 26 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2(ग) और अध्याय 15, 16] – धारणा उपबंध द्वारा धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध की संज्ञेयता – प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 द्वारा अनुध्यात प्राधिकारी या किसी व्यक्ति द्वारा शिकायत का फाइल किया जाना अनिवार्य शर्त के रूप में विधि को गति प्रदान करता है ।

कन्हैया रामचंद थावरानी बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 216

पृष्ठ संख्या

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 21, 22(5) [सपठित तमिलनाडु मद्य तस्करों, साइबर कानून अपराधियों, ओषधि अपराधियों, वन अपराधियों, गुंडागर्दी, अनैतिक व्यापार अपराधियों, रेत अपराधियों, लैंगिक अपराधियों, झुग्गी झोपड़ी के कब्जे से संबंधित अपराधियों और अवैध रूप से वीडियो बनाने वाले अपराधियों के खतरनाक क्रियाकलाप अधिनियम, 1982 (1982 का 14) की धारा 3(1)] – प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण, किन्तु कतिपय दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध की कार्यवाही को संरक्षण – सरकार पर संवैधानिक बाध्यता होती है कि बंदी के प्रत्यावेदन पर बिना किसी विलंब के विचार करे – यद्यपि अनुच्छेद 22 में ऐसे किसी प्रत्यावेदन पर विनिश्चय किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई अवधि विहित नहीं की गई है, किन्तु इस अनुच्छेद के खंड (5) में स्पष्टतः उपबंध है कि बंदी के प्रत्यावेदन पर अविलंब विचार किया जाना चाहिए और उसका निस्तारण यथाशीघ्र किया जाना चाहिए ।

टी. कोट्टाइसामी बनाम **पुलिस आयुक्त, चेन्नई और एक अन्य** 267

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 112 – विवाहित स्थिति के दौरान बच्चे का जन्म – यदि बच्चे का जन्म उसकी माता और किसी पुरुष के मध्य विधिमान्य विवाह के कायम रहने के दौरान हुआ तो जब तक कि यह दर्शित न किया जा सके कि विवाह के पक्षकारों की परस्पर पहुंच ऐसे किसी समय नहीं थी जब उसका गर्भाधान किया जा सकता था, यह इस बात का निश्चायक सबूत होगा कि वह उसी पुरुष का धर्मज पुत्र है ।

प्रकाश बनाम **कर्पागम और एक अन्य** 253

अनिल कुमार सिंह

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 10 जून, 2016

न्यायमूर्ति रंजन रॉय

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43) – धारा 12, 20 और 23 – मजिस्ट्रेट के समक्ष अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन – यदि अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन केवल पत्नी द्वारा फाइल किया जाता है, तो अवयस्क बच्चे भी भरणपोषण के हकदार होंगे – भरणपोषण अंतिम और साथ ही अंतरिम रूप में प्रदान किया जा सकता है ।

आवेदक द्वारा आरंभिक रूप से पुनरीक्षण फाइल किया गया था जिसको न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन में परिवर्तित कर दिया गया था । आवेदक (पति) ने रायबरेली के विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा 2005 के घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम की धारा 29 के अधीन पारित तारीख 15 जून, 2015 के अपीली आदेश और रायबरेली के विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम की धारा 23 सपठित धारा 20 के अधीन पारित तारीख 19 फरवरी, 2015 के मूल आदेश, जिसके द्वारा अंतरिम भरणपोषण प्रदान किया गया था, को चुनौती दी है । आवेदक के विद्वान् काउंसेल की दलील यह थी कि अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन, जो अधिनियम की धारा 20(4) के अधीन फाइल किया गया, पोषणीय नहीं था चूंकि उक्त अधिनियम के उपबंधों के अधीन अंतरिम भरणपोषण प्रदान किए जाने के लिए कोई उपबंध नहीं है । उन्होंने आगे दलील दी थी कि धारा 12 के अधीन परिवाद के माध्यम से केवल पत्नी ही परिवादी हो सकती थी न कि बच्चे, इसलिए बच्चों के लिए अंतरिम भरणपोषण के रूप में किसी अनुतोष का दावा नहीं किया जा सकता था । उन्होंने दलील दी कि दोनों बच्चे वयस्क थे, जैसाकि अंतरिम भरणपोषण के लिए फाइल किए गए आवेदन

में भी उल्लिखित है, अतः वे अंतरिम भरणपोषण के हकदार नहीं थे और यदि यह धारणा कर भी ली जाए कि उनको अंतरिम भरणपोषण मिल सकता था, तो यह केवल व्यथित व्यक्ति या उसके बच्चे को प्रदान किया जा सकता था । निचले न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी द्वारा बताए गए तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए, बच्चों को अंतरिम भरणपोषण प्रदान किए जाने के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता था । मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए, जैसाकि प्रत्यर्थी द्वारा यह प्रकथन किया गया, ऐसा इस आधार पर भी किया जा सकता था कि वे अवयस्क हैं, तो इस प्रकार के दावे पर व्यथित व्यक्ति के रूप में विचार किया जा सकता था, जैसा इस मामले में अंतर्वलित नहीं है । आवेदन को भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – आवेदक की दलील कि धारा 12 के अधीन मूल आवेदन केवल पत्नी द्वारा फाइल किया गया था, इसलिए बच्चों द्वारा अंतरिम भरणपोषण का दावा नहीं किया जा सकता था, अधिनियम की योजना और उसमें समाविष्ट उपबंधों के विरुद्ध है । इसी प्रकार यह दलील दिया जाना कि अंतरिम भरणपोषण प्रदान किए जाने का कोई उपबंध नहीं है, भी भ्रांतिपूर्ण है चूंकि यदि धारा 20(4) के अधीन ऐसा कोई न हो, जिसको प्रकटतः आवेदन में त्रुटिवश उल्लिखित किया जाना प्रतीत होता है, तो भी धारा 23 सपठित धारा 20 के अधीन निश्चित रूप से एक उपबंध है । विधायी आशय अत्यंत स्पष्ट है कि भरणपोषण अंतिम अनुतोष और साथ ही अंतरिम अनुतोष के रूप में प्रदान किया जा सकता है । इसका उद्देश्य भी अत्यंत स्पष्ट है जिस पर जोर दिया जाना बिल्कुल भी अपेक्षित नहीं है । जहां तक आवेदक द्वारा उठाए गए अन्य बिंदु का संबंध है कि बच्चे वयस्क थे, निश्चित रूप से वे आवेदक के समतुल्य थे और अंतरिम भरणपोषण के आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत किए गए शपथपत्र में दोनों बच्चों की आयु अलग-अलग 18 और 20 वर्ष उल्लिखित की गई है । बच्चों की आयु के संबंध में यह अभिवाक् संबद्ध न्यायालय के समक्ष अंतिम न्यायनिर्णय के समय अंतिम रूप से विनिर्धारित किया जाएगा किंतु इस प्रक्रम पर फाइल किए गए अंतरण प्रमाणपत्र/अंक पत्रों को दृष्टि में रखते हुए, जो प्रथमदृष्ट्या संकेत करते हैं कि दोनों में से एक बच्चा अर्थात् कुमारी अस्मिता सिंह की आयु 18 वर्ष से अधिक थी जबकि दूसरे बच्चे की आयु 18 वर्ष से कम, आवेदक का अभिवाक् भागतः स्वीकार किया जाता है । (पैरा 13 और 14)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2016 का दांडिक आवेदन सं. 4162.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री धीरेन्द्र प्रताप सिंह

सरकार की ओर से शासकीय अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री राजेश बहादुर सिंह, राठ

न्यायमूर्ति रंजन रॉय – मामले को सुना गया ।

2. 2015 की दांडिक पुनरीक्षण सं. 419 को इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 जून, 2016 को पारित आदेश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन आवेदन में परिवर्तित कर दिया गया है ।

3. इसमें का आवेदक, जो पति है, ने रायबरेली के विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश (न्यायालय सं. 5) द्वारा 2005 के घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 29 के अधीन पारित तारीख 15 जून, 2015 के अपीली आदेश और रायबरेली के विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम की धारा 23 सपठित धारा 20 के अधीन पारित तारीख 19 फरवरी, 2015 के मूल आदेश, जिसके द्वारा अंतरिम भरणपोषण प्रदान किया गया, को चुनौती दी है ।

4. आवेदक के विद्वान् काउंसेल की दलील यह है कि अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन, जो अधिनियम की धारा 20(4) के अधीन फाइल किया गया तात्पर्यित है, पोषणीय नहीं था चूंकि उक्त अधिनियम के उपबंधों के अधीन अंतरिम भरणपोषण प्रदान किए जाने के लिए कोई उपबंध नहीं है । उन्होंने आगे दलील दी कि धारा 12 के अधीन परिवाद के माध्यम से केवल पत्नी ही परिवादी थी न कि बच्चे, इसलिए बच्चों के लिए अंतरिम भरणपोषण के रूप में किसी अनुतोष का दावा नहीं किया जा सकता था । उन्होंने आगे दलील दी कि दोनों बच्चे वयस्क थे, जैसाकि परिवाद रजिस्टर से साबित होता है और जैसाकि अंतरिम भरणपोषण के लिए फाइल किए गए आवेदन में भी उल्लिखित है, अतः वे अंतरिम भरणपोषण के हकदार नहीं थे और यदि यह धारणा कर भी ली जाए कि अंतरिम भरणपोषण मिल सकता था, तो यह केवल व्यथित व्यक्ति या उसके बच्चे को प्रदान किया जा सकता था । बच्चे को अधिनियम की धारा 2(ख) में "बालक" के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके अंतर्गत "बालक" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो 18 वर्ष से कम आयु का है और जिसके अंतर्गत कोई दत्तक, सौतेला या पोषित बालक है । निचले

न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी द्वारा बताए गए तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए बच्चों को अंतरिम भरणपोषण प्रदान किए जाने का कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता था । यदि मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए, जैसाकि प्रत्यर्थी द्वारा प्रकथन किया गया, इस आधार पर विचार किया जा भी सकता था कि वे अवयस्क हैं, तो भी ऐसे दावे पर व्यथित व्यक्ति के माध्यम से विचार किया जा सकता था, जैसा इस मामले में नहीं किया गया है ।

5. आवेदक ने प्रदान की गई भरणपोषण की राशि पर तहसीलदार के प्रमाणपत्र को सम्मिलित करते हुए विभिन्न दस्तावेजों का अवलंब लिया जिसमें 1,916/- रुपए प्रतिमाह की मासिक आय दर्शित की गई है । 2005 के सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन उसको प्रदान की गई सूचना । आवेदन के संलग्नक 6 में समाविष्ट है जिसमें उल्लेख है कि इस क्षेत्र में आवेदक के स्वामित्व के अधीन कोई संपत्ति नहीं है और न ही कोई दुकान है और दुकान वास्तव में उसकी माता के नाम थी । आगे यह दलील दी गई कि प्रत्यर्थी-पत्नी वास्तव में एक ब्यूटीपार्लर चला रही थी । इस संदर्भ में न्यायालय को सूचित किया गया कि भवन, जिसमें उक्त ब्यूटीपार्लर चलाया जा रहा था, की गृह स्वामिनी का शपथपत्र निचले न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया था किंतु उस पर विचार नहीं किया गया । न्यायालय का ध्यान ब्यूटीपार्लर, जिसको अभिकथित रूप से प्रत्यर्थी द्वारा चलाया जा रहा था, के संबंध में रायबरेली की जिला पंचायत द्वारा जारी लाइसेंस फीस की एक अभिकथित रसीद की ओर आकर्षित किया गया, जिसकी छायाप्रति संलग्नक 1 के रूप में संलग्न है ।

6. आगे दलील दी गई कि अपीली न्यायालय को संरक्षण अधिकारी की रिपोर्ट द्वारा मार्ग-दर्शन प्रदान किया गया था और इस रिपोर्ट का खंडन आवेदक द्वारा नहीं किया गया था । यह दलील भी दी गई कि उसके भाई द्वारा पहले एक ईंट-भट्टा चलाया जा रहा था किंतु इस तथ्य पर विचारोपरांत कि प्रत्यर्थी द्वारा उसके भाई के साथ उस ईंट-भट्टे, जो स्वत्वधारी समुत्थान था, को हड़पने के लिए प्रयास किया गया था, उस ईंट-भट्टे को बंद कर दिया गया था और अब वह कार्यशील नहीं रह गया था । उसने न्यायालय का ध्यान व्यापार कर विभाग से संबंधित कुछ दस्तावेजों की ओर यह दर्शित करने के प्रयोजनार्थ आकर्षित किया कि प्रत्यर्थी द्वारा अपने भाई के साथ उक्त ईंट-भट्टे को हड़पने का प्रयास किया गया था, किंतु इन दस्तावेजों को अस्वीकार कर दिया गया और उनके आवेदन को निरस्त कर दिया गया ।

7. इसके विपरीत प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि आवेदक ने संरक्षण अधिकारी के समक्ष स्वयं अभिकथित किया था कि वह अपने भाई के साथ एक ईंट-भट्टा चला रहा था । जहां तक बच्चे की आयु का संबंध है, प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने स्वीकार किया कि सभी बच्चों में से एक बच्चा जिसका नाम कुमारी अस्मिता सिंह था, 18 वर्ष की थी जब आक्षेपित आदेश पारित किया गया था । बच्चों के अंक-पत्र संलग्न किए गए थे जो प्रथमदृष्ट्या उपदर्शित करते हैं कि एक अन्य बच्चा जिसका नाम कुमारी अनुपमा सिंह था, सुसंगत समय बिंदु पर 18 वर्ष से कम आयु की थी । उन्होंने दलील दी कि आवेदक द्वारा पत्नी के साथ दुर्व्यवहार किया गया था जिसके कारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन शिकायत पर कार्यवाही आरंभ की गई थी जिसमें अधिनियम की धारा 23 सपठित धारा 20 को दृष्टि में रखते हुए, अंतरिम भरणपोषण के लिए आवेदन फाइल किया गया था । आवेदन में मात्र किसी एक गलत उपबंध का उल्लेख किए जाने के कारण प्रत्यर्थियों को दावाकृत अनुतोष से वंचित नहीं किया जा सकता । अधिनियम के अधीन केवल पत्नी ही व्यथित व्यक्ति होती है, इसलिए शिकायत पत्नी द्वारा फाइल की गई थी । उन्होंने दलील दी कि बच्चे अलग-अलग एम. ए. और बी. ए. में पढ़ रहे थे जिसके लिए खर्चों की आवश्यकता थी और पति का कर्तव्य था कि वह प्रत्यर्थी-पत्नी के भरणपोषण के लिए प्रबंध करने के अतिरिक्त उन खर्चों का भी प्रबंध करता । भरणपोषण के लिए प्रदान की गई रकम युक्तिसंगत थी और पत्नी और बच्चों के जीवन-यापन के लिए आवश्यक थी ।

8. आज प्रत्यर्थी व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न हुई जिसकी पहचान उसके काउंसेल द्वारा की गई और काउंसेल ने अभिकथित किया कि पहले, जब वह अपने सास-श्वसुर के साथ रहती थी तो एक ब्यूटीपार्लर चलाती थी, किंतु वर्तमान में वह ऐसा कोई ब्यूटीपार्लर नहीं चला रही ।

9. इस अधिनियम को महिलाओं, जो परिवार के भीतर घटित होने वाली प्रत्येक प्रकार की हिंसा की आहत होती है और उनसे सहबद्ध और अनुषांगिक मामलों के संबंध में संविधान के अंतर्गत प्रत्याभूत अधिकारों के प्रभावी रूप से संरक्षण के लिए अधिनियमित किया गया था । अधिनियम की धारा 12 के अधीन कोई व्यथित व्यक्ति या संरक्षण अधिकारी या व्यथित व्यक्ति की ओर से कोई अन्य व्यक्ति इस अधिनियम के अधीन एक या अधिक अनुतोष प्राप्त करने के लिए मजिस्ट्रेट को आवेदन प्रस्तुत कर सकेगा । पद "व्यथित" को धारा 2(क) में इस अर्थ में परिभाषित किया गया है कि "व्यथित" व्यक्ति से कोई ऐसी महिला अभिप्रेत है जो प्रत्यर्थी

की घरेलू नातेदारी में है या रही है और जिसका अभिकथन है कि वह प्रत्यर्थी द्वारा किसी घरेलू हिंसा की शिकार रही है ।

10. अतः धारा 12 सपठित धारा 2(क) में समाविष्ट उपबंधों के अनुसार मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया गया कोई आवेदन जिसके अंतर्गत अधिनियम के अधीन एक या एक से अधिक अनुतोषों की ईप्सा की गई है, केवल किसी व्यथित व्यक्ति, जो धारा 2(क) के अधीन परिभाषित एक महिला या संरक्षण अधिकारी या व्यथित व्यक्ति की ओर से कोई अन्य व्यक्ति है, द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है । घरेलू नातेदारी को धारा 2(च) में परिभाषित किया गया है जिसमें न केवल पति और पत्नी की नातेदारी सम्मिलित है बल्कि अंगीकरण या संयुक्त परिवार के रूप में एक साथ रहने वाले परिवार के सदस्यों की प्रकृति में अन्य नातेदारियां भी सम्मिलित हैं, किंतु धारा 2(क) के अधीन शब्द व्यथित महिला को परिभाषित करते हुए शब्द "महिला" में अवयस्क बच्चे अर्थात् वे बच्चे जो 18 वर्ष से कम आयु के हैं, सम्मिलित नहीं होंगे, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि इन बच्चों द्वारा किसी अनुतोष की ईप्सा नहीं की जा सकती जैसाकि अधिनियम के अन्य उपबंधों से सुव्यक्त है, विशेष रूप से धारा 20(1) जो धनीय अनुतोषों पर विचार करती है और उपबंधित करती है कि मजिस्ट्रेट धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन किसी आवेदन का निस्तारण करते समय प्रत्यर्थी को घरेलू हिंसा के परिणामस्वरूप व्यथित व्यक्ति या व्यथित व्यक्ति के किसी बच्चे द्वारा उपगत खर्चों और सहन की गई हानियों के खर्चों को वहन करने के लिए धनीय अनुतोष का संदाय करने के लिए निदेशित कर सकता है और ऐसे अनुतोष में निम्नलिखित बातें सम्मिलित होंगी किंतु ऐसा अनुतोष निम्नलिखित बातों तक सीमित नहीं होगा – (क) अर्जित आय की हानि ; (ख) चिकित्सीय खर्चे ; (ग) व्यथित व्यक्ति के नियंत्रण से किसी संपत्ति के नष्ट किए जाने, नुकसान पहुंचाए जाने या हटाए जाने के कारण कारित हानि ; और (घ) 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन भरणपोषण के आदेश के अतिरिक्त व्यथित व्यक्ति और साथ ही उसके बच्चों, यदि कोई हों, के लिए भरणपोषण ।

11. धारा 20 की उपधारा (2) उपबंधित करती है कि इस धारा के अधीन अनुदत्त धनीय अनुतोष पर्याप्त, उचित और युक्तिसंगत होगा और उस जीवन-स्तर से, जिसका व्यथित व्यक्ति अभ्यस्त है, संगत होगा ।

12. धारा 23 अंतरिम और एकपक्षीय आदेश प्रदान किए जाने की शक्ति से संबंधित है और इस धारा की उपधारा (1) उपबंधित करती है कि कोई व्यथित व्यक्ति या संरक्षण अधिकारी या व्यथित व्यक्ति की ओर से

कोई अन्य व्यक्ति इस अधिनियम के अधीन एक या अधिक अनुतोष प्राप्त करने के लिए मजिस्ट्रेट को आवेदन प्रस्तुत कर सकेगा । यह शब्द व्यापक विस्तार के हैं और इसलिए अंतरिम भरणपोषण प्रदान करने की शक्ति इनमें सम्मिलित होगी, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि ऐसा इस प्रकार का भरणपोषण धारा 20(1)(घ) के अधीन न केवल व्यथित व्यक्ति को प्रदान किया जा सकता है बल्कि बच्चों को भी । इसलिए प्रकटतः 18 वर्ष से कम आयु के बच्चों को व्यथित व्यक्ति के माध्यम से, जो नाते में उनकी माता हो या पिता हो, दावा करना होता है चूंकि धारा 12 सपठित धारा 2(क) को दृष्टि में रखते हुए वे शिकायतकर्ता नहीं हो सकते । इस संबंध में अत्यधिक तकनीकी दृष्टिकोण अपनाया जाना अपेक्षित नहीं है । उपधारा (2) धारा 18, 19, 20, 21 और 22 के अधीन उनमें उल्लिखित शर्तों के अध्यधीन रहते हुए, एकपक्षीय आदेश पारित किए जाने से संबंधित है ।

13. उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए आवेदक की दलील कि धारा 12 के अधीन मूल आवेदन केवल पत्नी द्वारा फाइल किया गया था, इसलिए बच्चों द्वारा अंतरिम भरणपोषण का दावा नहीं किया जा सकता था, अधिनियम की योजना और उसमें समाविष्ट उपबंधों के विरुद्ध है । इसी प्रकार यह दलील दिया जाना कि अंतरिम भरणपोषण प्रदान किए जाने का कोई उपबंध नहीं है, भी भ्रांतिपूर्ण है चूंकि यदि धारा 20(4) के अधीन ऐसा कोई न हो, जिसको प्रकटतः आवेदन में त्रुटिवश उल्लिखित किया जाना प्रतीत होता है, तो भी धारा 23 सपठित धारा 20 के अधीन निश्चित रूप से एक उपबंध है । विधायी आशय अत्यंत स्पष्ट है कि भरणपोषण अंतिम अनुतोष और साथ ही अंतरिम अनुतोष के रूप में प्रदान किया जा सकता है । इसका उद्देश्य भी अत्यंत स्पष्ट है जिस पर जोर दिया जाना बिल्कुल भी अपेक्षित नहीं है ।

14. जहां तक आवेदक द्वारा उठाए गए अन्य बिंदु का संबंध है कि बच्चे वयस्क थे, निश्चित रूप से वे आवेदक के समतुल्य थे और अंतरिम भरणपोषण के आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत किए गए शपथपत्र में दोनों बच्चों की आयु अलग-अलग 18 और 20 वर्ष उल्लिखित की गई है । बच्चों की आयु के संबंध में यह अभिवाक् संबद्ध न्यायालय के समक्ष अंतिम न्यायनिर्णय के समय अंतिम रूप से विनिर्धारित किया जाएगा किंतु इस प्रक्रम पर फाइल किए गए अंतरण प्रमाणपत्र/अंक पत्रों को दृष्टि में रखते हुए, जो प्रथमदृष्ट्या संकेत करते हैं कि दोनों में से एक बच्चा अर्थात् कुमारी अस्मिता सिंह की आयु 18 वर्ष से अधिक थी जबकि दूसरे बच्चे की आयु 18

वर्ष से कम, आवेदक का अभिवाक् भागतः स्वीकार किया जाता है ।

15. जहां तक कुमारी अस्मिता सिंह को भरणपोषण प्रदान किए जाने का संबंध है, उसकी आयु 18 वर्ष से अधिक होने के कारण निचले न्यायालय द्वारा 2005 के अधिनियम के अधीन भरणपोषण प्रदान नहीं किया जा सकता था । तथापि, यह परिवाद के अंतिम न्यायनिर्णय के अध्यधीन होगा जो अभी भी लंबित है ।

16. यह मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(ग) के अधीन भरणपोषण प्रदान किए जाने का मामला नहीं है ।

17. अब जहां तक भरणपोषण प्रदान किए जाने की मात्रा का संबंध है और यह अभिवाक् कि याची की आय मात्र 1,916/- रुपए प्रतिमाह है, निचले न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों के परिशीलन से यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि पत्नी और बच्चों को संरक्षण अधिकारी द्वारा की गई जांच और उसके समक्ष किए गए अभिवाकों के आधार पर भरणपोषण प्रदान किया गया है । जैसाकि संरक्षण अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया है, सुसंगत प्रक्रम पर आवेदक द्वारा यह अभिकथित किया गया था कि वह अपने भाई के साथ पहले एक ईंट-भट्टा चलाता था ।

18. जहां तक संबद्ध तहसीलदार के प्रमाणपत्र पर आधारित आवेदक की दलील का संबंध है, उसके साक्ष्यिक मूल्य पर विचार अंतिम न्यायनिर्णय के समय किया जाएगा चूंकि यह अधिक से अधिक अन्य साक्षियों के विरुद्ध साक्ष्य का मात्र एक टुकड़ा है । सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन आवेदक को उपलब्ध कराई गई सूचना का साक्ष्यिक मूल्य भी अंतिम न्यायनिर्णयन के समय विनिर्धारित किया जाएगा किंतु यह न्यायालय इस प्रक्रम पर इस दस्तावेज के आधार पर इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि निचले न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष, जहां तक आवेदक की आय और उसके द्वारा उसकी पत्नी और अवयस्क बच्चों का भरणपोषण करने के उसके दायित्व का संबंध है, यह आदेश अनौचित्य और विधि की त्रुटि से ग्रसित है । अंतरिम भरणपोषण के लिए फाइल किए गए आवेदन के समर्थन में आवेदक के शपथपत्र के पैरा 4 में यह अभिकथित किया गया है कि पुनरीक्षणकर्ता अर्थात् सुनील सिंह के भाई ने एक ईंट-भट्टा आरंभ किया था जो कतिपय कारणोंवश वर्ष 2002 में बंद हो गया था और इसको पुनः आरंभ किया गया था । संरक्षण अधिकारी के समक्ष यह अभिलिखित किया गया है कि वह अपने भाई के साथ एक ईंट-भट्टा चला रहा था । यह अत्यधिक स्पष्ट नहीं है कि क्या माता, जिसको बीस दुकानों का स्वामी

कहा गया है, आवेदक के साथ निवास करती है या पृथक् रूप से । आवेदक ने दावा किया है कि भाई पृथक् रूप से निवास कर रहा है । इन अभिवाकों, जिनको पत्नी और बच्चों को भरणपोषण के संदाय से बचने के लिए उठाया गया है, की संभाव्यता से इस प्रक्रम पर इनकार नहीं किया जा सकता ।

19. जहां तक इस अभिवाक् का संबंध है कि प्रत्यर्थी ब्यूटीपार्लर चला रही थी, यद्यपि आवेदक ने अभिकथित भवन स्वामिनी का शपथपत्र फाइल किया था, किंतु वह भवन स्वामिनी न्यायालय के समक्ष कभी भी उपस्थित नहीं हुई इसलिए न्यायालय ने उक्त शपथपत्र का अवलंब न लेकर कोई त्रुटि कारित नहीं की । इसके अतिरिक्त जहां तक प्रत्युत्तर शपथपत्र के साथ संलग्नक आर.ए.-1 में समाविष्ट अभिकथित रसीद का संबंध है, यह रसीद संबद्ध न्यायालयों के समक्ष उपलब्ध नहीं थी और इन कार्यवाहियों में इस न्यायालय से यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि अंतरिम भरणपोषण के विनिर्धारण के प्रयोजनार्थ किसी नए साक्ष्य पर विचार किया जाए । इस विवाद्यक को अंतिम रूप से सहबद्ध न्यायालय द्वारा निपटाया जा सकता है किंतु अभी आक्षेपित आदेश में इस आधार पर कोई त्रुटि नहीं पाई जा सकती ।

20. आवेदक द्वारा अंतरिम भरणपोषण आवेदन के साथ फाइल की गई आक्षेप की प्रति, यद्यपि यह आक्षेप निचले न्यायालय के अभिलेख के साथ संलग्न नहीं पाया गया, इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई । इसमें संरक्षण अधिकारी की रिपोर्ट के बाबत उसके द्वारा किया गया कोई खंडन समाविष्ट नहीं है इसलिए निचले न्यायालय द्वारा पारित आदेश में इस आधार पर भी कोई त्रुटि नहीं पाई जाती ।

21. यह न्यायालय आक्षेपित आदेशों के परिशीलन से इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचता कि क्षेत्राधिकार या विधिक त्रुटि कारित की गई जिससे कि धारा 482 के अधीन इस न्यायालय के अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए मध्यक्षेप किया जा सके, किंतु मात्र इस सीमा तक मध्यक्षेप किया जाता है कि निचले न्यायालयों ने वयस्क बच्चे अस्मिता सिंह को भरणपोषण प्रदान करके त्रुटि कारित की, इसलिए आक्षेपित आदेश को मात्र इस सीमा तक अपास्त किया जाता है । आक्षेपित आदेश का शेष भाग, जहां तक वह पत्नी और दूसरे बच्चे अनुपमा सिंह को प्रदत्त भरणपोषण की रकम से संबंधित है, को इस शर्त के अध्यधीन रहते हुए, बनाए रखा जाता है कि अनुपमा सिंह इस भरणपोषण की हकदार अधिनियम के अधीन केवल 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक रहेगी ।

22. इससे संबद्ध न्यायालय द्वारा शिकायत में अंतर्वलित सभी सुसंगत विवाद्यकों के न्यायनिर्णयन पर अंततः प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा । आवेदन भागतः मंजूर किया जाता है ।

आवेदन भागतः मंजूर किया जाता है ।

शु.

(2017) 1 दा. नि. प. 170 **उड़ीसा**

तबाती बेह डेली (श्रीमती)

बनाम

ओडिशा राज्य और अन्य

तारीख 6 जनवरी, 2017

न्यायमूर्ति एस. के. साहू

अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (1989 का 33) – धारा 3(1)(x)(xi) [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 341, 323, 354, 294 और 34] – सार्वजनिक स्थान पर अनुसूचित जाति के सदस्य का अपमान किए जाने के प्रयोजनार्थ अपशब्दों का प्रयोग किया जाना, बल प्रयोग किया जाना और डराया-धमकाया जाना – अन्वेषण अधिकारी के समक्ष आहत और साक्षियों के कथनों की पुष्टि का होना – दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर यह साबित होना कि आहत अनुसूचित जनजाति की सदस्य है और अभियुक्त किसी अन्य धर्म के – अतः अभियुक्तों को उन्मोचित किया जाना उचित नहीं था ।

यह पुनरीक्षण याचिका याची, जो अनुसूचित जनजाति की सदस्य है, द्वारा 2015 के सेशन विचारण संख्या 70, जो 2014 के सेरेगो पुलिस थाना में रजिस्ट्रीकृत मामला संख्या 16 से उद्भूत हुआ, में विपक्षी संख्या 2 निमबरोडा लीमा और विपक्षी संख्या 3 विश्वोजीत लीमा को भारतीय दंड संहिता की धारा 354 और अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन दंडनीय

अपराधों से उन्मोचित करते हुए और भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 323, 354 और 294 सपठित धारा 34 के अधीन विचारण का सामना करने के लिए निर्देशित करते हुए पराला खेमुडी, गजपति के विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 19 जनवरी, 2016 को पारित आक्षेपित आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की गई है । पुनरीक्षण याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के परिशीलन पर यह प्रकट हो जाता है कि किसी सार्वजनिक स्थान जैसे कि ब्लाक कार्यालय में विपक्षी सं. 2 और 3 ने जानबूझकर याची का अपमान किया और उसको अनुसूचित जनजाति की सदस्य होने के कारण नीचा दिखाने के आशय के साथ डराया-धमकाया और यह उपदर्शित किए जाने के लिए भी प्रथमदृष्ट्या सामग्री अभिलेख पर उपलब्ध है कि उन्होंने इत्तिलाकर्ता को अपमानित करने के आशय से बल का प्रयोग भी किया और उसकी लज्जा भंग की । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किए गए वृत्तांत की पुष्टि इत्तिलाकर्ता के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित कथन से हो जाती है और साथ ही रघुनाथ बेहरदाली जो याची का पति है और साथ ही नागेन्द्र पाईका के कथनों से भी होती है । ये दस्तावेजी साक्ष्य से भी स्पष्ट है जो अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण के दौरान नुआगाडा के तहसीलदार से यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ एकत्रित किए गए थे कि याची अनुसूचित जनजाति की सदस्य है और विपक्षी सं. 2 और 3 ईसाई धर्म में उनके धर्म परिवर्तन के बाद "एस. ई. बी. सी." कोटि के अन्तर्गत आते हैं । इस सामग्री को ध्यान में रखते हुए मेरा मत है कि विपक्षी सं. 2 और 3 के विरुद्ध अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) और साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन अपराध के करण के पर्याप्त आधार मौजूद हैं और इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय विपक्षी सं. 2 और 3 को इन अपराधों से उन्मोचित करने में न्यायानुमत नहीं था । उन्मोचन के आदेश में समनुदेशित कारण अभिलेख की त्रुटि पर आधारित हैं और इसलिए वे विधि की दृष्टि में मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं हैं । तद्नुसार, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं । 2014 के जी. आर. मामला सं. 32 में उदयगिरी के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (आर) के समक्ष लम्बित मामला पराला खेमुडी, गजपति के विद्वान् सेशन और विशेष न्यायाधीश को वापस भेजा जाए । विद्वान् विचारण न्यायालय और साथ ही भारतीय दंड संहिता की

धारा 341/323/354/294/34 सपठित अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विपक्षी सं. 2 और 3 के विरुद्ध विधि अनुसार आरोप विरचित करेगा । (पैरा 5 और 6)

पुनरीक्षण (दांडिक) अधिकारिता : 2016 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 307.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397 और 401 के अधीन पुनरीक्षण याचिका ।

याचियों की ओर से श्रीमती सुजाता जेना और श्री जी. वी. जेना

प्रत्यर्थी की ओर से श्री दीपक कुमार, अपर स्थायी काउंसेल

न्यायमूर्ति एस. के. साहू – यह पुनरीक्षण याचिका श्रीमती तबाती बेह डेली, जो अनुसूचित जनजाति की सदस्य है, द्वारा 2015 के सेशन विचारण संख्या 70, जो 2014 के सेरेगो पुलिस थाना में रजिस्ट्रीकृत मामला संख्या 16 से उद्भूत हुआ, में विपक्षी संख्या 2 निम्नबरोडा लीमा और विपक्षी संख्या 3 विश्वोजीत लीमा को भारतीय दंड संहिता की धारा 354 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन दंडनीय अपराधों से उन्मोचित करते हुए और भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 323, 294 सपठित धारा 34 के अधीन विचारण का सामना करने के लिए निर्देशित करते हुए परालाखेमुडी, गजपति के विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 19 जनवरी, 2016 को पारित आक्षेपित आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की गई है ।

2. याची द्वारा तारीख 19 मार्च, 2016 को सेरेगो पुलिस थाना के भारसाधक निरीक्षक के समक्ष दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के अनुसार अभियोजन का पक्षकथन यह है कि इत्तिलाकर्ता तबराडा ग्राम पंचायत का सरपंच था और वह तारीख 3 मार्च, 2014 को इन्दिरा आवास गृहों को लाभार्थियों को उपलब्ध कराए जाने के प्रयोजनार्थ नूआगाडा स्थित ब्लाक कार्यालय आई थी । उस समय विपक्षी संख्या 2 निमबरोडा लीमा ब्लाक कार्यालय में उपस्थित था और उसने इत्तिलाकर्ता को "आदिवासी, सोरीनी, साला छिआ, केटेपाठा, पाधीछू ? तू काना मो थू, बाली जीबूकी ?"

इत्यादि गालियां दी थीं । तत्पश्चात्, विपक्षी सं. 2 ने इत्तिलाकर्ता की साड़ी खींची और भद्दी भाषा में गालियां दीं और गंभीर परिणामों की चेतावनी दी । उसी समय विपक्षी सं. 3 विश्वोजीत लीमा, जो विपक्षी सं. 2 का पुत्र है, वहां पर आया और उसने भी इत्तिलाकर्ता के हाथ पकड़ लिए और उसको घसीटा जिसके परिणामस्वरूप इत्तिलाकर्ता की चूड़ियां टूट गईं । यह घटना सार्वजनिक स्थान पर घटित हुई थी जिसको उस समय ब्लाक कार्यालय में उपस्थित अनेक व्यक्तियों द्वारा देखा गया था ।

3. सेरेगो पुलिस थाना में घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत होने पर 2014 का पुलिस थाना मामला संख्या 16 भारतीय दंड संहिता की धारा 341/323/354/294/34 और अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन रजिस्ट्रीकृत किया गया । अन्वेषण के दौरान परालाखेमुडी के उप-खंड पुलिस अधिकारी बी. जी. मोहन्ती ने इत्तिलाकर्ता और अन्य साक्षियों का परीक्षण किया और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उनके कथन अभिलिखित किए । उसने घटनास्थल का दौरा किया और इत्तिलाकर्ता को चिकित्सीय परीक्षण के लिए गुमा स्थित नागरिक स्वास्थ्य केन्द्र भेज दिया और अन्वेषण की समाप्ति पर भारतीय दंड संहिता की धारा 341/323/354/294/34 और अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन आरोप पत्र प्रस्तुत कर दिया । यह उल्लेख किया जाना महत्वपूर्ण है कि अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण के दौरान नूआगाडा के तहसीलदार से इत्तिलाकर्ता और साथ ही विपक्षी सं. 2 और 3 की जाति और धर्म के संबंध में सूचना एकत्रित की और नूआगाडा के तहसीलदार की तारीख 18 जून, 2014 की रिपोर्ट से उपदर्शित होता है कि इत्तिलाकर्ता-याची "सोरा" जाति की थी और वह हिन्दू थी और अनुसूचित जनजाति कोटि से संबंधित थी जबकि विपक्षी सं. 2 और 3 "पानो" जाति के थे और ईसाई थे और उनकी कोटि "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग" की थी । आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किए जाने के पश्चात् विपक्षी सं. 2 और 3 ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अधीन उन्मोचित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचारोपरान्त अभिनिर्धारित किया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा

161 के अधीन साक्षियों के कथन और अन्य सहबद्ध कागजातों के आधार पर अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं बनता । इसलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन भी कोई मामला नहीं बनता । इसके अतिरिक्त, विद्वान् विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि विपक्षी सं. 2 और 3 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 341/323/354/294/34 के अधीन अपराधों के करण के लिए सामग्री उपलब्ध है और तद्नुसार, मामले को उदयगिरी के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (आर) के न्यायालय को विचारण के लिए अन्तरित कर दिया ।

4. याची के विद्वान् काउंसेल श्रीमती सुजाता जेना ने उन्मोचन के आदेश को चुनौती देते हुए दलील दी कि आक्षेपित आदेश विवेक के अनुपयोजन से ग्रसित है और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति कि विपक्षी सं. 2 और 3 के विरुद्ध अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) और साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन अपराध गठित करने के प्रयोजनार्थ प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित साक्षियों के कथन के आधार पर अभिलेख पर कोई प्रथमदृष्ट्या सामग्री उपलब्ध नहीं थी । उन्होंने आगे दलील दी कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री विश्वसनीय नहीं है और यह तथ्य की नूआगाडा के तहसीलदार ने यह उल्लेख करते हुए जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की है कि इत्तिलाकर्ता अनुसूचित जनजाति की कोटि से संबंधित थी और विपक्षी सं. 2 और 3 "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग" कोटि के थे और वह तरीका जिसमें घटना घटित हुई, वह स्थान जहां घटना घटित हुई, इस प्रकार की घटना के संघटकों को स्पष्टतः निर्मित करते हैं और इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विपक्षी सं. 2 और 3 को अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) और साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन अपराधों से उन्मोचित किया जाना बिल्कुल भी उचित नहीं था और इसलिए उनको इस प्रकार के अपराध कारित करने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष विचारण का सामना करना चाहिए । विपक्षी सं. 2 और 3 की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ । विद्वान् अपर

स्थायी काउंसेल श्री दीपक कुमार ने याची के विद्वान् काउंसेल का समर्थन किया और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और साथ ही साक्षियों के कथनों को यह दलील देते हुए प्रस्तुत किया कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति कि अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) और साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन अपराध के संघटक गठित किए जाने के प्रयोजनार्थ अभिलेख पर प्रथमदृष्ट्या कोई सामग्री उपलब्ध नहीं थी, सही नहीं है ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल और साथ ही राज्य के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदनों पर विचारोपरान्त और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के परिशीलन पर यह प्रकट हो जाता है कि किसी सार्वजनिक स्थान जैसे कि ब्लाक कार्यालय में विपक्षी सं. 2 और 3 ने जानबूझकर याची का अपमान किया और उसको अनुसूचित जनजाति की सदस्य होने के कारण नीचा दिखाने के आशय के साथ डराया-धमकाया और यह उपदर्शित किए जाने के लिए भी प्रथमदृष्ट्या सामग्री अभिलेख पर उपलब्ध है कि उन्होंने इत्तिलाकर्ता को अपमानित करने के आशय से बल का प्रयोग भी किया और उसकी लज्जा भंग की । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किए गए वृत्तांत की पुष्टि इत्तिलाकर्ता के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित कथन से हो जाती है और साथ ही रघुनाथ बेहरदाली जो याची का पति है और साथ ही नागेन्द्र पाईका के कथनों से भी होती है । ये दस्तावेजी साक्ष्य से भी स्पष्ट है जो अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण के दौरान नुआगाडा के तहसीलदार से यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ एकत्रित किए गए थे कि याची अनुसूचित जनजाति की सदस्य है और विपक्षी सं. 2 और 3 ईसाई धर्म में उनके धर्म परिवर्तन के बाद "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग" कोटि के अन्तर्गत आते हैं । इस सामग्री को ध्यान में रखते हुए मेरा मत है कि विपक्षी सं. 2 और 3 के विरुद्ध अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) और साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन अपराध के कारण के पर्याप्त आधार मौजूद हैं और इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय विपक्षी सं. 2 और 3 को इन अपराधों से उन्मोचित करने में न्यायानुमत नहीं था ।

6. उन्मोचन के आदेश में समनुदेशित कारण अभिलेख की त्रुटि पर

आधारित हैं और इसलिए वे विधि की दृष्टि में मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं हैं । तद्नुसार, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं । 2014 के जी. आर. मामला सं. 32 में उदयगिरी के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (आर) के समक्ष लम्बित मामला पराला खेमुडी, गजपति के विद्वान् सेशन और विशेष न्यायाधीश को वापस भेजा जाए । विद्वान् विचारण न्यायालय और साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 341/323/354/294/34 सपठित अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(1)(x)(xi) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विपक्षी सं. 2 और 3 के विरुद्ध विधि अनुसार आरोप विरचित करेगा ।

7. चूंकि मामला वर्ष 2014 का है, विद्वान् विचारण न्यायालय उदयगिरी के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (आर) के न्यायालय से अभिलेखों की प्राप्ति की तारीख से 6 माह की अवधि के भीतर मामले के निस्तारण के लिए शीघ्र कार्यवाही करेगा ।

8. परिणामतः, दांडिक पुनरीक्षण याचिका मंजूर की जाती है ।

9. इस आदेश की एक प्रति विद्वान् निचले न्यायालयों को आवश्यक कार्यवाही हेतु भेजी जाए ।

पुनरीक्षण याचिका मंजूर की गई ।

शु.

गुजरात राज्य

बनाम

महेन्द्र सुभाषभाई वानखेड़े

तारीख 18 जुलाई, 2016

न्यायमूर्ति अन्नत एस. दवे और न्यायमूर्ति बी. एन. करिया

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 363, 366 और 376 – अपहरण और बलात्संग – दंड – विचारण न्यायालय द्वारा न्यूनतम दंड विहित किया जाना – पीड़िता का अप्राप्तवय होना और अभियुक्त-अपीलार्थी का केवल 18 वर्ष आयु का होना – पीड़िता व अभियुक्त के बीच प्रेम-प्रसंग का मामला होना – न्यूनतम दंड को घटाने का कोई विशेष कारण प्रतीत नहीं होता है और ऐसे अपराधों के लिए न्याय हेतु सामाजिक मूल्य को दिशा देने के लिए 2 वर्ष 9 मास के कारावास सहित 100/- रुपए के जुर्माने के दंड को बढ़ाते हुए 7 वर्ष का कठोर कारावास और 5,000/- रुपए जुर्माने का दंड अधिरोपित किया जाना न्यायसंगत है ।

मुख्य तथ्य जिनके आधार पर वर्तमान अपील तथा पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया है, इस प्रकार हैं कि तारीख 11 अक्तूबर, 2008 को लगभग 10.20 बजे पूर्वाह्न में वर्तमान प्रत्यर्थी अर्थात् महेन्द्र सुभाषभाई वानखेड़े अन्य अभियुक्त बाबूभाई अनिलभाई **उर्फ** हनीफभाई राठौड़ ने एक साथ मिलकर शिकायतकर्ता अर्थात् ज्योति की अप्राप्तवय कन्या को एंग्लो वैदिक हिन्दी विद्यालय, सूरत से फुसलाकर विभिन्न स्थानों पर ले गए और उसकी इच्छा और सहमति के विरुद्ध उसके साथ बलात्संग किया । इस प्रकार, दोनों अभियुक्तों ने एक-दूसरे की मौनानुस्वीकृति से भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 363, 366, 376 और 114 के अधीन गंभीर अपराध कारित किए, अतः उढाना पुलिस थाना, सूरत में 2008 का आपराधिक मामला सं. 344 दर्ज कराया गया जिसके पश्चात् इस मामले का अन्वेषण किया गया । अन्वेषण के पश्चात्, पुलिस ने 11वें अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सूरत के समक्ष आरोप पत्र प्रस्तुत किया । चूंकि प्रत्यर्थियों तथा अन्य सह-अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया अपराध पूर्णतया विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा विचारण किए जाने योग्य है, इसलिए यह मामला विद्वान् प्रधान जिला

और सेशन न्यायाधीश, सूरत को सुपुर्द कर दिया गया जिसे 2010 के सेशन मामला सं. 39 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । विचारण के दौरान, प्रत्यर्थियों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और उन पर लगाए गए आरोपों के लिए विचारण किए जाने की मांग की । अतः, अभियोजन पक्ष ने शिकायतकर्ता, चिकित्सा अधिकारी, पुलिस साक्षी तथा पंच साक्षियों की परीक्षा कराई । अभियोजन पक्ष ने मौखिक साक्ष्य के समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य का भी अवलंब लिया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने, साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् प्रत्यर्थी महेन्द्र सुभाषभाई वानखेड़े को दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और दो वर्ष और नौ मास का साधारण कारावास भोगने तथा 100/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर सात दिनों का अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अन्य अभियुक्त अर्थात् बाबूभाई अनिलभाई **उर्फ** हनीफभाई राठौड़ को दंड संहिता की धारा 114 के साथ पठित धारा 363 और 366 के अधीन अपराध से दोषमुक्त कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने इस मामले में के प्रत्यर्थी को एक साथ दंडादेश चलाए जाने का निदेश दिया और उस कारावास की अवधि से दंडादेश किया जिसे वह न्यायिक अभिरक्षा के दौरान पहले ही पूरा कर चुका था जिसके परिणामस्वरूप गुजरात राज्य की ओर से वर्तमान अपील और मूल शिकायतकर्ता की ओर से पुनरीक्षण आवेदन फाइल किए गए हैं । उच्च न्यायालय द्वारा अपील व पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – सर्वप्रथम हम दंडादेश के प्रश्न पर विचार करेंगे । दंड संहिता की धारा 376 के अधीन न्यायालय पर यह बाध्यता अधिरोपित की गई है कि अभियुक्त को इस अपराध के लिए कम से कम 7 वर्ष के कारावास की अवधि का दंड अधिरोपित करे । तथापि, समुचित और विशेष कारणों के आधार पर इस निर्णय में एक अपवाद अभिलिखित है । इस प्रकार, न्यायालय 7 वर्ष से कम कारावास का दंड अधिरोपित कर सकता है । विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने भी यह विचार किया है कि प्रत्यर्थी-अभियुक्त 20 अक्तूबर, 2008 से न्यायिक अभिरक्षा में था और उसने 2 वर्ष तथा 9 मास की अवधि का कारावास पूरा कर लिया था, अतः उसे कम दंड अधिरोपित किया जाना चाहिए । इसके प्रतिकूल, विद्वान् न्यायाधीश द्वारा उनके अपने निर्णय में दिए गए किसी भी कारण का यह अर्थ ऐसे समुचित या विशेष कारण से नहीं लगाया जा सकता है जिसके

आधार पर दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विहित 7 वर्ष की अवधि से कम दंड अधिरोपित किया जा सके । ऐसा प्रतीत होता है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अपराध की गंभीरता की ओर ध्यान नहीं दिया है और इसके बजाय उन्होंने अभियुक्त के 18 वर्ष के होने और प्रेम प्रसंग के परिणाम से अवगत न होने और उसके लापरवाह होने तथा आहत आचरण के आधार पर दंड में कमी की है । हमारा यह मत है कि दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 2 वर्ष और 9 मास की अवधि का दंडादेश अत्यंत कम है और साबित किए गए अपराध की गंभीरता से मेल नहीं खाता है । चूंकि विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किया गया दयाभाव पूर्णतया भ्रमित है और इससे समाज को गलत संदेश जाता है, इसलिए न्यायालय इस विषय पर विधि की संवीक्षा और विश्लेषण करते हुए पुनर्विचार करेगा । विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत द्वारा व्यक्त किए गए कारणों पर विचार करने पर प्रत्यर्थी-अभियुक्त को विधि के अधीन विहित न्यूनतम दंड से कम दंड अधिनिर्णीत करते समय विद्वान् विचारण न्यायाधीश को अत्यंत औपचारिक रूप से कार्य करना चाहिए । इसके अतिरिक्त, दंडादेश में कमी किए जाने का आदेश पारित करते समय विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा कोई भी ठोस कारण नहीं दिए गए हैं जिन्हें समुचित या विशिष्ट कारण कहा जा सके । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने बलात्संग की आहत कन्या और समाज के प्रति संवेदना का अभाव व्यक्त किया है । न्यायालयों से यह प्रत्याशा की जाती है कि वे दंडादेश दिए जाने की प्रक्रिया का समुचित रूप से पालन करें और जघन्य अपराध के अनुकूल दंड अधिरोपित करें । इस प्रकार, वर्तमान दांडिक अपील तथा मूल शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किए जाने योग्य है । भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन यह उपबंध किया गया है कि जो कोई उपधारा 2 द्वारा उपबंधित मामलों के सिवाय, बलात्संग करेगा, वह दोनों में से किसी भी भांति के कारावास, जिसकी अवधि 7 वर्ष से कम की नहीं होगी किन्तु जो आजीवन या दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जा सके और जुर्माने से भी दंडनीय होगा, किन्तु यदि वह स्त्री जिससे बलात्संग किया गया है, उसकी अपनी पत्नी है और 12 वर्ष से कम आयु की नहीं है तो वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि 2 वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से या दोनों से, दंडित किया जाएगा । परंतु न्यायालय ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णयों में उल्लिखित किए जाएंगे, 7 वर्ष से

कम अवधि के कारावास का दंडादेश दे सकेगा । यहां जैसाकि पहले ही विचार किया गया है, अभियुक्त को 7 वर्ष से कम दंड दिए जाने के लिए कोई भी समुचित या विशेष कारण उपलब्ध नहीं है । इस अपराध के अन्तर्गत 7 वर्ष का न्यूनतम दंडादेश विहित किया गया है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने भी अभियुक्त द्वारा कारित किए गए बलात्संग के अपराध के लिए किए गए अभियोजन को स्वीकार किया है किंतु इसमें इसके ऊपर उल्लिखित कारणों के आधार पर कम दंड अधिनिर्णीत किया है । अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 360, 366 और 376 के दंडनीय अपराध के लिए 2 वर्ष के साधारण कारावास और मात्र 100/- रुपए का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया गया था । इस मामले में हमें यह विचार करना चाहिए कि दंडादेश देने वाले न्यायालयों से यह प्रत्याशा की जाती है कि उन्हें सभी तथ्यों और परिस्थितियों तथा दंडादेश के प्रश्न को ध्यान में रखते हुए ऐसा दंड अधिरोपित करना चाहिए जो कारित किए गए अपराध से मेल खाता है । न्यायालयों को निर्दोष, असहाय और कम आयु की कन्या के साथ किए गए बलात्संग जैसे जघन्य अपराध के मामलों में समाज की गुहार को अवश्य सुनना चाहिए जैसाकि इस मामले में हुआ है और न्यायालयों को समुचित दंडादेश अधिरोपित करने चाहिए । इसके अतिरिक्त, हमें महिलाओं के प्रति किए गए अपराधों को अनदेखा नहीं करना चाहिए और ऐसा उपचार करना चाहिए जो मिसाल बन सके । अतः, न्यायालयों से यह प्रत्याशा की जाती है कि महिलाओं के साथ किए गए लैंगिक अपराधों पर कड़ी सावधानी से विचार करे । ऐसे मामलों में कड़ा रुख अपनाया जाना चाहिए । जब एक बार किसी व्यक्ति को बलात्संग के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है तब उसके साथ सख्ती से कार्यवाही की जानी चाहिए । इस प्रकार, सभी परिस्थितियों और विधिक स्थिति पर विचार करते हुए इस न्यायालय का यह मत है कि चूंकि इस मामले में समुचित या विशेष कारण हैं, इसलिए अभियुक्त को विधि के अधीन विहित रूप में 7 वर्ष की अवधि के कारावास और 5 हजार रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 3 मास का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने के लिए दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडादिष्ट किया जाना चाहिए । परिणामतः, गुजरात राज्य द्वारा फाइल की गई दांडिक अपील तथा मूल आवेदक द्वारा प्रस्तुत किया गया दांडिक मूल आवेदन मंजूर किया जाता है । प्रत्यर्थी-अभियुक्त को दंड संहिता 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 7 वर्ष का कठोर

कारावास भोगने तथा 5,000/- रुपए के अतिरिक्त जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 3 मास का अतिरिक्त कारावास भोगने का निदेश दिया जाता है । सभी दंडादेश साथ-साथ चलाए जाएंगे । अभियुक्त, विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत के समक्ष आज से 6 सप्ताह की अवधि के भीतर अभ्यर्पण करेगा और दंडादेश का शेष भाग भोगेगा । अभियुक्त द्वारा न्यायिक अभिरक्षा में बिताया गया समय समायोजित किया जाएगा । (पैरा 12, 13, 14, 28, 29 और 30)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2016] 2016 (3) स्केल 349 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 1432 :
परेशभाई अन्नाभाई सोनवाने बनाम **गुजरात राज्य** ; 9

[2016] तारीख 29.02.2016 को विनिश्चित की गई दांडिक अपील सं. 178-179/2016 :
धवल दलपत भाई पटेल भाई बनाम **गुजरात राज्य** ; 9

[2015] (2015) 10 एस. सी. सी. 359 :
सुशील अंसल बनाम **राज्य द्वारा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ; 9

[2014] (2014) 13 एस. सी. सी. 318 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 739 :
शिम्भू और अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** ; 7,27

[2014] (2014) 2 एस. सी. सी. 592 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 1035 :
परमिन्दर उर्फ **लड़का पोला** बनाम **दिल्ली राज्य** ; 7

[2014] (2014) 11 एस. सी. सी. 129 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. (क्रिमिनल) 1350 :
ललित कुमार यादब उर्फ **कुरी** बनाम **राज्य उत्तर प्रदेश राज्य** ; 9

[2014] (2014) 12 एस. सी. सी. 591 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. (सप्ली.) 1255 :
आशी देवी और अन्य बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)** ; 9

[2014] 2014 (2) जी. एल. एच. 153 = 2013 क्रिमिनल ला जर्नल (एन. ओ. सी.) 637 गुजरात : **लवजीजी पुत्र चतुरजी कामाजी ठाकुर** बनाम **गुजरात राज्य** ; 9

[2014] 2014 (2) जी. एल. एच. 161 : **मैसर्स इंडस एयरवेज प्राइवेट लिमिटेड और अन्य** बनाम **मैसर्स मेगनम एवीऐशन प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य** ; 9

[2012] (2012) 6 एस. सी. सी. 770 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2301 : **राजस्थान राज्य** बनाम **विनोद कुमार** ; 7

[2011] (2011) 10 एस. सी. सी. 192 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. (क्रिमिनल) 5 : **मोहम्मद इमरान खान** बनाम **राज्य सरकार (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)** ; 9

[2006] (2006) 5 एस. सी. सी. 736 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1746 : **छत्तीसगढ़ राज्य** बनाम **लेखराम** ; 9

[2005] (2005) 1 एस. सी. सी. 108 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 222 : **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **बालू** ; 7

[1998] (1998) 7 एस. सी. सी. 629 : **जरनैल सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** । 9

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 1546.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 377 के अधीन राज्य की ओर से अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री रुतविज ओझा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री कुणाल एस. शाह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. एन. करिया ने दिया ।

न्या. करिया – 2011 की दांडिक अपील सं. 1546 दंड प्रक्रिया

संहिता, 1973 (जिसे संक्षेप में "संहिता" कहा गया है) की धारा 377 के अधीन गुजरात राज्य की ओर से 2010 के सेशन मामला सं. 39 में विद्वान् प्रधान जिला और सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 26 जुलाई, 2011 को पारित निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है । इसके अतिरिक्त 2013 का पुनरीक्षण आवेदन सं. 581, संहिता की धारा 401 के साथ पठित धारा 397 के अधीन मूल शिकायतकर्ता की ओर से विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश की अभिवृद्धि के लिए भी फाइल किया गया है । चूंकि इन दोनों कार्यवाहियों के अधीन इस निर्णय और दंडादेश को चुनौती दी गई है, इसलिए इनकी एकसाथ सुनवाई की जा रही है ।

2. मुख्य तथ्य जिनके आधार पर वर्तमान अपील तथा पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया है, इस प्रकार हैं कि तारीख 11 अक्तूबर, 2008 को लगभग 10.20 बजे पूर्वाह्न में वर्तमान प्रत्यर्थी अर्थात् महेन्द्र सुभाषभाई वानखेड़े अन्य अभियुक्त बाबूभाई अनिलभाई **उर्फ** हनीफभाई राठौड़ ने एक साथ मिलकर शिकायतकर्ता अर्थात् ज्योति की अप्राप्तवय कन्या को एंग्लो वैदिक हिन्दी विद्यालय, सूरत से फुसलाकर विभिन्न स्थानों पर ले गए और उसकी इच्छा और सहमति के विरुद्ध उसके साथ बलात्संग किया । इस प्रकार, दोनों अभियुक्तों ने एक-दूसरे की मौनानुस्वीकृति से भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 363, 366, 376 और 114 के अधीन गंभीर अपराध कारित किए, अतः उढाना पुलिस थाना, सूरत में 2008 का आपराधिक मामला सं. 344 दर्ज कराया गया जिसके पश्चात् इस मामले का अन्वेषण किया गया ।

3. अन्वेषण के पश्चात्, पुलिस ने 11वें अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सूरत के समक्ष आरोप पत्र प्रस्तुत किया । चूंकि प्रत्यर्थियों तथा अन्य सह-अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया अपराध पूर्णतया विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा विचारण किए जाने योग्य है, इसलिए यह मामला विद्वान् प्रधान जिला और सेशन न्यायाधीश, सूरत को सुपुर्द कर दिया गया जिसे 2010 के सेशन मामला सं. 39 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

4. विचारण के दौरान, प्रत्यर्थियों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और उन पर लगाए गए आरोपों के लिए विचारण किए जाने की मांग की । अतः, अभियोजन पक्ष ने शिकायतकर्ता, चिकित्सा अधिकारी, पुलिस साक्षी तथा पंच साक्षियों की परीक्षा कराई । अभियोजन पक्ष ने मौखिक साक्ष्य के समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य का भी अवलंब लिया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने, साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् प्रत्यर्थी महेन्द्र

सुभाषभाई वानखेड़े को दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और दो वर्ष और नौ मास का साधारण कारावास भोगने तथा 100/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर सात दिनों का अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अन्य अभियुक्त अर्थात् बाबूभाई अनिलभाई **उर्फ** हनीफभाई राठौड़ को दंड संहिता की धारा 114 के साथ पठित धारा 363 और 366 के अधीन अपराध से दोषमुक्त कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने इस मामले के प्रत्यर्थी को सभी एक साथ दंडादेश भोगने का निदेश दिया और उस कारावास की अवधि को मुजरा कर दिया जिसे वह न्यायिक अभिरक्षा के दौरान पहले ही भोग चुका था जिसके परिणामस्वरूप गुजरात राज्य की ओर से वर्तमान अपील और मूल शिकायतकर्ता की ओर से पुनरीक्षण आवेदन इस मामले में अभिवचनित आधारों पर फाइल किए गए ।

5. प्रारंभ में, यह उल्लेखनीय है कि गुजरात राज्य की ओर से प्रस्तुत किया गया 2011 का दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 17224 जिसमें एक अन्य अभियुक्त अर्थात् बाबूभाई अनिलभाई **उर्फ** हनीफभाई राठौड़ के संबंध में दिए गए तारीख 26 जुलाई, 2011 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील करने की इजाजत मांगी गई थी, इस न्यायालय [जिसकी न्यायपीठ में रवि आर. त्रिपाठी और न्यायमूर्ति परेश उपाध्याय थे] द्वारा तारीख 6 सितम्बर, 2012 को खारिज कर दी गई ।

6. प्रत्यर्थी राज्य की ओर से विद्वान् सहायक लोक अभियोजक श्री रुतविज ओझा, आवेदक-मूल शिकायतकर्ता की ओर से श्री मनन ए. शाह तथा प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री कुणाल एस. शाह को सुना है ।

7. विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा यह दलील दी गई है कि दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अधिरोपित दंडादेश अत्यंत अनुचित और प्रत्यर्थी द्वारा कारित किए गए अपराध के असमानुपाती है, अतः इस न्यायालय द्वारा यह अवधि बढ़ाई जानी चाहिए । यह भी दलील दी गई है कि निचले विद्वान् न्यायाधीश ने पूर्णतया गलत दृष्टिकोण अपनाया है और बलात्संग जैसे अपराध के संबंध में जो एक अप्राप्तवय कन्या के साथ कारित किया गया था, उसके लिए दो वर्ष तथा नौ मास की अवधि जितना

कम दंडादेश पारित करके विधि की आज्ञापक अपेक्षा पर ध्यान नहीं दिया है । उन्होंने यह दलील दी है कि आक्षेपित निर्णय में विवेक का प्रयोग नहीं किया गया है और अधिनिर्णीत दंडादेश विधि की दृष्टि से पूर्णतया असमानुपाती ही नहीं अपितु प्रत्यर्थी द्वारा कारित किए गए अपराध की गंभीरता के भी प्रतिकूल है । यह भी दलील दी गई है कि विद्वान् न्यायाधीश ने शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1 : प्रदर्श-10) के साक्ष्य का समुचित रूप से मूल्यांकन नहीं किया है, साथ ही रमेशभाई तुलसीराम (अभि. सा. 11 : प्रदर्श 48) तथा प्राचार्य रेणुकाबेन मणिलाल (अभि. सा. 12 : प्रदर्श 49) के साक्ष्यों पर भी विचार नहीं किया गया है जिससे यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि अभियुक्त ने शिकायतकर्ता की अप्राप्तवय पुत्री का, जिसकी आयु 14 वर्ष 9 मास है, विधिपूर्ण अभिरक्षा से अपहरण किया है तथा उसकी इच्छा और सहमति के बिना उसके विरुद्ध बलात्संग कारित किया है । यह भी दलील दी गई है कि विद्वान् न्यायाधीश ने दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दंड अधिरोपित करते समय रियायती दृष्टिकोण अपनाकर गलती की है । यह भी दलील दी गई है कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा, इन अपराधों के लिए अधिनिर्णीत दंडादेश न्याय के उपहास के सिवा कुछ नहीं है, अतः यह दंड बढ़ाए जाने चाहिए । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि आहत के साक्ष्य की प्रकृति तथा अभियुक्त द्वारा कारित किए गए अपराध की गंभीरता पर विचार करते हुए विद्वान् विचारण न्यायाधीश को अधिकतम दंड अधिरोपित करना चाहिए था । यह भी दलील दी गई है कि समुचित कारण दिए बिना विद्वान् न्यायाधीश ने अभियुक्तों पर कम दंड अधिरोपित करके गलती की है क्योंकि ऐसा करना विधि के उपबंधों के अनुसरण में नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि आहत (अभि. सा. 7) में साक्ष्य अर्थात् प्रदर्श 34 का मूल्यांकन विद्वान् न्यायाधीश द्वारा समुचित रूप से नहीं किया गया है । यह भी दलील दी गई है कि जब अभिलेख से यह स्पष्ट हो गया है कि अभियुक्तों ने अप्राप्तवय कन्या के साथ उसकी इच्छा और सहमति के विरुद्ध बलपूर्वक बलात्संग किया है तब विद्वान् न्यायाधीश को आहत के वृत्तांत का अवलंब लेना चाहिए था । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने कम दंड अधिरोपित करके आहत के साक्ष्य का अवलंब न लेकर त्रुटि की है । इन परिस्थितियों में, विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा यह निवेदन किया गया है कि यह अपील मंजूर की जाए और विद्वान् न्यायाधीश द्वारा अधिरोपित दंडादेश में अभिवृद्धि की जाए । अपनी दलील के समर्थन में

विद्वान् लोक अभियोजक ने निम्न निर्णयज विधि प्रस्तुत की है :–

(क) **शिम्भू और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] ;

(ख) **परमिन्दर** उर्फ **लड़का पोला** बनाम **दिल्ली राज्य**[2] ;

(ग) **राजस्थान राज्य** बनाम **विनोद कुमार**[3] ;

(घ) **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **बालू**[4] ।

8. दांडिक पुनरीक्षण आवेदन में आवेदक की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री मनन ए. शाह ने राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् लोक अभियोजक श्री रुतविज ओझा द्वारा दी गई दलील का समर्थन किया है । श्री शाह ने यह दलील दी है कि निचले न्यायालय द्वारा अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश विधि के प्रतिकूल है और बिना किसी समुचित कारण के पारित किया गया है, अतः इसमें वृद्धि की जानी चाहिए ।

9. इसके प्रतिकूल, प्रत्यर्थी-अभियुक्त की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री शकील कुरेशी ने आक्षेपित निर्णय और आदेश का दृढ़तापूर्वक समर्थन किया है और यह दलील दी है कि स्वयं प्रत्यर्थी-अभियुक्त की आयु घटना के समय 18 वर्ष थी, इसलिए दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अनुध्यात कठोर दंड अनुचित होगा । उन्होंने यह भी दलील दी है कि प्रत्यर्थी-अभियुक्त तथा आहत एक-दूसरे से प्रेम करते थे । आहत का अपहरण प्रत्यर्थी-अभियुक्त द्वारा कभी नहीं किया गया और न ही उसके साथ उसकी इच्छा और सहमति के विरुद्ध बलात्संग किया गया, अतः इस पर अनुकंपा के आधार पर विचार किया जाना चाहिए, इसके अतिरिक्त इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाना चाहिए कि प्रश्नगत घटना लगभग 8 वर्ष पूर्व घटित हुई थी । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने विधि के अधीन विहित न्यूनतम दंड से कम दंड अधिनिर्णीत करने के लिए तर्कसम्मत कारण दिए हैं जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है कि आहत की आयु 16 वर्ष से कम थी और उसे प्रत्यर्थी से प्रेम था । यह भी दलील दी गई है कि उन्हें

---

[1] (2014) 13 एस. सी. सी. 318 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 739.
[2] (2014) 2 एस. सी. सी. 592 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 1035.
[3] (2012) 6 एस. सी. सी. 770 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2301.
[4] (2005) 1 एस. सी. सी. 108 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 222.

अपने इस प्रेम प्रसंग का परिणाम मालूम नहीं था, अतः विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा अभियुक्त पर कम दंड अधिरोपित करने में विवेकाधिकार का प्रयोग ठीक ही किया गया है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि आहत के शरीर पर क्षति या संभोग किए जाने का कोई भी चिह्न दिखाई नहीं दिया और, यदि आहत के साथ कुछ हुआ था तो वह आहत की सहमति से ही हुआ था और इसीलिए अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अधिकतम दंड अधिरोपित करके दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था । अपनी दलील के समर्थन में विद्वान् अधिवक्ता श्री कुरेशी ने निम्न निर्णयज विधियों का अवलंब लिया है :–

(क) **छत्तीसगढ़ राज्य** बनाम **लेखराम**[1] ;

(ख) **आशी देवी और अन्य** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)**[2] ;

(ग) **सुशील अंसल** बनाम **राज्य द्वारा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[3] ;

(घ) **मोहम्मद इमरान खान** बनाम **राज्य सरकार (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)**[4] ;

(ङ) **लवजीजी पुत्र चतुरजी कामाजी ठाकुर** बनाम **गुजरात राज्य**[5] ;

(च) **मैसर्स इंडस एयरवेज प्राइवेट लिमिटेड और अन्य** बनाम **मैसर्स मेगनम एवीऐशन प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य**[6] ;

(छ) **जरनैल सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[7] ;

(ज) **परेशभाई अन्नाभाई सोनवाने** बनाम **गुजरात राज्य**[8] ;

---

[1] (2006) 5 एस. सी. सी. 736 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1746.
[2] (2014) 12 एस. सी. सी. 591 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. (सप्ली.) 1255.
[3] (2015) 10 एस. सी. सी. 359.
[4] (2011) 10 एस. सी. सी. 192 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. (क्रिमिनल) 5.
[5] 2014 (2) जी. एल. एच. 153 = 2013 क्रिमिनल ला जर्नल (एन. ओ. सी.) 637 गुजरात.
[6] 2014 (2) जी. एल. एच. 161.
[7] (1998) 7 एस. सी. सी. 629.
[8] (2016) 3 स्केल 349 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 1432.

(झ) **ललित कुमार यादव** उर्फ **कुरी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] ;

(ञ) **धवल दलपत भाई पटेल भाई** बनाम **गुजरात राज्य**[2] ।

10. अंत में, विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश की पुष्टि करने के संबंध में प्रत्यर्थी-अभियुक्त की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता द्वारा दलील दी गई है और राज्य द्वारा प्रस्तुत की गई वर्तमान अपील तथा मूल शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया दांडिक पुनरीक्षण आवेदन एतद्द्वारा खारिज कर दिया गया ।

11. दोषसिद्धि और दंडादेश के विरुद्ध फाइल की गई अपील में प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता ने दोषसिद्धि के निष्कर्षों को चुनौती नहीं दी है और न्यायालय के समक्ष आवेदन केवल दंडादेश अधिनिर्णीत किए जाने के संबंध में ही किया है कि यह दंडादेश पर्याप्त है जो आहत और प्रत्यर्थी के बीच प्रेम प्रसंग को ध्यान में रखते हुए दिया गया है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियुक्त की आयु विचार के लिए एक महत्वपूर्ण तथ्य है । विद्वान् अधिवक्ता के अनुसार प्रत्यर्थी-अभियुक्त 2 वर्ष और 9 मास का कारावास पहले ही भोग चुका है । इस अभियुक्त का कोई भी आपराधिक इतिहास नहीं है । अतः, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने आहत द्वारा लिखे गए पत्रों, अन्य परिस्थितियों तथा प्रत्यर्थी की आयु को ध्यान में रखते हुए यह ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि यह मामला पहले से भोगे गए कारावास की अवधि जितना दंडादेश कम किए जाने के लिए एक उचित मामला है जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है कि वह 2 वर्ष और 9 मास की अवधि का कारावास भोग चुका है ।

12. सर्वप्रथम हम दंडादेश के प्रश्न पर विचार करेंगे । दंड संहिता की धारा 376 के अधीन न्यायालय पर यह बाध्यता अधिरोपित की गई है कि अभियुक्त को इस अपराध के लिए कम से कम 7 वर्ष के कारावास की अवधि का दंड अधिरोपित करे । तथापि, समुचित और विशेष कारणों के आधार पर इस निर्णय में एक अपवाद अभिलिखित है । इस प्रकार, न्यायालय 7 वर्ष से कम कारावास का दंड अधिरोपित कर सकता है । किंतु उसके लिए ठोस कारण दिए जाने चाहिए । तथापि, वर्तमान मामले में, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय पारित करते हुए 7 वर्ष के विहित न्यूनतम कारावास के स्थान पर पहले से भोगे गए 2 वर्ष और 9

---

[1] (2014) 11 एस. सी. सी. 129 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. (क्रिमिनल) 1350.

[2] तारीख 29.2.2016 को विनिश्चित की गई दांडिक अपील सं. 178-179/2016.

मास की अवधि जितना दंड अधिरोपित करने के निम्न कारण समनुदेशित किए हैं :–

> "**कारण** – न्यायालय द्वारा अभिलिखित कथन में यह उल्लेख किया है कि घटना के समय उसकी आयु 18 वर्ष थी । निचले न्यायालय के अभिलेख से शनाख्त संबंधी कथन पर पहले से लिखे अंकों पर व्हाइटनर लगाकर प्रत्यर्थी की आयु 20 वर्ष दर्शाई गई है । चिकित्सक द्वारा जारी किए गए प्रमाणपत्र प्रदर्श-37 में प्रत्यर्थी की आयु 20 वर्ष प्रकट की गई है । डा. अंजलि (अभि. सा. 9) के समक्ष आहत द्वारा दिए गए विवरण में प्रत्यर्थी की आयु 18 वर्ष दी गई है । तारीख 9 अप्रैल, 2009 को जो आरोप विरचित किया गया था तब उसमें अभियुक्त की आयु 19 वर्ष दी गई है । विद्वान् सेशन न्यायाधीश की मताभिव्यक्तियों के अनुसार संक्षेप में प्रत्यर्थी-अभियुक्त की आयु 18 वर्ष थी जिसे प्रेम प्रसंग के मामले में अवयस्क या वयस्क नहीं कहा जा सकता जहां पक्षकार न तो परिणाम से अवगत होते हैं और न ही वे कोई परवाह करते हैं । किंतु आहत के आचरण को ध्यान में रखते हुए, जहां यह साबित हो गया है कि विधि के अनुसार अपराध गठित हो गया है, वहां कठोर दंड देना उचित नहीं होगा वह भी ऐसी स्थिति में जहां विधि के अनुसार कारण उल्लखित करते हुए, न्यूनतम दंड अधिरोपित किया जा सके ऐसी स्थिति में अभियुक्त को मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अनुतोष दिया जा सकता है ।"

13. विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने भी यह विचार किया है कि प्रत्यर्थी-अभियुक्त 20 अक्तूबर, 2008 से न्यायिक अभिरक्षा में था और उसने 2 वर्ष तथा 9 मास की अवधि का कारावास पूरा कर लिया था, अतः उसे कम दंड अधिरोपित किया जाना चाहिए ।

14. इसके प्रतिकूल, विद्वान् न्यायाधीश द्वारा उनके अपने निर्णय में दिए गए किसी भी कारण का यह अर्थ ऐसे समुचित या विशेष कारण से नहीं लगाया जा सकता है जिसके आधार पर दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विहित 7 वर्ष की अवधि से कम दंड अधिरोपित किया जा सके । ऐसा प्रतीत होता है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अपराध की गंभीरता की ओर ध्यान नहीं दिया है और इसके बजाय उन्होंने अभियुक्त के 18 वर्ष के होने और प्रेम प्रसंग के परिणाम से अवगत

न होने और उसके लापरवाह होने तथा आहत आचरण के आधार पर दंड में कमी की है । हमारा यह मत है कि दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 2 वर्ष और 9 मास की अवधि का दंडादेश अत्यंत कम है और साबित किए गए अपराध की गंभीरता से मेल नहीं खाता है । चूंकि विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किया गया दयाभाव पूर्णतया भ्रमित है और इससे समाज को गलत संदेश जाता है, इसलिए हम इस विषय पर विधि की संवीक्षा और विश्लेषण करते हुए पुनर्विचार करेंगे ।

15. **छत्तीसगढ़ राज्य** बनाम **लेख राम**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने राज्य द्वारा प्रस्तुत की गई अपील मंजूर करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोक्त्री वयस्क कन्या थी । वह विवाहित थी । उसने अपनी ससुराल में कुछ महीने बिताए थे । प्रत्यर्थी उसके मकान में काम करता था । इस प्रकार प्रत्यर्थी और अभियोक्त्री लंबे समय से एक दूसरे को जानते थे । अभियोजन पक्ष स्पष्ट रूप से अपना यह पक्षकथन साबित नहीं कर सका कि उसे प्रत्यर्थी द्वारा उसके संरक्षक की अभिरक्षा से फुसलाकर ले जाया गया था कि प्रत्यर्थी उसके साथ विवाह करेगा । अभियोक्त्री ने उक्त सुझाव से इनकार किया है क्योंकि संभवतः वह यह जानती थी कि वह पहले से विवाहित है इसलिए प्रत्यर्थी के साथ पुनः विवाह करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । वह किराए के मकान में प्रत्यर्थी के साथ थोड़े समय के लिए रही थी । दोनों न्यायालयों ने इस आधार पर कार्यवाही की है कि अभियोक्त्री ने अपनी सहमति दी थी । घटना वर्ष 1986 में घटित हुई थी । कार्यवाही 10 वर्ष तक लंबित रही । विशेष इजाजत याचिका राज्य द्वारा ऐसी अपील प्रस्तुत करने की सीमा की विहित अवधि के 230 दिनों के पश्चात् फाइल की गई थी । तथापि, विशेष इजाजत याचिका फाइल किए जाने में हुआ विलंब माफ कर दिया गया । अभिकथित रूप से प्रत्यर्थी लगभग डेढ़ वर्ष अभिरक्षा में रहा । इस मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि दोनों न्यायालयों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अभियोक्त्री ने अपनी सहमति दी थी, अपीलार्थी को वापस कारागार भेजना उचित नहीं होगा । वर्तमान मामले के तथ्यों का मिलान इस मामले के तथ्यों से करने पर यह पता चलता है कि ये पूर्णतया भिन्न है । इस मामले में अभियोक्त्री

---

[1] (2006) 5 एस. सी. सी. 736 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1746.

अप्राप्तवय और अविवाहित कन्या है, अतः इस विनिश्चय से प्रत्यर्थी-अभियुक्त को कोई सहायता नहीं मिल सकती ।

16. **आशी देवी और अन्य** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)** (उपरोक्त) वाले मामले में 93 वर्ष के अभियुक्त पर आरोप विरचित किए गए जो 5 फरवरी, 2009 से जमानत मंजूर किए जाने तक कारावास में रहा था और जमानत मंजूर किए जाने का आदेश उच्चतम न्यायालय द्वारा तारीख 13 मई, 2009 को पारित किया गया था जिसमें दंड संहिता की धारा 379 के अधीन तीन वर्ष के कठोर कारावास और धारा 448 के अधीन एक वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश को, अभियुक्त की आयु को दृष्टिगत करते हुए उपांतरित किया गया था । इस मामले के तथ्य उस मामले से भिन्न है जिसका न्यायनिर्णयन इस न्यायालय ने किया है, अतः प्रत्यर्थी के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा अवलंब लिया गया विनिश्चय इस मामले के तथ्यों को लागू नहीं होगा । उद्धृत मामले में, महिला अभियुक्त की आयु पर विचार करते हुए उच्चतम न्यायालय ने उसे अधिनिर्णीत किए गए दंडादेशों को उपांतरित कर दिया । यह उल्लेख करना आवश्यक नहीं है कि अपराध की गंभीरता, अपराध कारित किए जाने की रीति, अभियुक्त की आयु और अन्य उपशमनकारी परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए समुचित दंडादेश अधिनिर्णीत किया जाना चाहिए । दंडादेश न तो अत्यधिक होना चाहिए और न ही अत्यंत कम हो ।

17. प्रत्यर्थी-अभियुक्त के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा एक अन्य विनिश्चय अर्थात् **सुशील अंसल** बनाम **राज्य द्वारा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** (उपरोक्त) वाले मामले में अभियुक्त पर आपराधिक उपेक्षा द्वारा मृत्यु कारित करने, मानवीय जीवन को संकटापन्न करने तथा साधारण/गंभीर क्षति पहुंचाने और सामान्य विधि और कानूनी उपबंधों के अधीन कर्तव्य का भंग करने के लिए दंड संहिता की धारा 304क, 337, 338 और 356 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किए गए । उपहार सिनेमा वाला ऐसा मामला है जिसमें दोषसिद्धि और दंड की मात्रा पर अभियुक्त-1, अभियुक्त-2 (उपहार सिनेमा के स्वामी) को लेकर 2010 की दांडिक अपील सं. 597-598 और अभियुक्त-15 (दिल्ली अग्निश्मन अधिकारी जिसने उपहार सिनेमा को अग्नि सुरक्षा के संबंध में अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किया था), विचार किया गया था । इस मामले के तथ्यों के अनुसार, अपीलार्थी अर्थात् उपहार सिनेमा के स्वामियों ने बालकनी में और अधिक सीटों की व्यवस्था करने के लिए एक द्वार बंद कर दिया था । वास्तव में, ऐसा करके दर्शकों के सुरक्षा के साथ

समझौता किया गया था और जब विद्युत खराबी के कारण आग लगी, तब 59 व्यक्तियों की मृत्यु हुई और 100 व्यक्ति क्षतिग्रस्त हुए । यदि सिनेमा के स्वामियों ने सिनेमा के दरवाजों में से यह एक दरवाजा बंद न किया होता तब संभवतः मानव जीवन को कम क्षति पहुंचती । अपीलार्थी/अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2 की दोषसिद्धि की पुष्टि उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई । अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2 को दंड संहिता की धारा 36 के साथ पठित धारा 304क/337/338 तथा चलचित्र अधिनियम, 1952 की धारा 14 के अधीन दोषसिद्ध किया गया । अभियुक्त-15 को दंड संहिता की धारा 36 के साथ पठित धारा 304क/336/338 के अधीन दोषसिद्ध किया गया । निचले न्यायालय द्वारा अधिरोपित एक वर्ष के दंडादेश को बढ़ाकर दो वर्ष कर दिया गया । चूंकि कोई भी सिविल नुकसानी का दावा नहीं किया गया है और वृद्धावस्था तथा स्वास्थ्य पर विचार करते हुए कारावास की शेष अवधि के बदले तीन-तीन करोड़ रुपए का जुर्माना अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2 पर अधिरोपित किया गया । समरूपता के आधार पर अभियुक्त-15 को ऐसे ही निबंधनों के आधार पर छोड़ा गया किन्तु जुर्माने की रकम 10 लाख रुपए नियत की गई । सुनील अंसल (अभियुक्त-1) को अधिनिर्णीत दंडादेश के संबंध में, चूंकि मामला उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ को निर्दिष्ट कर दिया गया था, निर्णय के पैरा 17 में यह मत व्यक्त किया गया, "..... हमने इस तथ्य पर सावधानीपूर्वक विचार किया है कि ऐसे गंभीर मामले में अधिक दंड अपेक्षित होता है किन्तु न्यायालय ने दंडादेश विहित किए जाने से संबंधित विधि के अधीन उपलब्ध विकल्प को भी विचार में लिया है । अब यह तथ्य सामने आता है कि विधि के अधीन विहित अधिकतम दंडादेश की अवधि दो वर्ष है और उच्च न्यायालय ने, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए, एक वर्ष का दंडादेश अधिनिर्णीत किया है ....." । उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश बढ़ाकर दो वर्ष किया जाना अनिवार्य है किन्तु एक वर्ष के अतिरिक्त दंडादेश की अवधि के बदले जुर्माने की सारभूत रकम अधिरोपित की जानी चाहिए । इस प्रकार, दोनों अभियुक्त अर्थात् इस मामले में के अपीलार्थी-1 और अपीलार्थी-2 को यह आदेश दिया गया कि वे तीन-तीन करोड़ रुपए के जुर्माने का संदाय करे और यदि जुर्माने की उक्त रकम का संदाय तीन मास के भीतर किया जाता है तब दंडादेश की अवधि घटाकर पहले से भोगे गए कारावास की अवधि जितनी कर दी जाएगी । उच्चतम न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त

किया कि अपीलार्थी सं. 1 बहुत वृद्ध था, अतः उसका कठोर कारावास भोगना उचित नहीं हो सकता ।

18. **मोहम्मद इमरान खान** बनाम **राज्य सरकार (राष्ट्रीय राजधानी राज्य क्षेत्र, दिल्ली)** (उपरोक्त) वाले मामले में अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 366 और 376 के अधीन आरोपित किया गया । दोनों अभियुक्तों को विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया । दिल्ली उच्च न्यायालय ने तारीख 8 दिसम्बर, 2009 को पारित किए गए अपने आदेश द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की, तथापि, उच्च न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 366/34 के अधीन की गई उनकी दोषसिद्धि अपास्त कर दी और कठोर कारावास के दंडादेश की अवधि घटाकर सात वर्ष कर दी तथा 10 हजार रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर तीन मास का अतिरिक्त कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय ने सभी परिस्थितियों पर विचार किया साथ ही उस घटना पर भी विचार किया जो वर्ष 1998 में घटित हुई थी, और इस तथ्य को दृष्टिगत किया कि यह अपील दस वर्ष से अधिक समय से लंबित है, अभियोक्त्री अपीलार्थी के साथ अपनी इच्छा से मेरठ गई थी और उसके साथ होटल में ठहरी थी और उस समय उसकी आयु 15 वर्ष से अधिक थी जब वह अपीलार्थियों के साथ फरार हुई थी और अपीलार्थी नौजवान लड़के थे, इन परिस्थितियों में दंडादेश की अवधि घटाकर पांच वर्ष कर दी जो कि इस अपराध के लिए विहित न्यूनतम दंड से भी कम थी । इस विनिश्चय में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि चूंकि स्वयं उच्च न्यायालय ने विशेष कारण देते हुए इस अपराध के लिए विहित न्यूनतम दंड से भी कम दंड अधिनिर्णीत किया था, इसीलिए उच्चतम न्यायालय ने अप्राप्तवय कन्या के साथ बलात्संग का अपराध स्पष्ट रूप से साबित किए जाने की स्थिति में दंडादेश में और कमी करना उचित नहीं समझा, तद्नुसार अभियुक्तों द्वारा प्रस्तुत की गई अपीलें खारिज की गईं । उद्धृत किए गए मामले के तथ्य तथा वर्तमान मामले के तथ्य पूर्णतया भिन्न हैं, चूंकि घटना वर्ष 1989 में घटित हुई थी और उच्चतम न्यायालय ने तारीख 10 अक्तूबर, 2011 को अपीलें विनिश्चित की थीं । अतः, वर्तमान मामले में इतना लंबा समय व्यतीत नहीं हुआ है ।

19. **लवजीजी पुत्र चतुरजी कामाजी ठाकुर** बनाम **गुजरात राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था,

तथापि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने संदेह का लाभ देते हुए दंड संहिता की धारा 363 और 366 के अधीन दंडनीय अपराध से दोषमुक्त कर दिया और उसे दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दो वर्ष के साधारण कारावास तथा दो हजार रुपए के जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर दो मास का साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया । इस न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष विचार के लिए यह प्रश्न था कि विचारण न्यायालय द्वारा समुचित और विशेष कारण क्या थे जब विधि के अधीन विहित न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किया गया था । इस मामले में, उच्च न्यायालय अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य और विधि के उपबंधों का मूल्यांकन करने पर स्वतंत्र रूप से यह निष्कर्ष निकाला है कि विचारण न्यायालय ने इस मामले का निपटारा करने में विधि की दृष्टि से कोई गलती नहीं की है और दंड संहिता की धारा 376 के अधीन बलात्संग के अपराध के लिए विहित न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित करने में समुचित परिस्थितियों/कारणों पर विचार किया है । विधि के अधीन विहित न्यूनतम दंड से कम दंड पारित करने में विवेकाधिकार का प्रयोग करना न्यायालय के लिए एक चुनौती होती है किन्तु कम दंड दिए जाने की स्थिति में न्यायालय द्वारा प्रत्येक मामले के तथ्यों पर विशेष रूप से विचार किया जाना चाहिए ।

20. **जरनैल सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में 15 वर्ष आयु की अप्राप्तवय कन्या के साथ 17 वर्ष की आयु के लड़के द्वारा बलात्संग कारित किया गया था । अभियोक्त्री ने अपनी सहमति दी थी । अतः, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि कृत्य केवल एक बार किया गया था और अपीलार्थी कम आयु का बालक है, उच्चतम न्यायालय ने दंडादेश की अवधि, पहले से भोगे गए कारावास जितनी कम कर दी, साथ ही अभियोक्त्री को प्रतिकर के रूप में 12,000/- हजार रुपए का संदाय किए जाने का आदेश भी किया । वर्तमान मामले में, विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत द्वारा केवल 100/- रुपए का जुर्माना अधिरोपित किया गया है । इसके अतिरिक्त, उद्धरित मामले में बलात्संग का कृत्य अभियुक्त द्वारा केवल एक बार किया गया था न कि निरंतर किया गया हो । अतः, वर्तमान मामले के तथ्य प्रत्यर्थी-अभियुक्त द्वारा अवलंब लिए गए मामले के तथ्यों से पूर्णतया भिन्न है ।

21. **परेशभाई अन्नाभाई सोनवाने** (उपरोक्त) वाले मामले में दंड संहिता की धारा 395, 397 और 504 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि

अधिनिर्णीत की गई थी । इस मामले के अभियुक्त सं. 1 से 3 को दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपराध के लिए विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया था और अभियोजन पक्ष द्वारा अन्य आरोप साबित नहीं किए गए थे । इस तथ्य पर विचार करते हुए कि अभिकथित लूट में रोकड़ और मोबाइल फोन की कीमत केवल 16,550/- रुपए बनती है, अपीलार्थी एक नवयुवक है, विचारण न्यायालय ने 1,000/- रुपए जुर्माने के साथ केवल एक वर्ष का कठोर कारावास अधिरोपित किया । अपील किए जाने पर उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित जुर्माने की रकम में वृद्धि की और अधिनिर्णीत कठोर कारावास की अवधि बढ़ाकर 5 वर्ष कर दी । अपीलार्थी ने वर्ष 2008 में अभ्यर्पण किया था और तब से 3 वर्ष और 2 मास तक जेल में रहा । प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी पर अधिरोपित दंडादेश कम करके पहले से भोगे गए दंडादेश जितना कर देना चाहिए या नहीं । इसका सकारात्मक उत्तर देते हुए उच्चतम न्यायालय ने अपीलार्थी पर अधिरोपित दंडादेश की अवधि कम करके पहले से भोगे गए कारावास जितनी अर्थात् 3 वर्ष 2 मास कर दी, विशेषकर, ऐसी स्थिति में जब विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला हो कि अभियुक्त के कब्जे से कोई सामग्री बरामद नहीं हुई थी और उच्चतम न्यायालय के समक्ष आवेदन करने वाला एकमात्र अभियुक्त-अपीलार्थी वही था ।

22. **ललित कुमार यादव** उर्फ **कुरी** (उपरोक्त) वाले मामले में दंड संहिता की धारा 376/511 और धारा 302 के अधीन विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि की पुष्टि की गई है और अधिनिर्णीत मृत्यु दंडादेश आजीवन कारावास में परिवर्तित करते हुए उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह मामला विरल से विरलतम मामले की सूची में नहीं आता है ।

23. प्रत्यर्थी-अभियुक्त के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा अवलंब लिया गया अंतिम निर्णय **धवल दलपतभाई पटेल भाई** (उपरोक्त) वाला मामला है जिसमें अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 363, 366 और 375 के अधीन अपराध के लिए आरोपित किया गया था । विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने उपर्युक्त अपराध के लिए अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया । मुख्य रूप से यह अभिकथन किया गया था कि अपीलार्थी अभियोक्त्री को, जिसकी आयु 14 वर्ष 10 मास थी, भगाकर ले गया । तथापि, चूंकि अभियोक्त्री की आयु 15 वर्ष से कम थी, इसलिए दंड संहिता की धारा 376 के अधीन भी अपराध गठित होगा । विचारण न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 376 के उपबंधों

का अवलंब लेते हुए यह मत व्यक्त किया कि कम दंड अधिरोपित करने के समुचित और विशेष कारण हैं, तद्नुसार, अपीलार्थी को 2 वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया । राज्य द्वारा प्रस्तुत की गई अपील में उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि 7 वर्ष का न्यूनतम दंडादेश दिया जाना चाहिए और तद्नुसार इसे 2 वर्ष बढ़ाकर कुल 7 वर्ष कर दिया गया । उच्च न्यायालय के आदेश को उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील में चुनौती दी गई जिसमें माननीय न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि ऐसे कतिपय कारण हैं जो विचारण न्यायालय की राय में कम दंड अधिरोपित करने के लिए समुचित थे, अतः उच्च न्यायालय को दंडादेश में वृद्धि नहीं करनी चाहिए थी । वर्तमान मामले में, विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत द्वारा अभिलिखित कारणों के संबंध में यह नहीं कहा जा सकता है कि वे कम दंड अर्थात् 100/- रुपए जुर्माने का संदाय किए जाने तथा 2 वर्ष 9 मास की अवधि के कारावास का दंड अधिरोपित करने के लिए समुचित और/या विशेष कारण हैं, जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है ।

24. **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **बालू** (उपरोक्त) वाले मामले में अभियुक्त को बलात्संग के अपराध के लिए दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडित किया गया और उसे 7 वर्ष का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा घटाकर पहले से भोगे गए कारावास की अवधि अर्थात् 10 मास जितना कर दिया गया । उच्चतम न्यायालय ने अपील मंजूर करते हुए तथा विचारण न्यायालय द्वारा बलात्संग के लिए 7 वर्ष के कठोर कारावास के दंड को प्रतिस्थापित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया, "..... उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए कारणों में से कोई भी कारण ऐसा नहीं है जो दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आवश्यक न्यूनतम अवधि को कम करने के लिए समुचित या विशेष कारण हो । ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने अपराध की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए कि विचार नहीं किया है । यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रत्यर्थी ने अप्राप्तवय कन्या के साथ बलात्संग कारित किया है, इसलिए इस आधार पर दंडादेश में कमी नहीं की जा सकती है । अभियुक्त की आयु 17 वर्ष या 19 वर्ष थी या यह कि अभियुक्त ग्रामीण क्षेत्र का रहने वाला एक अशिक्षित ग्रामवासी है, इस संबंध में दिए गए कारण को दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अनुध्यात उचित या विशेष कारण नहीं कहा जा सकता ।" अतः मामले के सिद्ध किए गए तथ्य और परिस्थितियों के आधार पर उच्चतम न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा

अधिनिर्णीत दंडादेश प्रतिस्थापित किया ।

25. **राजस्थान राज्य** बनाम **विनोद कुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने राज्य द्वारा फाइल की गई अपील को मंजूर करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विहित किए गए न्यूनतम दंड से कम दंड अधिनिर्णीत करने की शक्ति का प्रयोग बिना सोचे-समझे नहीं किया जाना चाहिए । इसका प्रयोग न्यायोचित कारण देते हुए किफायत से किया जाना चाहिए । न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि न्यायिक विवेक का प्रयोग उद्देश्यात्मक रूप से किया जाना चाहिए और विशेष और समुचित कारण अभिलिखित करना असाधारण अनुतोष मंजूर किए जाने के लिए आज्ञापक अपेक्षा है ।

26. **परमिन्दर** उर्फ **लड़का पोला** बनाम **दिल्ली राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि उचित और विशेष कारण क्या हैं, यह प्रत्येक मामले के कारकों और तथ्यों पर निर्भर होता है और इस संबंध में इस न्यायालय द्वारा कोई भी कोई सटीक नियम अधिकथित नहीं किया गया है । तथापि, विधान-मंडल द्वारा न्यायालय से यह अपेक्षा की गई है कि वह ऐसे किसी भी मामले में समुचित और विशेष कारण अभिलिखित करे जिनमें सात वर्ष के कारावास की अवधि के न्यूनतम दंड कारावास से कम दंड अधिरोपित किया जाना हो । बलात्संग का अपराध किए जाने के समय पर अभियुक्त का आचरण अभियोक्त्री की आयु, अभियोक्त्री पर पड़ने वाले बलात्संग के परिणाम ऐसे सुसंगत कारक हैं जिन पर न्यायालय को न्यूनतम दंडादेश से कम दंड अधिरोपित किए जाने के प्रश्न पर विचार करना चाहिए । ये तथ्य कि बलात्संगी का विवाह हो चुका है और वही अपने परिवार का पोषक है तथा उस पर परिवार आश्रित है, समुचित और विशेष कारण नहीं हैं जिनके आधार पर कानूनी न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित किया जा सके । वर्तमान मामले में भी, कोई भी समुचित और विशेष कारण दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन विहित न्यूनतम दंड से कम दंड अधिरोपित करने के लिए विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा समनुदेशित नहीं किए गए हैं ।

27. **शिम्भू और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने दंड संहिता की धारा 376(2)(छ) के अधीन

---

[1] ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 739 = (2014) 13 एस. सी. सी. 318.

अभियुक्त-अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश में कमी किए जाने के प्रश्न को विनिश्चित करते हुए अपीलार्थी के इस अभिवाक् को खारिज कर दिया कि आहत के इस संबंध में किए गए समझौता शपथपत्र कि इस घटना को 18 वर्ष बीत चुके हैं और आहत का जीवन सुचारु रूप से चल रहा है, के आधार पर 10 वर्ष से कम दंड अधिरोपित किया जाए । उच्चतम न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत के अनुसार पक्षकारों के बीच किया गया पश्चात्वर्ती समझौता आहत को अभियुक्त के दंड में कमी करके उसके द्वारा पहले से भोगे गए दंड जितना करने में कोई आपत्ति नहीं थी, आहत पर दबाव डाले जाने का परिणाम भी हो सकता है और ऐसे समझौता पत्र के आधार पर इस धारा के परंतुक के अधीन दंडादेश में कमी करना उचित होगा । न्यायालय को बलात्संग जैसे जघन्य अपराध के लिए दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय मृदुल दृष्टिकोण नहीं अपनाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने यह दोहराया है कि अपवाद खंड होने के कारण इस परंतुक का अर्थ सावधानीपूर्वक लगाया जाना चाहिए ।

28. विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत द्वारा व्यक्त किए गए कारणों पर विचार करने पर प्रत्यर्थी-अभियुक्त को विधि के अधीन विहित न्यूनतम दंड से कम दंड अधिनिर्णीत करते समय विद्वान् विचारण न्यायाधीश को अत्यंत औपचारिक रूप से कार्य करना चाहिए । इसके अतिरिक्त, दंडादेश में कमी किए जाने का आदेश पारित करते समय विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा कोई भी ठोस कारण नहीं दिए गए हैं जिन्हें समुचित या विशिष्ट कारण कहा जा सके । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने बलात्संग की आहत कन्या और समाज के प्रति संवेदना का अभाव व्यक्त किया है । न्यायालयों से यह प्रत्याशा की जाती है कि वे दंडादेश दिए जाने की प्रक्रिया का समुचित रूप से पालन करे और जघन्य अपराध के अनुकूल दंड अधिरोपित करे । इस प्रकार, वर्तमान दांडिक अपील तथा मूल शिकायतकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किए जाने योग्य है ।

29. भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन यह उपबंध किया गया है कि जो कोई उपधारा 2 द्वारा उपबंधित मामलों के सिवाय, बलात्संग करेगा, वह दोनों में से किसी भी भांति के कारावास, जिसकी अवधि 7 वर्ष से कम की नहीं होगी किन्तु जो आजीवन या दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जा सकेगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा, किन्तु यदि वह स्त्री जिससे बलात्संग किया गया है, उसकी अपनी पत्नी है और 12 वर्ष से

कम आयु की नहीं है तो वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि 2 वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से या दोनों से, दंडित किया जाएगा । परंतु न्यायालय ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णयों में उल्लिखित किए जाएंगे, 7 वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंडादेश दे सकेगा । यहां जैसाकि पहले ही विचार किया गया है, अभियुक्त को 7 वर्ष से कम दंड दिए जाने के लिए कोई भी समुचित या विशेष कारण उपलब्ध नहीं है । इस अपराध के अन्तर्गत 7 वर्ष का न्यूनतम दंडादेश विहित किया गया है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने भी अभियुक्त द्वारा कारित किए गए बलात्संग के अपराध के लिए किए गए अभियोजन को स्वीकार किया है किंतु इसमें इसके ऊपर उल्लिखित कारणों के आधार पर कम दंड अधिनिर्णीत किया है । अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 360, 366 और 376 के दंडनीय अपराध के लिए 2 वर्ष के साधारण कारावास और मात्र 100/- रुपए का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया गया था । इस मामले में हमें यह विचार करना चाहिए कि दंडादेश देने वाले न्यायालयों से यह प्रत्याशा की जाती है कि उन्हें सभी तथ्यों और परिस्थितियों तथा दंडादेश के प्रश्न को ध्यान में रखते हुए ऐसा दंड अधिरोपित करना चाहिए जो कारित किए गए अपराध से मेल खाता है । न्यायालयों को निर्दोष, असहाय और कम आयु की कन्या के साथ किए गए बलात्संग जैसे जघन्य अपराध के मामलों में समाज की गुहार को अवश्य सुनना चाहिए जैसाकि इस मामले में हुआ है और न्यायालयों को समुचित दंडादेश अधिरोपित करने चाहिए । इसके अतिरिक्त, हमें महिलाओं के प्रति किए गए अपराधों को अनदेखा नहीं करना चाहिए और ऐसा उपचार करना चाहिए जो मिसाल बन सके । अतः, न्यायालयों से यह प्रत्याशा की जाती है कि महिलाओं के साथ किए गए लैंगिक अपराधों पर कड़ी सावधानी से विचार करे । ऐसे मामलों में कड़ा रुख अपनाया जाना चाहिए । जब एक बार किसी व्यक्ति को बलात्संग के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है तब उसके साथ सख्ती से कार्यवाही की जानी चाहिए । इस प्रकार, सभी परिस्थितियों और विधिक स्थिति पर विचार करते हुए इस न्यायालय का यह मत है कि चूंकि इस मामले में समुचित या विशेष कारण हैं, इसलिए अभियुक्त को विधि के अधीन विहित रूप में 7 वर्ष की अवधि के कारावास और 5 हजार रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 3 मास का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने के लिए दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडादिष्ट किया जाना चाहिए ।

30. परिणामतः, गुजरात राज्य द्वारा फाइल की गई दांडिक अपील तथा मूल आवेदक द्वारा प्रस्तुत किया गया दांडिक मूल आवेदन मंजूर किया जाता है । प्रत्यर्थी-अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 7 वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा 5,000/- हजार रुपए के अतिरिक्त जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 3 मास का अतिरिक्त कारावास भोगने का निदेश दिया जाता है । सभी दंडादेश साथ-साथ चलाए जाएंगे । अभियुक्त, विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत के समक्ष आज से 6 सप्ताह की अवधि के भीतर अभ्यर्पण करेगा और दंडादेश का शेष भाग भोगेगा । अभियुक्त द्वारा न्यायिक अभिरक्षा में बिताया गया समय समायोजित किया जाएगा ।

31. यदि प्रत्यर्थी उक्त अवधि के भीतर अभ्यर्पण करने में असफल रहता है तब विद्वान् 11वें मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सूरत को निदेश दिया जाता है कि वे उसे अभिरक्षा में लेकर दंडादेश का शेष भाग भोगने के लिए जेल भेजे ।

32. प्रत्येक मामले में प्रारंभिक आदेश उपर्युक्त निबंधनों में अंतिम किया जाता है ।

33. रजिस्ट्री विभाग को निदेश किया जाता है कि इस निर्णय की एक प्रति विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सूरत को भेजी जाए ।

अपील और पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया ।

अस./आर्य

स्वपन पॉल

बनाम

त्रिपुरा राज्य

मुख्य न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता और न्यायमूर्ति यू. बी. साह

तारीख 17 अप्रैल, 2015

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 354, 385, 452 और 506 – गृह अतिचार – महिला का शीलभंग किया जाना – यदि अभियुक्त-पुलिस पदधारियों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि उन्होंने शिकायतकर्ता/पीड़िता के घर में घुसकर उसका शीलभंग किया और उससे धन उगाही करने का प्रयत्न किया तथा इन बातों को पुलिस या लोगों के समक्ष प्रकट किए जाने पर उसे भयानक परिणाम भुगतने की चेतावनी भी दी गई और उपरोक्त बातों की उसके संपूर्ण परिसाक्ष्य तथा दस्तावेजी साक्ष्य से संपुष्टि हुई है तो अभियुक्त-पुलिस पदधारियों को दोषसिद्ध किया जाना न्यायसंगत है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 354, 385, 452 और 506 – गृह अतिचार – महिला का शीलभंग किया जाना – जहां मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में एक दिन का विलंब हुआ हो और घटना की गलत तारीख लिखी गई है, वहां पर पीड़िता के संपूर्ण परिसाक्ष्य जिसे मौखिक और कई दस्तावेजी साक्ष्य से समर्थन मिलता है, उन बातों को व्यक्त नहीं किया जा सकता, अतः अभियुक्त-पुलिस पदधारियों की दोषसिद्धि उचित है और पुलिस महा निदेशक को यह भी निदेश दिया जाता है कि अभियुक्त-पुलिस पदधारियों के विरुद्ध जांच करें और अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करें ।

अभियोजन वृत्तांत इस प्रकार है कि अभियुक्तों ने सामान्य आशय को अग्रसर करने में इत्तिलाकर्ता के मकान में अतिचार किया और इत्तिलाकर्ता की लज्जा भंग की तथा उससे धन उगाही करने का प्रयास किया और उसे धमकी दी कि वह इस संबंध में पुलिस या अन्य किसी व्यक्ति को न बताए । इत्तिलाकर्ता (नाम छिपाया गया है) की शिकायत के आधार पर 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 4 तारीख 7 फरवरी, 2006 को लगभग 4.35 बजे अपराह्न में पुलिस थाना मनु में दर्ज कराई गई । यह अब

उल्लेखनीय है कि यह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, उत्तरी त्रिपुरा को की गई शिकायत के आधार पर दर्ज कराई गई थी और इस शिकायत में यह उल्लेख किया गया था कि तारीख 18 जनवरी, 2006 को शिकायतकर्ता के पति अपने किसी काम से बाहर गया हुआ था । घर पर केवल शिकायतकर्ता, उसकी बहिन और उसका 4 वर्ष का पुत्र थे । तारीख 21 जनवरी, 2006 को सायंकाल में भाग्यजॉय रियंग, जो शिकायतकर्ता के पति का नातेदार और मित्र है और सरकारी कर्मचारी है, शिकायतकर्ता के घर किसी काम से आया । वह रात में घर पर ठहरा और उसी मकान में अलग उसके सोने की व्यवस्था कर दी गई । लगभग 11.00 बजे अपराह्न में दरवाजा खटखटाने की आवाज सुनाई दी और जो व्यक्ति दरवाजा खटखटा रहा था उसने अपना परिचय मनु पुलिस थाने के पुलिस कार्मिक के रूप में दिया । शिकायतकर्ता ने लाइट जलाई और दरवाजा खोला और इसी दौरान शिकायतकर्ता की छोटी बहिन ने भाग्यजॉय रियंग को जगाया और उसे बराबर वाले कमरे में ले आई । शिकायतकर्ता ने दरोगा बाबू की वर्दी पर उसके नाम की पट्टी देखी और उसने लाइट की रोशनी में उसकी शनाख्त असितदास (अभियुक्त) के रूप में की । उसके साथ मनु पुलिस थाने के दो सशस्त्र कार्मिक अर्थात् स्वपन पॉल और श्री अमित दूबे थे । उप-निरीक्षक असितदास ने मालूम किया कि भाग्यजॉय रियंग शिकायतकर्ता के मकान में क्या कर रहा है और वह भाग्यजॉय को थप्पड़ मारने लगा तथा उस पर घूसों से भी वार किया और उप-निरीक्षक ने पूछा कि वह शिकायतकर्ता के मकान में रात्रि में क्यों ठहरा हुआ है । इसके पश्चात् उसने अपनी बंदूक निकाली और भाग्यजॉय रियंग को जान से मारने की धमकी दी । शिकायतकर्ता ने आक्षेप किया और प्रतिरोध भी किया और उस समय उप-निरीक्षक असितदास ने शिकायतकर्ता को भी थप्पड़ मारा और उस पर बंदूक तान कर धमकी दी और शिकायतकर्ता को यह कहा कि यदि उसने शोर मचाया तो वह उसकी हत्या कर देगा । इसके पश्चात्, शिकायतकर्ता और भाग्यजॉय को बलपूर्वक बिठाया गया और उन्हें बिस्तर पर लिटाया गया और उनके अश्लील फोटो लिए गए । इसके पश्चात्, उनके हस्ताक्षर दो कोरे कागजों पर प्राप्त किए गए । पुलिस पदधारियों ने भाग्यजॉय का मोबाइल फोन जिसका नम्बर 9436134751 था, छीन लिया और 25 जनवरी, 2006 तक 1,00,000/- रुपए देने की मांग की और यह धमकी दी कि यदि ऐसा नहीं किया गया तो वह भाग्यजॉय को किसी मिथ्या मामले में फंसा देगा और दोनों को जेल भेज देगा । उन्होंने भाग्यजॉय को उसकी नौकरी से हटाने की भी धमकी दी । इसके पश्चात्

असितदास ने भाग्यजॉय को धक्का दिया और उसे दूसरे पुलिस कार्मिक को सौंप दिया जो भाग्यजॉय को लात मारते हुए कमरे से बाहर ले गया । इसके पश्चात्, अभियुक्त असितदास कमरे में शिकायतकर्ता के पास अकेला मौजूद था । उसने शिकायतकर्ता को बलपूर्वक बिस्तर पर लिटाया और उसका ब्लाउज फाड़ दिया, और उसके ऊपर चढ़ गया और उसके चुम्बन लिए । इस साक्षी ने उसे बंदूक से धमकाया और कहा कि यदि उसने शोर मचाया तो वह उसके बच्चे की हत्या कर देगा जो उस समय वहां सोया हुआ था । शिकायतकर्ता रोने लगी । अभियुक्त असितदास ने अपना मोबाइल नम्बर भी शिकायतकर्ता को दिया और उससे कहा कि वह उसे (असितदास) 25 जनवरी, 2006 के पहले संतुष्ट करे अन्यथा आहत के साथ अच्छा नहीं होगा । अगले दिन शिकायतकर्ता ने संपूर्ण घटना अपने नातेदारों को बताई और उसने इस संबंध में अपने पति को भी जानकारी दी । उसके पति के आने के पश्चात्, अन्य सशस्त्र पुलिस कार्मिकों का पता पुलिस थाने से लगाया गया और पुलिस थाने में शिकायत दर्ज कराई गई किन्तु पुलिस ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज नहीं की, अतः उसने न्यायालय में आवेदन किया । इसके पश्चात् मामला न्यायालय द्वारा पुलिस को निर्दिष्ट किया गया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई और अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् आरोप पत्र तीनों अभियुक्तों अर्थात् उप-निरीक्षक और दो पुलिस कार्मिकों के विरुद्ध फाइल किया गया और उन पर दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 452, 354, 385 और 506 के अधीन अपराध कारित किए जाने के संबंध में आरोप विरचित किए गए । विचारण के पश्चात्, विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को ऊपर कथित रूप में दोषसिद्ध किया । इसलिए, यह अपील फाइल की गई है । अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – सबसे पहले हम इस आक्षेप पर विचार करेंगे कि शिकायत अत्यंत विलंब से की गई है । यह घटना तारीख 21 जनवरी, 2006 की देर रात्रि में घटित हुई है और यह घटना 22 जनवरी, 2006 को 2.30 बजे पूर्वाह्न तक चली होगी । शिकायतकर्ता अपनी छोटी बहिन और उसके अप्राप्तवय पुत्र तथा भाग्यजॉय रियंग के साथ घर पर मौजूद थी । यह उल्लेखनीय है कि अभिलेख पर एक दस्तावेज (प्रदर्श-3) है जो कि उपखंड पुलिस अधिकारी, लोंगथराई वैली, उपखंड धलाई, त्रिपुरा को दी गई हाथ से लिखी हुई एक शिकायत है और यह प्रतीत होता है कि इस शिकायत की 23 जनवरी, 2006 को क्रम सं. 366 पर प्रविष्टि की गई है । यह

शिकायत तारीख 23 जनवरी, 2006 को ही पुलिस अधीक्षक (आर. एस. वी.), को सूचनार्थ तथा आगे निर्देश दिए जाने के लिए अग्रेषित कर दी गई किन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि किसने इस दस्तावेज को अग्रेषित किया । अतः, प्रथम शिकायत 23 जनवरी, 2006 को दर्ज कराई । दुर्भाग्यवश, चूंकि अभियुक्त पुलिस पदधारी थे इसलिए शिकायत (प्रदर्श-3) के आधार पर कोई भी कार्रवाई की जानी प्रतीत नहीं हुई और शिकायतकर्ता को न्यायालय में आवेदन करना पड़ा और इसके पश्चात् ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज हो सकी । मेरे मतानुसार, इस मामले में कोई विलंब नहीं है क्योंकि घटना तारीख 21/22 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी । आहत पुलिस पदधारियों के किए गए हमले से अभिघातग्रस्त हो सकती थी जबकि पुलिस पदधारियों का कर्तव्य नागरिकों की रक्षा करना है और इसीलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि विलंब स्पष्ट नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त, प्रथम शिकायत में ही यह उल्लेख किया गया है कि पुलिस पदधारियों ने शिकायतकर्ता और भाग्यजॉय रियंग को धमकी दी थी कि यदि उन्होंने इस मामले की जानकारी सार्वजनिक की तो उन्हें नुकसान भुगतना होगा । यह भी उल्लेखनीय है कि जो कुछ प्रदर्श-3 में कहा गया है वह सभी महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर शिकायत के अनुसार है । अतः शिकायत दर्ज कराने में वास्तव में कोई विलंब नहीं है, यह अत्यंत स्पष्ट है कि पुलिस थाने के पदधारियों ने अपने साथियों की संरक्षा करने का प्रयास किया है और इसीलिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज नहीं की जा रही थी । (पैरा 7)

यह सत्य है कि आहत ने घटना की तारीख 18 जनवरी, 2006 बताई है किन्तु जैसाकि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है कि इससे मामले पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा । मात्र इस कारण से कि आहत ने घटना की तारीख गलत बताई है उसके संपूर्ण परिसाक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जा सकता जबकि इस तथ्य का समर्थन अन्य प्रत्यक्ष तथा दस्तावेजी साक्ष्य से भी होता है । मामले के तथ्यों का मूल्यांकन अभिलेख पर प्रस्तुत संपूर्ण साक्ष्य और सामग्री पर विचार करते हुए किया जाना चाहिए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तथा एसडीपीओ को की गई शिकायत में घटना की तारीख 21 जनवरी, 2006 ठीक ही उल्लिखित की गई है । कथन में इस तारीख का उल्लेख 18 जनवरी, 2006 के रूप में किया गया है । वास्तव में, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी और लोक अभियोजक का यह कर्तव्य है कि वे आहत से उसी समय इस तारीख की

पुष्टि करवाते । दुर्भाग्यवश, ऐसा नहीं किया जा सका । इस तथ्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि बहुत बार ऐसा होता है कि न्यायालय के वातावरण के भीतर आम नागरिक असामान्य महसूस करता है । आहत मात्र एक गृहणी है । वह आदिवासी महिला है । उसने अत्यंत मानसिक पीड़ा का सामना किया है । उसकी लज्जा पर ऐसे व्यक्तियों द्वारा हमला किया गया है जिनसे उसकी संरक्षा की अपेक्षा की जाती है । आहत के विरुद्ध अनैतिकता के अभिकथन भी किए गए हैं । उसे दुष्परिणामों की धमकी दी गई है । उसने पुलिस तथा न्यायालय के समक्ष लिखित शिकायत फाइल करने का साहस जुटाया । दुर्भाग्यवश, पुलिस पदधारियों ने तब तक कोई कार्रवाई नहीं की जब तक न्यायालय ने मामला पुलिस के समक्ष नहीं भेजा । इस साक्षी के कथन का मूल्यांकन इस संदर्भ में किया जाना चाहिए और जैसाकि विचारण न्यायालय जिसने इस साक्षी के हाव-भाव देखे हैं, द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है कि आहत का कथन विश्वासोत्पादक है । उसका कथन इस घटना के ढाई वर्ष पश्चात् अभिलिखित किया गया है और अभियुक्त को मात्र इस आधार पर नहीं छोड़ा जा सकता है कि आहत ने तारीख बताने पर भूल की है । (पैरा 12)

इस निर्णय की एक प्रति पुलिस महानिदेशक को भेजी जाएगी जो यह जांच करेंगे कि उपखंड पुलिस अधिकारी, लोंगथराई वैली उपखंड मनुघाट, ढलाई को दी गई लिखित शिकायत (प्रदर्श-3) के प्राप्त होने पर पृथक् इत्तिला रिपोर्ट क्यों दर्ज नहीं की जानी चाहिए और वह पुलिस अधीक्षक (आर. एस. वी.) ढलाई को तारीख 23 जनवरी, 2006 को क्यों न अग्रेषित कर दी जाए । पुलिस महानिदेशक जांच बैठाएंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि संबद्ध पुलिस पदधारियों के विरुद्ध समुचित कार्यवाही की गई है या नहीं । तथापि, जांच संस्थित किए जाने के पूर्व पुलिस महानिदेशक तथ्यों का सत्यापन करेंगे और इस न्यायालय को 5 मई, 2015 को या उसके पूर्व अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे । महारजिस्ट्रार को निदेश दिया जाता है कि इस निर्णय की एक प्रति प्रदर्श-3 की प्रति के साथ, जो कि विचारण न्यायालय की फाइल के पृष्ठ सं. 30 और 31 पर है, भेजी जाए । (पैरा 16)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक (जेल) अपील सं. 4 और 5.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री पी. के. बिस्वास (ज्येष्ठ अधिवक्ता), पी. मजूमदार और (सुश्री) सी. भौमिक
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री ए. घोष (लोक अभियोजक) और एस. बी. देब

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता ने दिया ।

मु. न्या. गुप्ता – ये दोनों अपीलें 2006 के. जी. आर. मामला सं. 28 में विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, उत्तरी त्रिपुरा, कैला शहर द्वारा तारीख 25 जनवरी, 2012 को पारित किए गए उस निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई हैं जिसके द्वारा विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 452, 354, 385 और धारा 34 के साथ पठित धारा 406 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और निम्न प्रकार के कारावास से दंडादिष्ट किया :–

> "तद्नुसार, दोषसिद्ध व्यक्ति अर्थात् असितदास और स्वपन पॉल को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 452 के अधीन 7 वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया । उन्हें केवल दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 452 के अधीन 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 2 मास का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया ।
>
> दोषसिद्ध व्यक्तियों को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 354 के अधीन 2 वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए भी दंडादिष्ट किया । उन्हें दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 354 के अधीन 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 2 मास का साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया ।
>
> इसके अतिरिक्त, दोषसिद्धों को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 385 के अधीन 2 वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया । इन व्यक्तियों को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 385 के अधीन 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 2 मास का साधारण

कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया ।

अंत में, दोषसिद्ध व्यक्तियों को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 506 के अधीन 2 वर्ष का कठोर कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया । इन व्यक्तियों को दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 506 के अधीन 5,000/- रुपए जुर्माने का संदाय करने जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर अतिरिक्त दो मास का साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया ।"

सभी दंडादेशों को क्रम से चलाए जाने का आदेश दिया गया ।

2. संक्षेप में, अभियोजन वृत्तांत इस प्रकार है कि अभियुक्तों ने सामान्य आशय को अग्रसर करने में इत्तिलाकर्ता के मकान में अतिचार किया और इत्तिलाकर्ता की लज्जा भंग की तथा उससे धन उद्दीपिन करने का प्रयास किया और उसे धमकी दी कि वह इस संबंध में पुलिस या अन्य किसी व्यक्ति को न बताए ।

3. इत्तिलाकर्ता (नाम छिपाया गया है) की शिकायत के आधार पर 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 4 तारीख 7 फरवरी, 2006 को लगभग 4.35 बजे अपराह्न में पुलिस थाना मनु में दर्ज कराई गई । यह अब उल्लेखनीय है कि यह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, उत्तरी त्रिपुरा को की गई शिकायत के आधार पर दर्ज कराई गई थी और इस शिकायत में यह उल्लेख किया गया था कि तारीख 18 जनवरी, 2006 को शिकायतकर्ता का पति अपने किसी काम से बाहर गया हुआ था । घर पर केवल शिकायतकर्ता, उसकी बहिन और उसका 4 वर्ष का पुत्र थे । तारीख 21 जनवरी, 2006 को सायंकाल में भाग्यजॉय रियंग, जो शिकायतकर्ता का पति नातेदार और मित्र है और सरकारी कर्मचारी है, शिकायतकर्ता के घर किसी काम से आया । वह रात में घर पर ठहरा और उसी मकान में अलग उसके सोने की व्यवस्था कर दी गई ।

4. लगभग 11.00 बजे अपराह्न में खटखटाने की आवाज सुनाई दी और जो व्यक्ति दरवाजा खटखटा रहा था उसने अपना परिचय मनु पुलिस थाने के पुलिस कार्मिक के रूप में दिया । शिकायतकर्ता ने लाइट जलाई और दरवाजा खोला और इसी दौरान शिकायतकर्ता की छोटी बहिन ने भाग्यजॉय रियंग को जगाया और उसे बराबर वाले कमरे में ले आई । शिकायतकर्ता ने दरोगा बाबू की वर्दी पर उसके नाम की पट्टी देखी और उसने लाइट की रोशनी में उसकी शनाख्त असितदास (अभियुक्त) के रूप

में की । उसके साथ मनु पुलिस थाने के दो सशस्त्र कार्मिक अर्थात् स्वपन पॉल और श्री अमित दूबे थे । उप-निरीक्षक असितदास ने मालूम किया कि भाग्यजॉय रियंग शिकायतकर्ता के मकान में क्या कर रहा है और वह भाग्यजॉय को थप्पड़ मारने लगा तथा उस पर घूसों से भी वार किया और उप-निरीक्षक ने पूछा कि वह शिकायतकर्ता के मकान में रात्रि में क्यों ठहरा हुआ है । इसके पश्चात् उसने अपनी बंदूक निकाली और भाग्यजॉय रियंग को जान से मारने की धमकी दी । शिकायतकर्ता ने आक्षेप किया और प्रतिरोध भी किया और उस समय उप-निरीक्षक असितदास ने शिकायतकर्ता को भी थप्पड़ मारा और उस पर बंदूक तान कर धमकी दी और शिकायतकर्ता को यह कहा कि यदि उसने शोर मचाया तो वह उसकी हत्या कर देगा । इसके पश्चात्, शिकायतकर्ता और भाग्यजॉय को बलपूर्वक बिठाया गया और उन्हें बिस्तर पर लिटाया गया और उनके अश्लील फोटो लिए गए । इसके पश्चात्, उनके हस्ताक्षर दो कोरे कागजों पर प्राप्त किए गए । पुलिस पदधारियों ने भाग्यजॉय का मोबाइल फोन जिसका नम्बर 9436134751 था, छीन लिया और 25 जनवरी, 2006 तक 1,00,000/- रुपए देने की मांग की और यह धमकी दी कि यदि ऐसा नहीं किया गया तो वह भाग्यजॉय को किसी मिथ्या मामले में फंसा देगा और दोनों को जेल भेज देगा । उन्होंने भाग्यजॉय को उसकी नौकरी से हटाने की भी धमकी दी । इसके पश्चात् असितदास ने भाग्यजॉय को धक्का दिया और उसे दूसरे पुलिस कार्मिक को सौंप दिया जो भाग्यजॉय को लात मारते हुए कमरे से बाहर ले गया ।

5. इसके पश्चात्, अभियुक्त असितदास कमरे में शिकायतकर्ता के पास अकेला मौजूद था । उसने शिकायतकर्ता को बलपूर्वक बिस्तर पर लिटाया और उसका ब्लाउज फाड़ दिया, और उसके ऊपर चढ़ गया और उसके चुम्बन लिए । इस साक्षी ने उसे बंदूक से धमकाया और कहा कि यदि उसने शोर मचाया तो वह उसके बच्चे की हत्या कर देगा जो उस समय वहां सोया हुआ था । शिकायतकर्ता रोने लगी । अभियुक्त असितदास ने अपना मोबाइल नम्बर भी शिकायतकर्ता को दिया और उससे कहा कि वह उसे (असितदास) 25 जनवरी, 2006 के पहले संतुष्ट करे अन्यथा आहत के साथ अच्छा नहीं होगा । अगले दिन शिकायतकर्ता ने संपूर्ण घटना अपने नातेदारों को बताई और उसने इस संबंध में अपने पति को भी जानकारी दी । उसके पति के आने के पश्चात्, अन्य सशस्त्र पुलिस कार्मिकों का पता पुलिस थाने से लगाया गया और पुलिस थाने में

शिकायत दर्ज कराई गई किन्तु पुलिस ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज नहीं की, अतः उसने न्यायालय में आवेदन किया । इसके पश्चात् मामला न्यायालय द्वारा पुलिस को निर्दिष्ट किया गया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई और अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् आरोप पत्र तीनों अभियुक्तों अर्थात् उप-निरीक्षक और दो पुलिस कार्मिकों के विरुद्ध फाइल किया गया और उन पर दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 452, 354, 385 और 506 के अधीन अपराध कारित किए जाने के संबंध में आरोप विरचित किए गए । विचारण के पश्चात्, विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को ऊपर कथित रूप में दोषसिद्ध किया । इसलिए यह अपील फाइल की गई है ।

6. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री पी. के. बिस्वास द्वारा मुख्य दलील यह दी गई है कि कथन में विरोधाभास है जो इस प्रकार हैं – (i) प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अत्यंत विलंबित है और इस संबंध में कोई भी स्पष्टीकरण नहीं है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट घटना के तत्काल पश्चात् क्यों नहीं की गई थी और (ii) साक्षियों के कथन में महत्वपूर्ण विरोधाभास है, विशेषकर घटना घटित होने की तारीख के संबंध में । इस संबंध में काउंसेल ने यह दलील दी है कि शिकायतकर्ता के अनुसार यह घटना तारीख 18 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी, जो आरोप विरचित किया गया है वह तारीख 21 जनवरी, 2006 को घटित हुई घटना के संबंध में है, अतः यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थियों की दोषसिद्धि अपास्त की जानी चाहिए । काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि 1,00,000/- लाख रुपए की मांग किए जाने के संबंध में कोई भी साक्ष्य नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि पुलिस पदधारियों की शनाख्त समुचित रूप से नहीं की गई है । यह भी निवेदन किया गया है कि शिकायतकर्ता यह साबित करने में असफल रही है कि भाग्यजॉय रियंग जो कि किसी भी दशा में उसका नातेदार नहीं है, अभियोक्त्री के मकान में उसके पति की अनुपस्थिति में ठहरने के लिए अनुज्ञात कैसे किया गया ।

7. सबसे पहले हम इस आक्षेप पर विचार करेंगे कि शिकायत अत्यंत विलंब से की गई है । यह घटना तारीख 21 जनवरी, 2006 की देर रात्रि में घटित हुई है और यह घटना 22 जनवरी, 2006 को 2.30 बजे पूर्वाह्न तक चली होगी । शिकायतकर्ता अपनी छोटी बहिन और उसके अप्राप्तवय पुत्र तथा भाग्यजॉय रियंग के साथ घर पर मौजूद थी । यह उल्लेखनीय है

कि अभिलेख पर एक दस्तावेज (प्रदर्श-3) है जो कि उपखंड पुलिस अधिकारी, लोंगथराई वैली, उपखंड, धलाई, त्रिपुरा को दी गई हाथ से लिखी हुई एक शिकायत है और यह प्रतीत होता है कि इस शिकायत की 23 जनवरी, 2006 को क्रम सं. 366 पर प्रविष्टि की गई है । यह शिकायत तारीख 23 जनवरी, 2006 को ही पुलिस अधीक्षक (आर. एस. वी.), को सूचनार्थ तथा आगे निर्देश दिए जाने के लिए अग्रेषित कर दी गई किन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि किसने इस दस्तावेज को अग्रेषित किया । अतः, प्रथम शिकायत 23 जनवरी, 2006 को दर्ज कराई । दुर्भाग्यवश, चूंकि अभियुक्त पुलिस पदधारी थे इसलिए शिकायत (प्रदर्श-3) के आधार पर कोई भी कार्रवाई की जानी प्रतीत नहीं हुई और शिकायतकर्ता को न्यायालय में आवेदन करना पड़ा और इसके पश्चात् ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज हो सकी । मेरे मतानुसार, इस मामले में कोई विलंब नहीं है क्योंकि घटना तारीख 21/22 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी । आहत पुलिस पदधारियों के किए गए हमले से अभिघातग्रस्त हो सकती थी जबकि पुलिस पदधारियों का कर्तव्य नागरिकों की रक्षा करना है और इसीलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि विलंब स्पष्ट नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त, प्रथम शिकायत में ही यह उल्लेख किया गया है कि पुलिस पदधारियों ने शिकायतकर्ता और भाग्यजॉय रियंग को धमकी दी थी कि यदि उन्होंने इस मामले की जानकारी सार्वजनिक की तो उन्हें नुकसान भुगतना होगा । यह भी उल्लेखनीय है कि जो कुछ प्रदर्श-3 में कहा गया है वह सभी महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर शिकायत के अनुसार है । अतः शिकायत दर्ज कराने में वास्तव में कोई विलंब नहीं है, यह अत्यंत स्पष्ट है कि पुलिस थाने के पदधारियों ने अपने साथियों की संरक्षा करने का प्रयास किया है और इसीलिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज नहीं की जा रही थी ।

8. मामले के साक्ष्य पर विचार करने पर मेरा यह निष्कर्ष है कि आहत-शिकायतकर्ता ने अपने पक्षकथन का पूर्ण रूप से समर्थन किया है । तथापि, पहली पंक्ति में यह उल्लेख किया गया है कि घटना तारीख 18 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी । अन्यथा भी इस साक्षी का वृत्तांत ऐसा ही है जैसा उपखंड पुलिस अधिकारी (एसडीपीओ) तथा न्यायालय को दी गई पूर्ववर्ती शिकायत में उल्लेख किया गया था । इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि उसने नाम पट्टी से उस अधिकारी का नाम देखा था जो कि असितदास था और यह तथ्य पिछली दो शिकायतों में भी

उल्लिखित है । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि अभियुक्त असितदास को यह जानना था कि भाग्यजॉय आहत के मकान में उसके पति की अनुपस्थिति में क्यों ठहरा हुआ था । आहत ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि पुलिस पदधारी उसके मकान में आया और उसने भाग्यजॉय तथा उसको थप्पड़ मारे । इसके पश्चात्, असितदास के निर्देशानुसार कांस्टेबलों ने शिकायतकर्ता और भाग्यजॉय को बलपूर्वक एक साथ लिटा दिया और उनके फोटो खींचे और भाग्यजॉय से एक लाख रुपए की मांग की, अन्यथा यह फोटो शिकायतकर्ता के पति को दिखाए जाएंगे । इसके पश्चात्, कांस्टेबल भाग्यजॉय और आहत की बहिन को कमरे के बाहर ले गए और असितदास कमरे के भीतर ही रहा और उसने (कांस्टेबल) शिकायतकर्ता को प्रपीड़ित किया । उसने टेलीफोन नम्बर 94361**751 भी दे दिया । आहत ने यह कथन किया है कि उसे मोबाइल नम्बर के दो अंक याद नहीं हैं । तथापि, यह उल्लेख करना असंगत नहीं होगा कि प्रदर्श 3 में भी, जो तारीख 23 जनवरी, 2006 को एसडीपीओ लोंगथराई वैली को भेजा गया था, फोन नम्बर 9436134751 उल्लिखित था । मजिस्ट्रेट को भेजी गई शिकायत में भी यह नम्बर उल्लिखित है । यह उल्लेखनीय है कि मजिस्ट्रेट के समक्ष अभिलिखित इस साक्षी के कथन में यह उल्लेख किया गया था कि तारीख 18 जनवरी, 2006 से 22 जनवरी, 2006 के बीच उसका पति घर से बाहर गया हुआ था । प्रतिपरीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि आहत ने यह कथन किया है कि वह तारीख 23 जनवरी, 2006 को पुलिस थाने उस घटना के संबंध में शिकायत दर्ज कराने पुलिस थाने गई थी जो तारीख 18 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी ।

9. अभि. सा. 8 भाग्यजॉय रियंग है । वह लोक निर्माण विभाग, मनुघाट के अधीन जल संसाधन में एक कनिष्ठ अभियंता है । अभि. सा. 8 के अनुसार जनवरी, 2006 में वह जॉय बहादुर रियंग, जो कि एक ठेकेदार है, के घर गया था और जॉय बहादुर की अनुपस्थिति में उसके घर रात्रि में ठहरा था । आहत जो कि जॉय बहादुर की पत्नी है और आहत की छोटी बहिन घर में मौजूद थे । इस साक्षी के अनुसार, वे देर रात तक बातें करते रहे और इसके पश्चात् वह रात में वहीं ठहर गया चूंकि अंधकार के कारण वहां से जाने का उचित समय नहीं था । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि बड़े कमरे में एक पर्दा लगा दिया गया था और वह पर्दे के दूसरी ओर सोया था । लगभग 11 बजे अपराह्न में दरवाजे पर खटखटाने की

आवाज सुनाई दी, आहत ने दरवाजा खोला और पुलिस पदधारी अंदर आए और उनमें से एक असितदास था । इस साक्षी ने अन्यथा भी आहत के वृत्तांत का पूर्ण रूप से समर्थन किया है कि उन दोनों के साथ मारपीट की गई थी और उन्हें बलपूर्वक बिस्तर पर लिटाया गया था और उनके अश्लील फोटो पुलिस द्वारा खींचे गए थे । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि आहत ने बाद में उसे यह बताया था कि असितदास ने उसके साथ बलात्संग करने का प्रयास किया था और उसकी लज्जा भंग की है । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में सभी बातों से इनकार किया है ।

10. अभि. सा. 4 आहत की बहिन है । उसकी आयु लगभग 18/19 वर्ष है और इस साक्षी के अनुसार यह घटना 21 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी । इस साक्षी ने यह कथन किया है कि उसके जीजाजी घटना से दो दिन पूर्व घर से बाहर गए थे और उस समय वह अपने बहिन के साथ ठहरी हुई थी । रात्रि में दस बजे के पश्चात् पुलिस वालों ने दरवाजा खटखटाया । शिकायतकर्ता ने दरवाजा खोला और इसके पश्चात् तीन पुलिसकार्मिक घर के अंदर आए । इस साक्षी के अनुसार, वह द्वार के निकट खडी हुई थी और सबकुछ देख रही थी । उसकी मौजूदगी में पुलिस कार्मिक ने भाग्यजॉय को थप्पड़ मारा और उसकी बहिन को भी क्षति पहुंचाई । पुलिस कार्मिकों ने भाग्यजॉय और उसकी बहिन के अश्लील अवस्था में फोटो खींचे । उन्होंने भाग्यजॉय और आहत की बहिन के हस्ताक्षर दो कोरे कागजों पर लिए । इस साक्षी ने उस पुलिसकार्मिक को पहचान कर स्वपन पॉल बताया है । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि पुलिस पदधारियों के जाने के पश्चात् उसकी बहिन ने उसे बताया कि असितदास ने उसके साथ दुर्व्यवहार किया है और उसका शरीर स्पर्श किया है तथा उसके चेहरे पर चुम्बन लिए हैं और साथ ही उसके वस्त्र फाड़े हैं । इस साक्षी के अनुसार यह घटना तारीख 21 जनवरी, 2006 को घटित हुई थी ।

11. पति की परीक्षा अभि. सा. 3 के रूप में कराई गई है और उसका कथन इस सीमा तक सुसंगत है कि उसने यह बताया है कि वह अपने घर जब वापस आया तब उसकी पत्नी ने उसे बताया कि भाग्यजॉय रात्रि में घर पर ठहरा था और इसके पश्चात् पुलिस कार्मिक वहां आए और उन्होंने उपरोक्त रूप में कृत्य किया । इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि उसने और उसकी पत्नी ने एसडीपीओ के समक्ष शिकायत दर्ज कराई थी । मेरी राय में, अन्य साक्ष्य को निर्दिष्ट करना सुसंगत नहीं होगा ।

12. यह सत्य है कि आहत ने घटना की तारीख 18 जनवरी, 2006 बताई है किन्तु जैसाकि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है कि इससे मामले पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा । मात्र इस कारण से कि आहत ने घटना की तारीख गलत बताई है उसके संपूर्ण परिसाक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जा सकता जबकि इस तथ्य का समर्थन अन्य प्रत्यक्ष तथा दस्तावेजी साक्ष्य से भी होता है । मामले के तथ्यों का मूल्यांकन अभिलेख पर प्रस्तुत संपूर्ण साक्ष्य और सामग्री पर विचार करते हुए किया जाना चाहिए । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तथा एसडीपीओ को की गई शिकायत में घटना की तारीख 21 जनवरी, 2006 ठीक ही उल्लिखित की गई है । कथन में इस तारीख का उल्लेख 18 जनवरी, 2006 के रूप में किया गया है । वास्तव में, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी और लोक अभियोजक का यह कर्तव्य है कि वे आहत से उसी समय इस तारीख की पुष्टि करवाते । दुर्भाग्यवश, ऐसा नहीं किया जा सका । इस तथ्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि बहुत बार ऐसा होता है कि न्यायालय के वातावरण के भीतर आम नागरिक असामान्य महसूस करता है । आहत मात्र एक गृहणी है । वह आदिवासी महिला है । उसने अत्यंत मानसिक पीड़ा का सामना किया है । उसकी लज्जा पर ऐसे व्यक्तियों द्वारा हमला किया गया है जिनसे उसकी संरक्षा की अपेक्षा की जाती है । आहत के विरुद्ध अनैतिकता के अभिकथन भी किए गए हैं । उसे दुष्परिणामों की धमकी दी गई है । उसने पुलिस तथा न्यायालय के समक्ष लिखित शिकायत फाइल करने का साहस जुटाया । दुर्भाग्यवश, पुलिस पदधारियों ने तब तक कोई कार्रवाई नहीं की जब तक न्यायालय ने मामला पुलिस के समक्ष नहीं भेजा । इस साक्षी के कथन का मूल्यांकन इस संदर्भ में किया जाना चाहिए और जैसाकि विचारण न्यायालय जिसने इस साक्षी के हाव-भाव देखे हैं, द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है कि आहत का कथन विश्वासोत्पादक है । उसका कथन इस घटना के ढाई वर्ष पश्चात् अभिलिखित किया गया है और अभियुक्त को मात्र इस आधार पर नहीं छोड़ा जा सकता है कि आहत ने तारीख बताने पर भूल की है ।

13. इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा कि तारीख 23 जनवरी, 2006 को फाइल की गई शिकायत में अभियुक्त असितदास का फोन नम्बर दिया गया था । अभि. सा. 7, जिसने आरंभ में इस मामले का अन्वेषण किया था, इत्तिलाकर्ता के फटे वस्त्र अभिगृहीत किए और उसने एक कागज का टुकड़ा, जिस पर मोबाइल नं. 9436135745 लिखा हुआ

था, भी अभिगृहीत किया । यह नम्बर अभियुक्त असितदास का है । संभवतः, यह साबित नहीं किया गया है कि यह नम्बर उप-निरीक्षक असितदास द्वारा लिखा गया था किंतु यह स्पष्ट है कि यह फोन नम्बर उसी का है । आहत को असितदास के नम्बर का पता कैसे चला यह महत्वपूर्ण है क्योंकि किसी भी पक्षकार ने यह नहीं कहा है कि आहत और असितदास एक दूसरे को घटना के पूर्व से जानते थे । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेखनीय है कि अन्वेषण के दौरान अभिलेख पर रोजनामचे में की गई दो प्रविष्टियां साबित की गई हैं जिनमें से एक प्रविष्टि सं. 990 तारीख 21 जनवरी, 2006 को असितदास द्वारा की गई थी और इस प्रविष्टि में यह उल्लेख किया गया है कि असितदास 10.30 बजे अपराह्न में गश्त पर कांस्टेबल स्वपन पॉल और एस पी ओ अमित डे के साथ पैदल गया था और एक अन्य प्रविष्टि तारीख 22 जनवरी, 2006 को 2.30 बजे पूर्वाह्न में की गई है जिसकी सं. 993 है और इसमें इन पुलिसकार्मिकों के वापस आने का उल्लेख है । अतः, यह बात पूर्णतया साबित हो गई है कि उप-निरीक्षक असितदास अन्य दो अभियुक्त स्वपन पॉल और अमित डे के साथ गश्त पर गया था और अगले दिन प्रातःकाल वापस आया था ।

14. उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए, हमारा यह स्पष्ट मत है कि आहत द्वारा दिए गए वृत्तांत का समर्थन भाग्यजॉय रियंग, आहत की छोटी बहिन और उसके पति द्वारा होता है जो कि पूर्णतया सही है । पुलिस पदधारियों का किसी भी नागरिक के मकान में प्रवेश करने का कोई औचित्य नहीं था वह भी रात्रि में और बिना किसी तलाशी वारंट के और यदि तलाशी वारंट प्राप्त करने का समय नहीं था तब इस संबंध में ऐसा कोई कारण होना चाहिए था कि उन्होंने किसी नागरिक के मकान में प्रवेश क्यों किया । पुलिस बल का कर्तव्य नैतिकता पर नजर रखना नहीं है । भाग्यजॉय रियंग आहत के मकान में क्या कर रहा था इससे पुलिस का कोई लेना देना नहीं था । अतः, हमारा स्पष्ट रूप से यह मत है कि पुलिस पदधारियों ने आहत के मकान में आपराधिक आशय से प्रवेश किया था । आहत को उत्पीड़ित किया गया है और दंड संहिता की धारा 354 के अधीन अपराध साबित हो गया है । यह भी साबित हो गया है कि उद्दीपन कारित किया गया है, अतः हमें अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपीलों को खारिज करने में कोई संकोच नहीं है ।

15. स्वपन पॉल और अमित डे की ओर से यह दलील दी गई है कि इन दोनों अभियुक्तों की समुचित रूप से शनाख्त नहीं की गई है और कोई

भी शनाख्त परेड नहीं कराई गई है और उन पर अधिरोपित दंडादेश अत्यधिक है । यह सत्य है कि पहली दो शिकायतों में इन दोनों पुलिसकार्मिकों की शनाख्त नहीं की गई थी । यह भी सत्य है कि आम तौर पर शनाख्त परेड कराई जानी चाहिए । तथापि, इस न्यायालय ने इस सत्य को अनदेखा नहीं किया है कि अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री से यह स्पष्ट हो गया है कि पुलिस पदधारी अभियुक्तों को बचाने का प्रयास कर रहे थे और अन्वेषण के मामले में पुलिस द्वारा की गई कमी से आहत और समाज को हानि नहीं पहुंचनी चाहिए । स्वपन पॉल और अमित डे रोजनामचे के अनुसार असितदास के साथ थे और वे अगली सुबह असितदास के साथ वापस आए थे । अतः, असितदास के साथ इन दो पदधारियों के सिवाय अन्य कोई और नहीं हो सकता था । इन पदधारियों की शनाख्त आहत और अन्य साक्षियों द्वारा न्यायालय में की गई है । हमारे मतानुसार, वर्तमान मामले में कोई भी दयादृष्टि से काम नहीं लिया जा सकता क्योंकि विधि के संरक्षकों ने ही विधि का अतिक्रमण किया है ।

16. इस निर्णय की एक प्रति पुलिस महानिदेशक को भेजी जाएगी जो यह जांच करेंगे कि उपखंड पुलिस अधिकारी, लोंगथराई वैली उपखंड मनुघाट, ढलाई को दी गई लिखित शिकायत (प्रदर्श-3) के प्राप्त होने पर पृथक् इत्तिला रिपोर्ट क्यों दर्ज नहीं की जानी चाहिए और वह पुलिस अधीक्षक (आर एस वी) ढलाई को तारीख 23 जनवरी, 2006 को क्यों न अग्रेषित कर दी जाए । पुलिस महानिदेशक जांच बैठाएंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि संबद्ध पुलिस पदधारियों के विरुद्ध समुचित कार्यवाही की गई है या नहीं । तथापि, जांच संस्थित किए जाने के पूर्व पुलिस महानिदेशक तथ्यों का सत्यापन करेंगे और इस न्यायालय को 5 मई, 2015 को या उसके पूर्व अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे । महारजिस्ट्रार को निदेश दिया जाता है कि इस निर्णय की एक प्रति प्रदर्श-3 की प्रति के साथ, जो कि विचारण न्यायालय की फाइल के पृष्ठ सं. 30 और 31 पर है, भेजी जाए ।

निचले न्यायालय का अभिलेख तत्काल वापस भेजा जाए ।

अपीलें खारिज की गईं ।

अस./आर्य

कन्हैया रामचंद थावरानी

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

तारीख 24 अक्तूबर, 2016

न्यायमूर्ति एस. बी. शुक्रे

प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 (1956 का 42) – धारा 23, 25, 26, 26ख और 26घ [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2(ग) और अध्याय 15, 16] – धारणा उपबंध द्वारा धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध की संज्ञेयता – किसी भी स्थिति में प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि यह धारा पुलिस को धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों के मामलों में भी अन्वेषण करने की शक्ति मात्र इस कारणवश प्रदान करती है कि दंडनीय अपराधों को संज्ञेय अपराध के रूप में प्रतीत किया जाता है जिसके लिए पुलिस अधिकारी बिना वारंट गिरफ्तार कर सकता है – संज्ञेय अपराध के मामले में बिना वारंट गिरफ्तार करने के प्राधिकार और मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना अन्वेषण करने की शक्ति के मध्य दृश्यमान भिन्नता होती है ।

प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 – धारा 23, 25 और 26 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2(ग) और अध्याय 15, 16] – धारणा उपबंध द्वारा धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध की संज्ञेयता – प्रतिभूति अधिनियम 23 के अधीन दंडनीय अपराध के कारण की शिकायत केवल केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड, मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज या किसी व्यक्ति जो धारा 26 के अधीन उल्लिखित प्राधिकारियों की कोटि के अंतर्गत आता है, द्वारा फाइल की जा सकती ।

प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 – धारा 23, 25 और 26 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2(ग) और अध्याय 15, 16] – धारणा उपबंध द्वारा धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध की संज्ञेयता – प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 द्वारा अनुध्यात प्राधिकारी या किसी व्यक्ति द्वारा शिकायत का फाइल किया जाना अनिवार्य शर्त के रूप में विधि को गति प्रदान करता है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि आवेदक किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज का रजिस्ट्रीकृत सदस्य नहीं था और न ही प्रतिभूतियों में संव्यवहार करने के लिए उसके पक्ष में केन्द्रीय सरकार द्वारा कोई डिक्री जारी की गई थी फिर भी उसने प्रतिभूतियों में संव्यवहार किया और इस प्रकार शेयरों में व्यापार का अवैध कारबार किया । आवेदक एक ऐसे स्थान पर कारबार कर रहा था जो मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज नहीं था और उसने उस स्थान का प्रयोग 1956 के प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् "प्रतिभूति अधिनियम" कहा गया है) के उपबंधों के अतिलंघन में प्रतिभूतियों में विभिन्न प्रकार की संविदाओं में प्रविष्ट होने और उनका पालन करने के प्रयोजनार्थ किया । आवेदक ने अवैध शेयर व्यापार में अंतर्वलित होने के द्वारा सरकार, विभिन्न प्राधिकारियों और व्यक्तियों जो प्रतिभूति संव्यवहारों में हिस्सेदार थे और हित रखते थे, के साथ छल करके सरकार को राजस्व का भारी नुकसान कराया । पुलिस के अनुसार आवेदक द्वारा ये क्रियाकलाप तीन विभिन्न स्थानों पर किए गए और तद्नुसार आवेदक के विरुद्ध तीन भिन्न अपराध रजिस्ट्रीकृत किए गए । आवेदक ने इन तीनों मामलों में अग्रिम जमानत प्राप्त करने के लिए तीन पृथक्-पृथक् जमानत आवेदन इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जिनको समान (एक ही) आदेश द्वारा मंजूर किया गया । जमानत आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – किसी भी स्थिति में प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि यह धारा पुलिस को धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों के मामलों में भी अन्वेषण करने की शक्ति मात्र इस कारणवश प्रदान करती है कि इन अपराधों को संज्ञेय अपराध के रूप में प्रतीत किया जाता है जिसके लिए पुलिस अधिकारी बिना वारंट गिरफ्तार कर सकता है, बिल्कुल वैसे ही जैसे धारा 26 के अधीन फाइल की गई शिकायत के मामले में । किसी संज्ञेय अपराध के मामले में बिना वारंट गिरफ्तार करने के प्राधिकार और किसी संज्ञेय अपराध के मामले में मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना अन्वेषण करने की शक्ति के मध्य दृश्यमान भिन्नता होती है । धारा 25 प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय किसी अपराध को संज्ञेय बनाती है और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं । यह धारा इन अपराधों में से संबंधित किसी भी मामले को संज्ञेय नहीं बनाती । मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 के अधीन अन्वेषण करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति किसी संज्ञेय मामले

के संबंध में होती है और यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन किसी संज्ञेय अपराध के कारण से संबंधित सूचना से उत्पन्न होती है । यह शक्ति पूर्णता को तब प्राप्त होती है जब या तो धारा 169 के अधीन कोई रिपोर्ट या धारा 173(2) के अधीन पुलिस रिपोर्ट मजिस्ट्रेट के समक्ष फाइल की जाती है । हमने पहले भी देखा है कि विधि को प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अधीन किसी सक्षम प्राधिकारी या प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में नामित किसी व्यक्ति द्वारा फाइल की गई शिकायत पर गति प्रदान की जा सकती है और इस प्रकार की शिकायत में पुलिस रिपोर्ट सम्मिलित नहीं होती । इसलिए किसी पुलिस अधिकारी द्वारा संज्ञेय अपराध के कारण के संबंध में कोई सूचना प्राप्त करने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अनुध्यात है और यदि ऐसी कोई सूचना नहीं दी जाती, तो इस बात का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता कि किसी पुलिस अधिकारी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 के अधीन इस प्रकार के किसी अपराध के मामले में अन्वेषण करने का कोई प्राधिकार प्राप्त होगा । यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) के स्पष्टीकारण के अनुसार "शिकायत" को परिभाषित करते हुए किसी पुलिस अधिकारी द्वारा तैयार की गई किसी रिपोर्ट को परिवाद केवल तब प्रतीत किया जाता है जब यह अन्वेषण के पश्चात् किसी असंज्ञेय अपराध के कारण का प्रकटीकरण करती है । तथापि, प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 इसी अधिनियम की धारा 23 के अधीन कारित किसी अपराध को संज्ञेय बनाती है । इसलिए, किसी भी दृष्टिकोण से यह नहीं कहा जा सकता कि पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण किया जा सकता है और अन्वेषण के पश्चात् पुलिस अधिकारी द्वारा जो फाइल किया जाएगा उसको शिकायत प्रतीत किया जा सकता है, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) के स्पष्टीकारण में अभिकथित है । इसलिए, उन शर्तों, जिन पर पहले भी चर्चा की गई है, को पूरा किए बिना पुलिस अधिकारी द्वारा किया गया अन्वेषण प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों की योजना के अंतर्गत पूर्णरूपेण अमान्य होगा । तथापि, यदि इन शर्तों को पूरा कर दिया जाता है, तो निश्चित रूप से अन्वेषण किया जा सकता है, गिरफ्तारी की जा सकती है और अन्वेषण के अंतिम परिणाम को उपदर्शित करने वाली रिपोर्ट भी फाइल की जा सकती है जिसको विशेष न्यायालय के समक्ष फाइल किया जाएगा जिससे कि वह उस पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 या 204 में से किसी के भी अनुसार कार्यवाही कर सके । विद्वान् लोक अभियोजक

ने भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड द्वारा जारी मार्गदर्शक नियम पुस्तक का अवलंब लिया जिसमें अनेक अनुतोषों में एक अनुदेश यह है कि चूंकि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध धारा 25 के अनुसार संज्ञेय होते हैं, पुलिस अन्वेषण कर सकती है । मैं यहां तक कहना चाहता हूं कि ऐसा कोई भी अनुदेश विधि की मात्र संकल्पना होगी जिसका पालन भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड द्वारा किया जाएगा, जो धारा 26 के अधीन एक शिकायत हो सकती है । एक शिकायतकर्ता की विधि की संकल्पना विधि का स्थान नहीं ले सकती । मार्गदर्शक नियम पुस्तिका का विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा लिया गया अवलंब मेरे विचार में गलत है । आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल और साथ ही विद्वान् लोक अभियोजक, दोनों ने अपनी-अपनी दलीलों के विभिन्न आधारों के समर्थन में एक मामले का अवलंब लिया । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा इस मामले का अवलंब इस सिद्धांत के आधार पर लिया गया है कि प्रतिभूति अधिनियम एक विशेष कानून होने के कारण **दंड प्रक्रिया संहिता** के उपबंधों पर अभिभावी होगा, जब दोनों कानूनों के मध्य कोई टकराव उत्पन्न हो और विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा इस मामले का अवलंब माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति के आधार पर लिया गया है जो इस मामले के पैरा 25 में दर्शित है और जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चूंकि 1994 के **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** किसी समुचित प्राधिकारी द्वारा की गई शिकायत की अनुपस्थिति में संज्ञान लिए जाने को प्रतिषिद्ध करता है और यद्यपि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अन्वेषण अभिकरण की समस्त शक्तियां प्राप्त हैं, फिर भी इसको समुचित प्राधिकारी के समक्ष शिकायत याचिका फाइल करनी होगी और न कि **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 22 की अपेक्षाओं के सामंजस्य में कोई पुलिस रिपोर्ट । मैं नहीं समझता कि **दंड प्रक्रिया संहिता** के उपबंधों के ऊपर विशेष कानून के अभिभावी होने के सिद्धांत के बारे में कोई टकराव इस सीमा तक हो सकता है कि वे (विशेष कानून के उपबंध) **दंड प्रक्रिया संहिता** के उपबंधों को उपांतरित या प्रतिस्थापित कर सकें । किंतु वह सिद्धांत जिसको विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा पैरा 25 में माननीय उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्ति से निष्कर्षित किया है, को उससे वास्तव में प्रकट होने वाले सिद्धांत के रूप में नहीं देखा जा सकता । चूंकि उन मताभिव्यक्तियों को उस अधिनियम में समाविष्ट विनिर्दिष्ट उपबंधों के प्रकाश में किया गया है,

विशेष रूप से **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 13, जो उपबंध स्पष्टतः प्रतिभूति अधिनियम में अनुपस्थित है । **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 13 अभिव्यक्त रूप से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अन्वेषण करने का प्राधिकार प्रदान करती है । इसलिए माननीय उच्चतम न्यायालय ने धारा 22, जो अधिकथित करती है कि न्यायालय उस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान केवल तभी लेगा जब उस अधिनियम की धारा 13 के उपबंधों के अधीन समुचित प्राधिकारी द्वारा कोई शिकायत फाइल की जाएगी, के उपबंधों का समाधान करते हुए अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो अन्वेषण कर सकता है, फिर भी वह न्यायालय के समक्ष अन्वेषण की समाप्ति पर जो फाइल कर सकता है, वह मात्र शिकायत याचिका होगी और न कि पुलिस रिपोर्ट । जैसाकि पहले अभिकथित किया गया है, **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 13 के समरूप उपबंध प्रतिभूति अधिनियम में उनुपस्थित है और इसलिए माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा एक मामले में की गई उपरोक्त मताभिव्यक्ति विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा अंगीकृत दलीलों की कोई सहायता नहीं करती । यदि एक बार यह निष्कर्ष निकलता है कि पुलिस अधिकारी द्वारा कोई अन्वेषण आरंभ नहीं किया जा सकता जब तक कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के निबंधनों के अनुसार शिकायत फाइल नहीं कर दी जाती और जब तक कि सक्षम न्यायालय द्वारा उसको प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23(1) के विभिन्न खंडों के अधीन कारित अभिकथित अपराधों के संबंध में अन्वेषण करने के प्रयोजनार्थ अभिव्यक्त रूप से प्राधिकृत नहीं कर दिया जाता, पुलिस अधिकारी द्वारा कोई भी गिरफ्तारी नहीं की जा सकती । इस मामले में अभी तक प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के निबंधनों के अनुसार कोई शिकायत फाइल नहीं की गई है । इसलिए जहां तक अपराध का संबंध है, आवेदक पुष्टि के साथ अग्रिम जमानत पर निर्मुक्त किए जाने का हकदार नहीं होगा । जहां तक भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के अधीन रजिस्ट्रीकृत अपराध का संबंध है, मैं स्पष्ट करता हूं कि अभी तक अभिलेख पर कोई ऐसी सामग्री उपलब्ध नहीं हो पाई है जिससे सभी या किसी अपराध में आवेदक की प्रथमदृष्ट्या संलिप्तता दर्शित हो सके । इस बाबत कोई अभिकथन भी अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है कि किसी की राशि या संपत्ति को बेईमानीपूर्वक हड़पे जाने के आशय से भ्रमित किया गया हो ।

अभिलेख पर ऐसा कुछ भी उपलब्ध नहीं है जिससे यह दर्शित हो सके कि आवेदक द्वारा कुछ दस्तावेजों को प्रथमदृष्ट्या तैयार किया गया । वास्तव में इन आधारों पर अभियोजन की कमी के बारे में अधिक विवाद नहीं उठाया गया है । इसलिए, आवेदक इन अपराधों के बाबत भी पुष्टि के साथ अग्रिम जमानत का अनुतोष प्राप्त करने का हकदार है । (पैरा 32, 33, 34, 35, 40 और 41)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	2016 इलाहाबाद एम. आर. (क्रिमिनल) 963 : **डा. संध्या अरुण कुलकर्णी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** ;	36,37,38
[2015]	(2015) 9 एस. सी. सी. 609 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2757 : **एस. आर. सुकुमार** बनाम **एस. सुनाद रघुराम** ;	8,21
[2009]	(2009) 7 एस. सी. सी. 526 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2763 : **जीवन कुमार राउत और एक अन्य** बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ;	7,8,34,35
[2001]	(2001) 4 एस. सी. सी. 9 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 1512 : **धनंजय रेड्डी** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	14
[1972]	ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 1863 : **अमल चंद चक्रवर्ती** बनाम **उत्पाद शुल्क कलक्टर, त्रिपुरा सरकार और अन्य** ;	26
[1960]	ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 1080 : **कवलप्पाड़ा कोट्टाराथिल कोचुनी अर्थात् मूपील नायर और अन्य** बनाम **मद्रास और केरल राज्य और अन्य** ।	25

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2016 का दांडिक आवेदन (अंतिम जमानत आवेदन) सं. 445.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 के अधीन अंतिम जमानत आवेदन ।

आवेदक की ओर से सर्वश्री अविनाश गुप्ता (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और आकाश गुप्ता

गैर-आवेदक की ओर से श्रीमती भारती डांगरे (लोक अभियोजक) और श्री एस. एस. डोयफोडे

निर्णय

ये तीनों जमानत आवेदन समान (एक ही) आदेश द्वारा निस्तारित किए जा रहे हैं चूंकि दो पुलिस थानों की अधिकारिता के अंतर्गत कारित तीन अपराधों में आवेदक के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत अपराध समान अभिकथनों से उद्भूत हुए हैं और इन आवेदनों में समान आधारों का आश्रय लिया गया है ।

2. आवेदक के विरुद्ध अभिकथन यह है कि आवेदक किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज का रजिस्ट्रीकृत सदस्य नहीं है और न ही प्रतिभूतियों में संव्यवहार करने के लिए उसके पक्ष में केन्द्रीय सरकार द्वारा कोई लाइसेंस (अनुज्ञप्ति) जारी किया गया है और फिर भी उसने प्रतिभूतियों में संव्यवहार किए और इस प्रकार शेयरों में व्यापार का अवैध कारबार किया । यह भी अभिकथित किया गया है कि आवेदक ऐसे स्थान पर कारबार कर रहा था जो मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज नहीं था और उसने उस स्थान का प्रयोग 1956 के प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् "प्रतिभूति अधिनियम" कहा गया है) के उपबंधों के अतिलंघन में प्रतिभूतियों में विभिन्न प्रकार की संविदाओं में प्रविष्ट होने और उनका पालन करने के प्रयोजनार्थ किया । आगे यह अभिकथन किया गया है आवेदक ने अवैध शेयर व्यपार में अंतर्वलित होने के द्वारा सरकार, विभिन्न प्राधिकारियों और व्यक्तियों जो प्रतिभूति संव्यवहारों में हिस्सेदार थे और उनमें हित रखते थे, के साथ छल करके सरकार को राजस्व का भारी नुकसान कराया । पुलिस के अनुसार आवेदक द्वारा ये क्रियाकलाप तीन विभिन्न स्थानों पर किए गए जो तहसील पुलिस थाना और लकड़गंज पुलिस थाना की अधिकारिता के अंतर्गत आते हैं और तद्नुसार आवेदक के विरुद्ध तीन विभिन्न अपराध रजिस्ट्रीकृत किए गए । तहसील पुलिस थाना से संबंधित अपराध 2016 का अपराध सं. 102 है जो भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 465, 468, 471, 420 और 120ख के अधीन दंडनीय अपराध हैं और प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23(1) के अधीन भी दंडनीय अपराध है और लकड़गंज पुलिस थाना से संबंधित अपराध 2016 के अपराध सं. 153 और 155 हैं जो भारतीय दंड संहिता की धाराओं 419, 420, 406, 461, 471, 477क और 120ख सपठित धारा 34 के अधीन

दंडनीय अपराध हैं और साथ ही प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23(1) के अधीन भी दंडनीय अपराध हैं । 2016 के जमानत आवेदन सं. 445, 446 और 447 इन तीनों भिन्न अपराधों से अलग-अलग रूप से संबंधित है ।

3. मैंने आवेदक के विद्वान् काउंसेल श्री अविनाश गुप्ता और विद्वान् लोक अभियोजक श्रीमती भारती डांगरे को सुना जिन्होंने इस मामले में अंतर्वलित विधि के बिन्दुओं पर दलीलें दीं और विद्वान् लोक अभियोजक की सहायता करने वाले विद्वान् सहायक लोक अभियोजक श्री एस. एस. डोयफोडे को मामले के तथ्यात्मक पहलुओं पर सुना । मैंने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सहित मामला डायरी और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया ।

4. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री गुप्ता ने एक दलील दी है जो आवेदक के विरुद्ध रजिस्ट्रीकृत अपराधों के आत्यंतिक आधार पर प्रहार करता है । इस दलील का केन्द्र बिन्दु यह है कि पुलिस द्वारा किसी सक्षम प्राधिकारी या व्यक्ति द्वारा कोई शिकायत फाइल न किए जाने के कारण कोई अन्वेषण नहीं किया जा सकता था और यदि अन्वेषण किया भी गया, तो इसके परिणामस्वरूप कोई पुलिस रिपोर्ट या अंतिम रिपोर्ट, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन अनुध्यात है, नहीं फाइल की जा सकती थी । उनकी दलील का अगला भाग यह है कि भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत कोई प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं बनता । मैं आवश्यक समझता हूं कि उनकी दलीलों के सारांश को आगे आने वाले पैराग्राफों में प्रत्युत्पादित किया जाए ।

5. जहां तक भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत अपराधों का संबंध है, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने निवेदन किया है कि आवेदक के विरुद्ध अभिकथित अपराध जो भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के अधीन दंडनीय है, बिल्कुल भी नहीं बनते चूंकि अभिलेख पर ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह दर्शित होता हो कि किसी को कोई प्रोपर्टी दिए जाने का वायदा किए जाने के द्वारा धोखा दिया गया या किसी से कोई संपत्ति प्रतिधारित करने के लिए कोई सहमति ली गई और न ही इस प्रकार का कोई अभिकथन किया गया है कि असत्य दस्तावेज सृजित किए गए और उनको असली दस्तावेजों के रूप में प्रयोग किया गया । उन्होंने आगे निवेदन किया कि ऐसा कोई भी अभिकथन नहीं किया गया है कि आवेदक द्वारा किसी विशिष्ट खाते का जाली हिसाब तैयार किया गया ।

6. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23(1) के

विभिन्न खंडों के अधीन शेयरों में अवैध व्यापार के बाबत दंडनीय अपराध के बारे में निवेदन किया कि प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण अननुज्ञेय है जब तक कि कोई शिकायत न फाइल की गई हो और उसका संज्ञान विशेष न्यायालय द्वारा प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 सपठित धारा 26ख के अधीन न लिया गया हो । उन्होंने निवेदन किया कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26(1) के अधीन शिकायत केवल उसमें उल्लिखित प्राधिकारियों द्वारा फाइल की जा सकती है या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा फाइल की जा सकती है जो उन प्राधिकारियों की कोटि के अंतर्गत आता है जो एक साथ मिलकर प्रभावित पक्ष बन जाते हैं । उन्होंने आगे निवेदन किया कि ये प्राधिकारी हैं केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (जिसको इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "सेबी" कहा गया है) या कोई मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज । उन्होंने आगे निवेदन किया कि धारा 26(1) किसी व्यक्ति द्वारा शिकायत फाइल किए जाने की अनुज्ञा भी प्रदान करती है और जैसाकि अभिव्यक्ति "किसी व्यक्ति द्वारा" के पहले विभिन्न प्राधिकारियों जैसे कि सरकार या भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड जो उसी कोटि (विभिन्न प्राधिकारियों) के अंतर्गत आते हैं, को जोड़ा गया है, अभिव्यक्ति "किसी व्यक्ति द्वारा" को उसके पहले आने वाले शब्द द्वारा व्यक्त अर्थ द्वारा Ejusdem Generis (उसी किस्म या प्रकार) के सिद्धांत को लागू किए जाने के द्वारा समझा जाएगा । उन्होंने आगे निवेदन किया कि ऐसा व्यक्ति कोई रजिस्ट्रीकृत या मान्यता प्राप्त दलाल, समाशोधन ग्रह का सदस्य, सूचीबद्ध कंपनी, निक्षेपागार, कोई निकाय जिसको शेयरों के अभौतिकीकरण के कार्य का जिम्मा दिया गया है, सूचीबद्ध म्यूचुअल फंड के प्रबंधक, शेयरों में अवैध व्यापार के कारण हानि बर्दाश्त करने वाले व्यक्तिगत शेयर होल्डर और इसी प्रकार के अन्य व्यक्ति हो सकते हैं । उन्होंने आगे निवेदन किया कि कोई पुलिस अधिकारी या कोई पुलिस हेड कांस्टेबल अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" के अर्थान्तर्गत कभी नहीं आ सकते और वर्तमान मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट या तो पुलिस हेड कांस्टेबल या नायक पुलिस कांस्टेबल द्वारा फाइल की गई है जिनको विधि की दृष्टि में कोई प्राधिकार प्राप्त नहीं है ।

7. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 के अधीन धारा 23 के अधीन दंडनीय किसी अपराध को दंड प्रक्रिया संहिता के अर्थान्तर्गत धारणा उपबंध के द्वारा संज्ञेय अपराध बना दिया गया है और यह धारा किसी पुलिस अधिकारी को बिना वारंट गिरफ्तार करने की मात्र सीमित शक्ति प्रदान करती है, जैसाकि दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 2(ग) में परिभाषित किया गया है और वह भी जब धारा 26(1) की अत्यंत आधारी शर्तें पूरी होती हों अर्थात् इस धारा के अंतर्गत अनुध्यात कोई शिकायत फाइल की गई हो । उन्होंने आगे निवेदन किया कि धारा 25 के उपबंध धारा 26 के उपबंधों से स्वतंत्र होकर नहीं पढ़े जा सकते । उन्होंने आगे निवेदन किया कि यदि यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि मात्र इस कारणवश कि धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध को संज्ञेय अपराध प्रतीत कर लिया गया है और पुलिस अधिकारी न केवल गिरफ्तार कर सकता है बल्कि अन्वेषण भी कर सकता है, इससे एक अनियमित स्थिति उत्पन्न होगी जहां एक तरफ तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 के अधीन पुलिस अन्वेषण हो रहा होगा वहीं दूसरी तरफ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन कोई पुलिस रिपोर्ट नहीं होगी क्योंकि धारा 26(1) के अधीन न्यायालय अपराध का संज्ञान केवल तभी ले सकता है जब उसमें नामित सक्षम व्यक्ति द्वारा शिकायत की गई हो और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) के अधीन शिकायत में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन फाइल की गई पुलिस रिपोर्ट सम्मिलित नहीं होती । इसलिए विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि इन दोनों धाराओं का सामंजस्यपूर्ण निर्वचन किया जाना चाहिए और ऐसा किए जाने के द्वारा यह देखा जा सकता है कि पुलिस अधिकारी बिना वारंट के गिरफ्तारी कर सकता है और अन्वेषण केवल तभी कर सकता है जब प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26(1) के अधीन शिकायत सक्षम व्यक्ति द्वारा फाइल की गई हो । इस दलील के समर्थन में उन्होंने **जीवन कुमार राउत और एक अन्य** बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो**[1] वाले मामले का अवलंब लिया ।

8. विद्वान् लोक अभियोजक श्रीमती भारती डांगरे ने निवेदन किया कि यद्यपि धारा 26(1) की आज्ञा है कि यदि न्यायालय द्वारा प्रतिभूति अधिनियम के अंतर्गत कारित किसी अपराध का संज्ञान लिया जाना है तो शिकायत सक्षम व्यक्ति द्वारा फाइल की जानी चाहिए, संज्ञान लिए जाने का प्रश्न बहुत बाद में उद्भूत होगा जब अन्वेषण समाप्त हो जाएगा और पुलिस रिपोर्ट फाइल करने का समय आ जाएगा । उन्होंने आगे निवेदन किया कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 और 26 अलग-अलग क्षेत्रों में क्रियान्वित होती हैं और इसलिए उनको स्वतंत्र रूप से पढ़ा और समझा जाना चाहिए । उन्होंने आगे निवेदन किया कि जबकि धारा 25 अपराधों को

---

[1] (2009) 7 एस. सी. सी. 526 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2763.

प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत संज्ञेय अपराध के रूप में दंडनीय बनाती है और इस प्रकार पुलिस को बिना वारंट के गिरफ्तार करने का प्राधिकार प्रदान करती है, इसका अर्थ यह हुआ कि पुलिस अपराध को रजिस्ट्रीकृत कर सकती है और उसका अन्वेषण कर सकती है, धारा 26 सक्षम व्यक्ति द्वारा फाइल की गई शिकायत के आधार पर न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लिए जाने के बारे में उपबंध करती है तद्नुसार यह स्पष्ट करती है कि पुलिस अन्वेषण की समाप्ति पर रिपोर्ट फाइल किए जाने के समय प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26(1) में नामित किसी भी प्राधिकारी या व्यक्ति के द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट फाइल करने के बजाय अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान एकत्रित सामग्री के आधार पर शिकायत फाइल कर सकती है । उन्होंने निवेदन किया कि अंततः स्थिरीकृत विधिक स्थिति के अनुसार मात्र दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 के अधीन किसी अपराध का संज्ञान लिए जाने का अर्थ न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा विधि के उपबंधों के अंतर्गत अपराधी के विरुद्ध कार्रवाई किए जाने के प्रयोजनार्थ शिकायत की अंतर्वस्तु पर विवेक का प्रयोग किया जाना होगा और यह प्रक्रम केवल तब आएगा जब अन्वेषण समाप्त हो जाएगा शिकायत प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26(1) के अधीन विधि अनुसार फाइल की जाएगी । उन्होंने आगे निवेदन किया कि उस समय तक प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 द्वारा पुलिस को प्रदत्त शक्ति को ध्यान में रखते हुए पुलिस न केवल गिरफ्तार कर सकती है बल्कि अपराध के अन्वेषण के लिए आगे की कार्रवाई भी कर सकती है । उन्होंने अपनी दलीलों के समर्थन में **एस. आर. सुकुमार** बनाम **एस. सुनाद रघुराम**[1] वाले मामले का अवलंब लिया । उन्होंने भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड द्वारा जारी मार्गदर्शक नियम को भी निर्दिष्ट किया, जिसकी एक प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की गई है, जिसमें भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड ने मत व्यक्त किया है कि चूंकि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 और धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों को संज्ञेय अपराध बनाती है, इन अपराधों का अन्वेषण राज्य विधि प्रवर्तन प्राधिकारी द्वारा भी किया जा सकता है । विद्वान् लोक अभियोजक ने **जीवन कुमार राउत** (उपरोक्त) वाले मामले का भी अवलंब लिया और निवेदन किया कि यदि अन्वेषण अभिकारण को पुलिस रिपोर्ट फाइल करने से अभिव्यक्त रूप से और कानूनी रूप से प्रतिषिद्ध कर दिया गया है, तो वह सक्षम प्राधिकारी या प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26(1) के अधीन अनुध्यात किसी व्यक्ति की

---

[1] (2015) 9 एस. सी. सी. 609 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2757.

सहायता से शिकायत याचिका सदैव फाइल कर सकती है ताकि धारा 26 की अपेक्षाओं का पालन पूर्ण रूप से हो जाए ।

9. विद्वान् सहायक लोक अभियोजक श्री एस. एस. डोयफोडे, जिन्होंने इस मामले के तथ्यात्मक पहलुओं पर विद्वान् लोक अभियोजक की सहायता की, निवेदन किया कि अन्वेषण अभिकरण द्वारा अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान पर्याप्त मात्रा में सामग्री एकत्रित की गई है जिससे यह दर्शित होता है कि आवेदक "सौदा साफ्टवेयर" का प्रयोग करने के द्वारा शेयरों के अवैध व्यापार में सक्रिय रूप से अंतर्वलित था, जिस व्यापार को सामान्य बोलचाल की भाषा में "डब्बा" व्यापार कहा जाता है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि यह अपराध प्रथमदृष्ट्या आवेदक द्वारा प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों का अतिलंघन किए जाने के द्वारा कारित किया गया है जो अधिनियम की धारा 23(1) के अधीन दंडनीय है और अभी तक किए गए अन्वेषण के आधार पर यह प्रकट होता है कि भारी रकम के कर, सेवा प्रभार, दलाली इत्यादि का अपवंचन शेयरों में अवैध व्यापार के द्वारा किया गया है जिसमें आवेदक अंतर्वलित था, जिसके कारण सरकार को भारी आर्थिक हानि कारित हुई है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि मामले के विभिन्न पहलुओं, जैसेकि किस प्रकार के शेयरों का अवैध रूप से व्यापार किया गया, अंतिम निपटारे के आंकड़े क्या थे, कितने व्यक्ति अंतर्वलित थे, क्या आवेदक ने प्रथमदृष्ट्या कोई अपराध कारित किया, का विस्तारपूर्वक अन्वेषण किया गया और जिसके जटिल परिणाम होंगे और बहुत कुछ अन्वेषण किया जाना अपेक्षित है और यह तब तक संभव नहीं होगा जब तक कि आवेदक का अभिरक्षा में लेकर पूछताछ नहीं की जाती । इन आधारों पर उन्होंने दलील दी कि आवेदक को सभी तीनों अपराधों में अग्रिम जमानत प्रदान न की जाए ।

10. इस मामले में अंतर्वलित विधिक बिन्दु संपूर्ण मामले की जड़ में जाते हैं और इसलिए मुझे प्राथमिकता के आधार पर ध्यान देना होगा और उनका समाधान करना होगा । अब मैं उन पर विचार करता हूं ।

11. प्रतिभूति अधिनियम को संपूर्ण रूप से पढ़े जाने पर कोई भी देख सकता है कि यह एक विशेष कानून है जो शेयरों या प्रतिभूतियों में कतिपय संव्यवहारों को नियंत्रित करने और इसके उपबंधों का अतिलंघन करने वालों को दंडित करने के लिए बखूबी अधिनियमित है । इसका उद्देश्य प्रतिभूतियों के कारबार को विनियमित किए जाने के द्वारा प्रतिभूतियों

में आवंछनीय संव्यवहारों को रोकना और इससे सहबद्ध मामलों के लिए उपबंधित करना है । इस प्रकार इसका उद्देश्य लोक राजकोष को राजस्व हानि रोकना है और साथ ही विभिन्न प्राधिकारियों, दलालों, सूचीबद्ध कंपनियों, व्यक्तिगत शेयर धारकों इत्यादि को किसी भी प्रकार की हानि को रोकना है । यह विशेष अधिनियमिति शेयरों या प्रतिभूतियों में अप्राधिकृत या अवैध संव्यवहारों को प्रतिषिद्ध और हतोत्साहित किए जाने के लिए एक सुविस्तृत तंत्र को सृजित करती है । प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 इसके उपबंधों के अतिलंघन के एक अवधि का कारावास विहित किए जाने के द्वारा जो 10 वर्ष तक विस्तारित हो सकता है या जुर्माना जो 25 करोड़ रुपए तक विस्तारित हो सकता है या दोनों के द्वारा दंडनीय हो सकता है, शास्तियां उपबंधित करती हैं । यह धारा कतिपय प्रक्रिया के लिए भी उपबंधित करती है जिसका अनुसरण धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध को रजिस्ट्रीकृत किए जाने और उसका संज्ञान लिए जाने के लिए होता है । जबकि इस अधिनियम की आज्ञा है कि धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान विशेष रूप से नामित प्राधिकारियों और व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई शिकायत पर ही लिया जा सकता है और वह भी इस अधिनियम के अंतर्गत स्थापित विशेष न्यायालयों द्वारा, किन्तु यदि अधिनियम की धारा 26 के अधीन अनुध्यात प्राधिकारियों या व्यक्तियों द्वारा कोई शिकायत फाइल नहीं की जाती तो यह अधिनियम अन्वेषण करने की पुलिस की शक्तियों पर मौन है । इस अधिनियम के अंतर्गत ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो पुलिस को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत करने और उस पर अन्वेषण करने की शक्ति अभिव्यक्त रूप से प्रदान करती हो, जैसेकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 और 156 के अधीन होता है । प्रतिभूति अधिनियम के ये लक्षण विलक्षण हैं और इस क्षेत्र में उन प्रश्नों, जिनका उत्तर दिए जाने की आवश्यकता है, के उत्पन्न होने के कारण अधिनियम के क्रियान्वयन में कुछ कठिनाइयां उत्पन्न करते हैं :–

(i) प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय किसी अपराध के कारण को अभिकथित करने वाली शिकायत कौन फाइल कर सकता है ?

(ii) क्या प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के अधीन अनुध्यात शिकायत का फाइल किया जाना विधि के अंतर्गत कार्रवाई सुनिश्चित किए जाने के लिए आवश्यक है ?

(iii) किन परिस्थितियों में पुलिस बिना वारंट के गिरफ्तारी कर सकती है ?

(iv) क्या पुलिस अन्वेषण कर सकती है और यदि ऐसा है तो कब ?

(v) उचित प्रक्रिया क्या है जिसका अनुसरण प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों पर विचार करने के लिए किया जाना है ?

12. इन प्रश्नों का उत्तर देने का सर्वोत्तम प्रयास प्रतिभूति अधिनियम और दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंधों पर विचार करके किया जा सकता है । प्रतिभूति अधिनियम के ये सुसंगत उपबंध धारा 25, 26, 26क, 26ख और 26घ हो सकते हैं, जबकि दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंध धारा 2(ग), 2(घ), 2(द), 4, 156, 200 और 202 होंगे । यहां पर विधि के इन उपबंधों को प्रत्युत्पादित किया जाना सुविधाजनक होगा । ये इस प्रकार हैं :–

प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956

25. कतिपय अपराधों का संज्ञेय होना – दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5) में किसी बात के होते हुए भी, धारा 23 की उपधारा (1) के अधीन दंडनीय कोई अपराध उस संहिता के अर्थान्तर्गत संज्ञेय अपराध समझा जाएगा ।

26. न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान

(1) इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए किसी नियम या विनियम या उपविधि के अधीन दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान किसी न्यायालय द्वारा नहीं लिया जाएगा सिवाय केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड या मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज या किसी व्यक्ति द्वारा की गई शिकायत पर ।

(2) सेशन न्यायालय से निम्नतर कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन दंडनीय किसी अपराध का विचारण नहीं करेगा ।

26क. विशेष न्यायालयों की स्थापना किया जाना

(1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के अधीन अपराधों का शीघ्र विचारण प्रदान करने के प्रयोजन के लिए अधिसूचना द्वारा, उतने

विशेष न्यायालयों को, जितने आवश्यक हों, स्थापित या नामनिर्दिष्ट कर सकेगी ।

(2) विशेष न्यायालय, ऐसे एकल न्यायाधीश से गठित होगा, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा ऐसे उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति की सहमति से, जिसकी अधिकारिता के भीतर नियुक्त किया जाने वाला न्यायाधीश कार्यरत है, नियुक्त किया जाएगा ।

(3) कोई व्यक्ति किसी विशेष न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए तब तक अर्हित नहीं होगा जब तक वह ऐसी नियुक्ति से ठीक पूर्व, यथास्थिति, किसी सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश का पद धारण नहीं कर रहा है ।

26ख. विशेष न्यायालयों द्वारा विचारणीय अपराध

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, प्रतिभूति विधि (संशोधन) अधिनियम, 2014 के प्रारंभ की तारीख से पूर्व या ऐसे प्रारंभ की तारीख को या उसके पश्चात् किए गए इस अधिनियम के अधीन सभी अपराधों का, ऐसे क्षेत्र के लिए जिसमें अपराध किया गया है, स्थापित विशेष न्यायालय द्वारा या जहां ऐसे क्षेत्र के लिए एक से अधिक विशेष न्यायालय हैं, उनमें से ऐसे किसी एक द्वारा, जो संबंधित उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट किया जाए, संज्ञान लिया जाएगा और विचारण किया जाएगा ।

26घ. विशेष न्यायालयों के समक्ष कार्यवाहियों में संहिता का लागू होना

(1) इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित के सिवाय, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के उपबंध, विशेष न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों को लागू होंगे और उक्त उपबंधों के प्रयोजनों के लिए विशेष न्यायालय का, सेशन न्यायालय होना समझा जाएगा तथा विशेष न्यायालय के समक्ष अभियोजन संचालित करने वाले व्यक्ति का, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2 के खंड (प) के अर्थान्तर्गत लोक अभियोजन होना समझा जाएगा ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट अभियोजन संचालित करने वाले व्यक्ति को, सात वर्ष से अन्यून के लिए अधिवक्ता के रूप में

व्यवसाय में होना चाहिए या संघ या राज्य के अधीन सात वर्ष से अन्यून की अवधि के लिए विधि के विशेष ज्ञान की अपेक्षा करने वाले किसी पद का धारण करना चाहिए ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

2. परिभाषाएं – इस संहिता में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो –

(ग) 'संज्ञेय अपराध' से ऐसा अपराध अभिप्रेत है जिसके लिए और 'संज्ञेय मामला' से ऐसा मामला अभिप्रेत है जिसमें, पुलिस अधिकारी प्रथम अनुसूची के या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अनुसार वारण्ट के बिना गिरफ्तार कर सकता है ;

(घ) 'परिवाद' से इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा कार्रवाई किए जाने की दृष्टि से मौखिक या लिखित रूप में उससे किया गया यह अभिकथन अभिप्रेत है कि किसी व्यक्ति ने, चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, अपराध किया है, किंतु इसके अंतर्गत पुलिस रिपोर्ट नहीं है ;

स्पष्टीकरण – ऐसे किसी मामले में, जो अन्वेषण के पश्चात् किसी असंज्ञेय अपराध का किया जाना प्रकट करता है, पुलिस अधिकारी द्वारा की गई रिपोर्ट परिवाद समझी जाएगी और वह पुलिस अधिकारी जिसके द्वारा ऐसी रिपोर्ट की गई है, परिवादी समझा जाएगा ;

(द) 'पुलिस रिपोर्ट' से पुलिस अधिकारी द्वारा धारा 173 की उपधारा (2) के अधीन मजिस्ट्रेट को भेजी गई रिपोर्ट अभिप्रेत है ।

4. भारतीय दंड संहिता और अन्य विधियों के अधीन अपराधों का विचार – (1) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण जांच, विचारण और उनके संबंध में अन्य कार्यवाही इसमें इसके पश्चात् अन्तर्विष्ट उपबंधों के अनुसार की जाएगी ।

(2) किसी अन्य विधि के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण, जांच विचारण और उनके संबंध में अन्य कार्यवाही इन्हीं उपबंधों के अनुसार किंतु ऐसे अपराधों के अन्वेषण, जांच, विचारण या अन्य

कार्यवाही की रीति या स्थान का विनियमन करने वाली तत्समय प्रवृत्त किसी अधिनियमिति के अधीन रहते हुए, की जाएगी ।

156. संज्ञेय मामलों का अन्वेषण करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति – (1) कोई पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी ऐसे संज्ञेय मामले का अन्वेषण कर सकता है, जिसकी जांच या विचारण करने की शक्ति उस थाने की सीमाओं के अंदर के स्थानीय क्षेत्र पर अधिकारिता रखने वाले न्यायालय को अध्याय 13 के उपबंधों के अधीन है ।

(2) ऐसे किसी मामले में पुलिस अधिकारी की किसी कार्यवाही को किसी भी प्रक्रम में इस आधार पर प्रश्नगत न किया जाएगा कि वह मामला ऐसा था जिसमें ऐसा अधिकारी इस धारा के अधीन अन्वेषण करने के लिए सशक्त था ।

(3) धारा 190 के अधीन सशक्त किया गया कोई मजिस्ट्रेट पूर्वोक्त प्रकार के अन्वेषण का आदेश कर सकता है ।

200. परिवादी की परीक्षा – परिवाद पर किसी अपराध का संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट, परिवादी की और यदि कोई साक्षी उपस्थित है तो उनकी शपथ पर परीक्षा करेगा और ऐसी परीक्षा का सारांश लेखबद्ध किया जाएगा और परिवादी और साक्षियों द्वारा तथा मजिस्ट्रेट द्वारा भी हस्ताक्षरित किया जाएगा :

परंतु जब परिवाद लिख कर किया जाता है तब मजिस्ट्रेट के लिए परिवादी या साक्षियों की परीक्षा करना आवश्यक न होगा –

(क) यदि परिवाद अपने पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य करने वाले या कार्य करने का तात्पर्य रखने वाले लोक सेवक द्वारा या न्यायालय द्वारा किया गया है, अथवा

(ख) यदि मजिस्ट्रेट जांच या विचारण के लिए मामले को धारा 192 के अधीन किसी अन्य मजिस्ट्रेट के हवाले कर देता है :

परंतु यह और कि यदि मजिस्ट्रेट परिवादी या साक्षियों की परीक्षा करने के पश्चात् मामले को धारा 192 के अधीन किसी अन्य मजिस्ट्रेट के हवाले करता है तो बाद वाले मजिस्ट्रेट के लिए उनकी फिर से परीक्षा करना आवश्यक न होगा ।

202. आदेशिका के जारी किए जाने को मुल्तवी करना – (1) यदि कोई मजिस्ट्रेट ऐसे अपराध का परिवाद प्राप्त करने पर जिसका संज्ञान करने के लिए वह प्राधिकृत है या जो धारा 192 के अधीन उसके हवाले किया गया है, ठीक समझता है तो और ऐसे मामले में जहां अभियुक्त ऐसे किसी स्थान में निवास कर रहा है जो उस क्षेत्र से परे है जिसमें वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है । अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका का जारी किया जाना मुल्तवी कर सकता है और यह विनिश्चित करने के प्रयोजन से कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है अथवा नहीं, या तो स्वयं ही मामले की जांच कर सकता है या किसी पुलिस अधिकारी द्वारा या अन्य ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसको वह ठीक समझे अन्वेषण किए जाने के लिए निदेश दे सकता है :

परंतु अन्वेषण के लिए ऐसा कोई निदेश वहां नहीं दिया जाएगा –

(क) जहां मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है ; अथवा

(ख) जहां परिवाद किसी न्यायालय द्वारा नहीं किया गया है जब तक कि परिवादी की या उपस्थित साक्षियों की (यदि कोई हो) धारा 200 के अधीन शपथ पर परीक्षा नहीं कर ली जाती है ।

13. इन उपबंधों का अध्ययन करने पर समझा जा सकता है कि वे हमारे समक्ष उस प्रक्रिया का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं जिसका अनुसरण प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिए जाने, उनके बाबत जांच और अन्वेषण किए जाने और अपराधियों पर विधि के अधीन कार्रवाई किए जाने के लिए उनका विचारण किए जाने के प्रयोजनार्थ किया जाना है । प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26, 26ख और 26घ द्वारा अधिनियम के अधीन अपराधों पर विचार किए जाने के प्रयोजनार्थ एक कतिपय प्रक्रिया अधिकथित की गई है । मैं यहां पर कहना चाहूंगा कि यह प्रक्रिया विशेष प्रकृति की है चूंकि यह दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों से हट कर अलग प्रक्रिया उपबंधित करती है कि अपराध का संज्ञान किस प्रकार से लिया जाना है और उसका विचारण किस प्रकार से किया जाना है । प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 इस अधिनियम के अधीन

दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिए जाने के लिए एक विशेष प्रक्रिया विहित करती है और अपराधों का संज्ञान लिए जाने के अन्य मार्गों को बंद करती है, बिल्कुल वैसे ही जैसे कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 के अधीन कोई प्रथम वर्ग का मजिस्ट्रेट किसी शिकायत के आधार पर या किसी पुलिस रिपोर्ट के आधार पर या पुलिस अधिकारी के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति से प्राप्त सूचना के आधार पर या अपने स्वयं के ज्ञान के आधार पर किसी अपराध का संज्ञान ले सकता है । किन्तु प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 मात्र एक प्रकार से ही किसी अपराध का संज्ञान लिए जाने के लिए निर्बंधित करती है अर्थात् सक्षम प्राधिकारी या व्यक्ति द्वारा शिकायत किए जाने पर । यह धारा 26 में समायोजित भाषा से ही स्पष्ट हो जाता है । यह धारा एक नकरात्मक आदेश के साथ आरंभ होती है, "कोई न्यायालय संज्ञान नहीं लेगा...." और समाप्त एक वर्जन को अधिरोपित करने के लिए अपवाद के साथ होती है, "केन्द्रीय सरकार द्वारा की गई शिकायत के सिवाय..." । इससे दर्शित होता है कि प्रतिभूति अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान मात्र धारा 26 के अधीन विहित तरीके से ही लिया जा सकता है । इसका यह अर्थ भी होगा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 इस अधिनियम के अधीन अपराधों पर लागू नहीं होगी । तथापि, प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 प्रक्रिया के संदर्भ में नहीं है बल्कि अपराध की प्रकृति के संदर्भ में है, जिस पर हम बाद में विचार करेंगे । किन्तु धारा 26क और 26घ केवल प्रक्रिया के बारे में ही है । वे अधिकथित करती हैं कि प्रतिभूति अधिनियम के अधीन अपराध केवल विशेष न्यायालयों द्वारा विचारणीय होंगे और दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के उपयोजन को मात्र इस सीमा तक निर्बंधित करती है कि वे प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के साथ असंगत नहीं है ।

14. अतः यह प्रक्रिया विशेष प्रकृति की होने के कारण दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अंतर्गत विहित प्रक्रिया पर अभिभावी नहीं होगी । प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26घ स्पष्टतः अधिकथित करती है कि अधिनियम में अन्यथा रूप से उपबंधित होने पर भी दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध विशेष न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों पर लागू होंगे । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4(2) भी अधिकथित करती है कि सामान्यतया किसी अन्य विधि के अधीन समस्त अपराधों का अन्वेषण, जांच, विचारण और उनके संबंध में अन्य कार्यवाही इन्हीं उपबंधों के अनुसार किंतु ऐसे अपराधों के अन्वेषण, जांच विचारण या अन्य कार्यवाही की रीति या स्थान का

विनियमन करने वाली तत्समय प्रवृत्त किसी अधिनियमिति के अधीन रहते हुए, की जाएगी । ये दोनों उपबंध यह समझने के लिए पर्याप्त हैं कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान और विचारण केवल प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किया जाना है और किसी अन्य रीति में नहीं और दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध केवल उस सीमा तक लागू होंगे जहां तक वे प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के साथ टकराव में न हों । तत्पश्चात् विधि का एक अन्य सिद्धांत है जो प्रतिभूति के अधिनियम के उपबंधों को प्रमुखता प्रदान करता है । वह सिद्धांत यह है कि जब विधि किसी कार्य के किसी विशिष्ट रीति में किए जाने की अपेक्षा करती है, तो उस कार्य को उसी रीति में किया जाना चाहिए और किसी अन्य रीति में नहीं । इस संबंध में लाभदायक निदेश माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **धनंजय रेड्डी** बनाम **कर्नाटक राज्य**[1] वाले मामले में की गई मताभिव्यक्ति है । इसलिए प्रतिभूति अधिनियम के अधीन अपराधों पर विचार करते हुए इसके अंतर्गत अधिकथित विशेष प्रक्रिया के अनुसरण से बचा नहीं जा सकता ।

15. अब मैं उन प्रश्नों पर विचार करूंगा जो इस मामले में अंतर्वलित है और जिनको पहले भी सूत्रबद्ध किया गया था । पहले दो प्रश्न विधि को गति प्रदान किए जाने के लिए अपेक्षित शर्तें हैं, अगले दो प्रश्न पुलिस द्वारा गिरफ्तार और अन्वेषण किए जाने की शक्ति पर स्पष्टीकरण की ईप्सा करते हैं और पांचवां और अंतिम, यदि मैं वर्तमान विवाद के प्रयोजनार्थ कहूं, वह प्रक्रिया है जिसका अनुसरण प्रतिभूति अधिनियम के अधीन अपराधों पर विचार किए जाने के लिए किया जाना है ।

16. प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत दंडनीय अपराधों को अधिनियम की धारा 25 के अधीन संज्ञेय धारित किया गया है । सामान्यतया दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन किसी संज्ञेय अपराध के कारण से संबंधित सूचना किसी भी व्यक्ति द्वारा दी जा सकती है जिसको उस अपराध के कारण के बारे में सूचना हो । अतः विधि को किसी पुलिस थाना के भारसाधक अधिकारी को किसी भी व्यक्ति द्वारा मौखिक या लिखित में प्रदान की गई सूचना के आधार पर गति प्रदान की जा सकती है और सूचना की प्राप्ति पर पुलिस अधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(1) के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए

---

[1] (2001) 4 एस. सी. सी. 9 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 1512.

मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना उस अपराध का अन्वेषण कर सकता है । विधि को दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अंतर्गत भी किसी संबद्ध मजिस्ट्रेट के समक्ष धारा 2(घ) के निबंधनों के अनुसार शिकायत प्रस्तुत करने के द्वारा गति प्रदान की जा सकती है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा किसी अपराध का संज्ञान या तो पुलिस रिपोर्ट के आधार पर या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) के निबंधनों के अनुसार फाइल की गई शिकायत के आधार पर या पुलिस अधिकारी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति से प्राप्त सूचना के आधार पर कि अपराध कारित हो गया है, लिया जा सकता है । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की योजना को प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत सारभूत रूप से परिवर्तित कर दिया गया है । यह (प्रतिभूति अधिनियम) विहित करता है कि इस अधिनियम के अंतर्गत दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान केवल किसी ऐसी शिकायत के आधार पर लिया जा सकता है जिसको अधिनियम के अंतर्गत अनुध्यात किसी प्राधिकारी या व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया गया हो और किसी अन्य रीति में नहीं । यदि विधान-मंडल का आशय यह होता कि अपराध का संज्ञान पुलिस रिपोर्ट के आधार पर लिया जाए, तो वह इसके लिए अभिव्यक्त रूप से उपबंधित करता । वास्तव में, ऐसा अभिव्यक्त उपबंध अन्य विशेष अधिनियमितियों में भी देखा गया है । उदाहरणार्थ 2012 का लैंगिक अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम को इस बिन्दु पर जोर देने के लिए उद्धृत किया जा सकता है । इस अधिनियम की धारा 33(1) इस प्रकार है :–

33. विशेष न्यायालयों की प्रक्रिया और शक्तियां

> कोई विशेष न्यायालय, अभियुक्त को विचारण के लिए उसको सुपुर्द किए बिना किसी अपराध का संज्ञान ऐसे अपराध का गठन करने वाले तथ्यों का परिवाद प्राप्त होने पर या ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर, ले सकेगा ।

17. प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में प्रयुक्त शब्द "शिकायत" का विधि में निश्चित अर्थ है । इसको प्रतिभूति अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है । प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26(घ) और साथ ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4(2) को दृष्टि में रखते हुए इस पद को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) में दी गई परिभाषा द्वारा समझा जा सकता है । यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि प्रतिभूति अधिनियम के अंतर्गत किसी अपराध के कारण से संबंधित किसी सूचना को शिकायत के रूप में अर्हता

प्रदान किए जाने के लिए इसको या तो मौखिक रूप से या लिखित रूप से किसी मजिस्ट्रेट को दिया जाना चाहिए और न कि किसी पुलिस अधिकारी को, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अनुध्यात है और इसको मजिस्ट्रेट के समक्ष इस बात को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि वह अपराधी के विरुद्ध कार्रवाई करे और इसमें पुलिस रिपोर्ट सम्मिलित नहीं होती । अन्य शब्दों में "शिकायत" जैसा कि विधि के अंतर्गत अनुध्यात है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन किसी संज्ञेय अपराध के कारण के संबंध में पुलिस थाना के भारसाधक को दी गई सूचना से भिन्न होती है । यह अपराध का प्रकटीकारण करने वाली एक सूचना होती है जो अपराधी के विरुद्ध कार्रवाई किए जाने के प्रयोजनार्थ मजिस्ट्रेट को दी जाती है । इसमें पुलिस रिपोर्ट सम्मिलित नहीं होती । "पुलिस रिपोर्ट", जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(द) के अधीन परिभाषित है, और कुछ नहीं है बल्कि पुलिस अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन अग्रेसित की गई रिपोर्ट है, जो अन्वेषण की समाप्ति के पश्चात् दी जाती है । यदि किसी शिकायत के साथ पुलिस रिपोर्ट सम्मिलित नहीं की जाती और यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन पुलिस अधिकारी को दी गई सूचना भी नहीं है, जिसको सामान्यतया प्रथम इत्तिला रिपोर्ट कहा जाता है, तो प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध के बाबत विधि को गति प्रदान करने का एकमात्र मार्ग या जांच या अन्वेषण को आरंभ करने का एकमात्र मार्ग, जैसा भी मामला हो, अधिनियम की धारा 26 के निबंधनों के अनुसार शिकायत फाइल किया जाना होगा ।

18. विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा यह दलील दी गई है कि अपराध का संज्ञान लेने का प्रक्रम केवल तब आता है जब अन्वेषण समाप्त हो जाता है और मामला मजिस्ट्रेट या विशेष न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत होता है और इसलिए पुलिस अधिकारी द्वारा प्रतिभूति अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों के संबंध में अन्वेषण सदैव किया जा सकता है और अन्वेषण की समाप्ति पर इस अधिनियम की धारा 26 के अधीन फाइल की जाने वाली शिकायत की अनुपस्थिति से उत्पन्न कमी को शिकायत अभिप्राप्त करने और उसको विशेष न्यायालय के समक्ष पुलिस रिपोर्ट के स्थान पर फाइल किए जाने के द्वारा पूरा किया जा सकता है । तथापि, आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने इसका विरोध असहमत होते हुए किया कि कोई अन्वेषण नहीं हो सकता जब तक कि सक्षम व्यक्ति द्वारा इस बाबत कि प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत कोई दंडनीय

अपराध कारित किया गया है, शिकायत प्रस्तुत न कर दी जाए ।

19. यहां पर मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि चूंकि दंड प्रक्रिया संहिता की उपबंध प्रतिभूति अधिनियम के अंतर्गत स्थापित विशेष न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों पर लागू होते हैं, प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26क के निबंधनों के अनुसार नियुक्त विशेष न्यायाधीश जो इस अधिनियम के अंतर्गत दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान लेता है, को वही शक्तियां प्राप्त होंगी जो दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अधीन किसी मजिस्ट्रेट को प्राप्त होती हैं । आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा उठाया गया बिन्दु उचित प्रतीत होता है । पहले अन्वेषण नहीं किया जा सकता जब तक कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के अधीन कोई शिकायत फाइल नहीं कर दी जाती, दंड प्रक्रिया संहिता या प्रतिभूति अधिनियम में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो किसी पुलिस अधिकारी को पहले अन्वेषण करने और तत्पश्चात् उस अन्वेषण को न्यायानुमत ठहराने के लिए शिकायत अभिप्राप्त करने की अनुज्ञा प्रदान करता हो । यदि इस बाबत दलील कि अन्वेषण पहले किया जाए और शिकायत बाद में अभिप्राप्त की जाए, को स्वीकार कर लिया जाए, तो इससे असमान स्थिति उत्पन्न हो जाएगी । यह उसी प्रकार होगा जैसे कि गाड़ी को घोड़े के आगे बांधना । इस प्रकार की स्थिति के गंभीर परिणाम होंगे । यदि विधि प्रवर्तन अभिकरण शिकायत की अनुपस्थिति में अन्वेषण करता है और अभियुक्त को गिरफ्तार भी कर लेता है और अन्वेषण की समाप्ति पर निर्णय करता है कि मामले को सक्षम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए, तो मामले की सफलता सक्षम प्राधिकारी द्वारा शिकायत फाइल करने के लिए सहमत होने पर निर्भर हो जाएगी । यदि सक्षम प्राधिकारी पुलिस अधिकारी की मांग को पूरा करने से इनकार कर देता है, तो संपूर्ण अन्वेषण व्यर्थ हो जाएगा । अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान अभियुक्त की गिरफ्तारी अवैध हो जाएगी और संपूर्ण कार्यवाही के औचित्य और प्रयोजन पर प्रश्न चिन्ह लग जाएगा ।

20. इसमें कोई संदेह नहीं कि पुलिस अधिकारी किसी संज्ञेय अपराध का अन्वेषण कर सकता है । किन्तु वह ऐसा या तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(1) के अधीन प्रदत्त अपनी शक्ति के प्रयोग में कर सकता है (अर्थात् मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना) या धारा 156(3) और 202 के अधीन मजिस्ट्रेट से प्राप्त निर्देश के आधार पर । यहां पर हम पुलिस अधिकारी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(1) के अधीन मजिस्ट्रेट के

आदेश के बिना अन्वेषण किए जाने की शक्ति से संबद्ध है । किन्तु दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(1) के अधीन पुलिस अधिकारी की यह शक्ति तभी प्रयोग होती है जब उसके द्वारा संज्ञेय अपराध के कारण से संबंधित सूचना या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन प्राप्त की जाती है, अन्यथा नहीं । धारा 154 के अधीन प्राप्त और रजिस्ट्रीकृत की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अनुपस्थिति में ऐसा कोई मामला नहीं होगा जिसको पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण किए जाने योग्य "संज्ञेय अपराध" कहा जा सके । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(1) के अधीन यह उल्लेखनीय है कि "संज्ञेय अपराध" के रूप में किस बात का अन्वेषण किया जा सकता है और यह उपबंध अभिव्यक्ति "संज्ञेय अपराध" के प्रयोग को वर्जित करता है । तथापि, हमने पहले भी देखा है कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के अधीन अनुध्यात शिकायत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन फाइल की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से भिन्न होती है और यह अपने परिक्षेत्र के अंतर्गत किसी ऐसी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को सम्मिलित नहीं करती । इसलिए पुलिस अधिकारी द्वारा प्रतिभूति अधिनियम के अंतर्गत किसी अपराध के मामले में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(1) के अधीन किसी संज्ञेय अपराध का अन्वेषण किए जाने की अपनी शक्ति का प्रयोग करने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होगा । इसका अर्थ यह होगा कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के निबंधनों के अनुसार सक्षम प्राधिकारी या किसी व्यक्ति द्वारा पहले शिकायत फाइल किया जाना विधि को गति प्रदान करने और इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन अभिकथित रूप से कारित अपराध की जांच या अन्वेषण किए जाने के लिए आवश्यक शर्त है ।

21. विद्वान् लोक अभियोजक ने अपनी दलीलों के समर्थन में **एस. आर. सुकुमार** बनाम **एस. सुनाद रघुराम**[1] वाले मामले का अवलंब लिया कि चूंकि संज्ञान का लिया जाना एक ऐसी बात है जो उस समय उद्भूत होती है जब मामले को मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है, धारा 26 प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25, जो इस अधिनियम के अधीन अपराध को संज्ञेय उपधारित करती है, के उपबंधों का अवलंब लिए जाने के द्वारा कम से कम अपराध को रजिस्ट्रीकृत किए जाने और उसका अन्वेषण किए जाने में पुलिस की शक्तियों पर कोई अवरोध उत्पन्न नहीं करेगी । ससम्मान मैं

---

[1] (2015) 9 एस. सी. सी. 609 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2757.

कहता हूं कि यह निर्णयज विधि उनके द्वारा दी गई उक्त दलील से मेरे सहमत होने में विद्वान् लोक अभियोजक की सहायता नहीं करती । माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस मामले में "संज्ञान" के पहलू पर विचार किया और स्पष्ट किया कि मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया जाना क्या होता है । यह पैराग्राफ 12 में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति से स्पष्ट है कि अपराध के संज्ञान का अर्थ है दोषारोपणों पर विचार किया जाना और शिकायत की अंतर्वस्तु और उसके साथ फाइल की गई सामग्री पर न्यायिक विवेक को लागू किया जाना । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित नहीं किया है कि पुलिस द्वारा शिकायत प्राप्त किए जाने और उसको रजिस्ट्रीकृत किए बिना अन्वेषण किया जा सकता है और पुलिस ऐसी शिकायत को उसके द्वारा किए गए अन्वेषण को न्यायानुमत ठहराने के प्रयोजनार्थ बाद में अभिप्राप्त कर सकती है ।

22. विद्वान् लोक अभियोजक की अगली दलील यह है कि हमारे समक्ष उपस्थित मामले में अन्यथा रूप से भी उचित व्यक्ति द्वारा शिकायत फाइल की गई है चूंकि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में उद्भूत अभिव्यक्ति "उचित व्यक्ति" के अर्थांतर्गत पुलिस हेड कांस्टेबल या नायक पुलिस कांस्टेबल, जैसाकि वर्तमान मामले में हुआ है, को सम्मिलित करते हुए प्रत्येक पुलिस अधिकारी आ जाता है । आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के अनुसार विद्वान् लोक अभियोजक की दलील भ्रांत धारणा पर आधारित है । चूंकि अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" को Ejusdam Generis (उसी किस्म या प्रजाति का) के सिद्धांत को उपयोग करते हुए साधारण शब्दों के पहले प्रयुक्त विनिर्दिष्ट शब्दों को योजित अर्थ द्वारा समझा जाना है और किसी भी मामले में पुलिस अधिकारी को संविधान के अनुच्छेद 166 के अधीन केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार नहीं समझा जा सकता ।

23. प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में योजित पदों और अभिव्यक्ति पर सावधानीपर्वूक विचारोपरांत मैं आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की उक्त दलीलों को स्वीकार करने के लिए आनत हूं । हमने देखा है कि कोई भी शिकायत केवल सिक्योरिटी अधिनियम में उल्लिखित प्राधिकारियों द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा फाइल की जा सकती है । इस धारा में नामित प्राधिकारी हैं केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड या मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज । शब्दों "केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड या मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज" पहले प्रकट होते हैं और उनका अनुसरण करने वाले शब्द हैं "या किसी व्यक्ति द्वारा" । इस धारा में इन प्राधिकारियों को विनिर्दिष्ट

रूप से नामित किए जाने से केवल यह उपदर्शित होता है कि इस प्रकार के नामकरण द्वारा विधान-मंडल का आशय एक तरफ तो प्रतिभूति अधिनियम के उद्देश्य को प्रभावी रूप से अभिप्राप्त करना है और दूसरी तरफ इसके दुरुपयोग को रोकना है । अन्य शब्दों में विधान-मंडल द्वारा विनिर्दिष्ट प्राधिकारियों का उल्लेख, जो शिकायत फाइल कर सकते हैं, प्रतिभूति अधिनियम के उद्देश्यों के साथ संगत है । विनिर्दिष्ट प्राधिकारियों का इस प्रकार से उल्लेख किए जाने के कारण उन प्राधिकारियों को भिन्न वर्ग के व्यक्तियों के समुच्चय में सम्मिलित कर देता है जो प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अतिलंघन द्वारा प्रभावित हैं । यद्यपि यह वर्ग सुभिन्न और पृथक् है, फिर भी सर्वांगीण नहीं है । यह प्रभावित व्यक्तियों के वृहत्तर वर्ग की प्रजाति मात्र है जिसको जीनस (वर्ग) कहा जाता है । अनेक अन्य प्राधिकारी या व्यक्ति भी हो सकते हैं जो इस अधिनियम के उपबंधों के अतिक्रमण द्वारा सामान्य रूप से प्रभावित हो सकते हैं । यह प्राधिकारी या व्यक्ति, इस बिन्दु को उदाहरण के माध्यम से समझाने और इसको विस्तृत न करने के प्रयोजनार्थ, निम्नलिखित रूप से अभिकथित किए जा सकते हैं :–

(i) रजिस्ट्रीकृत या मान्यता प्राप्त दलाल ;

(ii) समाशोधन निगम जिसको प्रतिभूति अधिनियम की धारा 8क के निबंधनों के अनुसार समाशोधन गृह के कर्तव्य और कार्य सौंप दिए गए हैं ;

(iii) सभी कंपनियां जिनके शेयर या म्यूचुअल फंड की ईकाइयां मान्यता प्राप्त प्लेटफार्म पर सूचीबद्ध हैं ;

(iv) 2006 के प्रतिभूति संविदा (विनियमन) (मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंजों में लोक शेयर धारकों को बढ़ाने और उनको परिरक्षित रखे जाने का तरीका) विनियम ;

(v) अवैध शेयर व्यापार के विरुद्ध संरक्षण की ईप्सा करने वाले व्यक्तिगत शेयर धारक ।

24. इससे केवल यह दर्शित होगा कि इस धारा में विनिर्दिष्ट रूप से प्राधिकारियों का नामित किया जाना सर्वांगीण नहीं है । इसी प्रकार के समान रूप से प्रभावित अन्य प्राधिकारी या व्यक्ति भी हो सकते हैं । इसके आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि साधारण शब्दों "कोई व्यक्ति" के अर्थ को समझे जाने के लिए Ejusdem Generis (उसी किस्म या

प्रजाति का) के सिद्धांत को लागू किए जाने की आवश्यक शर्त को इस मामले में पूरा कर दिया गया है ।

25. **कवलप्पाड़ा कोट्टाराथिल कोचुनी अर्थात् मूपील नायर और अन्य** बनाम **मद्रास और केरल राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने पैरा 50 में निम्नलिखित मताभिव्यक्ति की :–

> "..... नियम यह है कि जब साधारण शब्द अपने ही अर्थों वाले विशिष्ट और विनिर्दिष्ट शब्दों का अनुसरण करते हैं, तो साधारण शब्द का अर्थ उन्हीं शब्दों के अर्थ तक सीमित होगा जिनको विनिर्दिष्ट किया गया है । किन्तु निर्णीत मामले में यह स्पष्टतया अधिकथित किया गया है कि विनिर्दिष्ट शब्दों को एक भिन्न वर्ग या श्रेणी सृजित करना चाहिए । यह विधि का अनतिक्रमणीय (अलंघनीय) नियम नहीं है, किन्तु किसी विपरीत अर्थ के संकेत की अनुपस्थिति में मात्र अनुज्ञेय अनुमान है .....।"

26. **अमल चंद चक्रवर्ती** बनाम **उत्पाद शुल्क कलक्टर, त्रिपुरा सरकार और अन्य**[2] वाले मामले में एक अन्य संविधान न्यायपीठ द्वारा दिए गए विनिश्चय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इसी सिद्धांत को दोहराया और अधिकथित किया कि इस बाबत कि Ejusdem Generis के सिद्धांत का अनुसरण किए जाने के द्वारा समान शब्दों का निर्वचन किया गया है, पांच शर्तें होनी चाहिएं और पैराग्राफ 9 में निम्नलिखित मताभिव्यक्ति की :–

> "..... ejusdem generis का नियम विनिर्दिष्ट और साधारण शब्दों के मध्य असामंजस्य का समाधान करने का प्रयास करता है । यह सिद्धांत तब लागू होता है जब (i) विधान में विनिर्दिष्ट शब्दों की परिगणना समाविष्ट होती है ; (ii) परिगणना का विषय एक वर्ग या श्रेणी गठित करता है ; (iii) वह वर्ग या श्रेणी परिगणना द्वारा सर्वांगीण नहीं है ; (iv) साधारण शब्द परिगणना का अनुसरण करता है ; और (v) किसी भिन्न विधायी आशय का संकेत नहीं है .....।"

27. अब यह स्पष्ट है कि अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" को वही अर्थ समुनदेशित किया जाएगा जो उसके पूर्ववर्ती शब्दों द्वारा प्रतिभूति अधिनियम

---

[1] ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 1080.

[2] ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 1863.

की धारा 26 में संसूचित है । अन्य शब्दों में अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" को प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अतिलंघन द्वारा प्रभावित व्यक्ति के वर्ग को सूचित के अलावा किसी अन्य बात का संकेत करने वाले के रूप में नहीं समझा जा सकता । प्रभावित व्यक्तियों के वर्ग में न केवल उसकी पूर्वोक्त प्रजातियां सम्मिलित होंगी बल्कि दृष्टांत द्वारा पूर्व में उपदर्शित अन्य प्रजातियां भी सम्मिलित होंगी । इसका यह अर्थ होगा कि पुलिस अधिकारी प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में योजित अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" की परिधि के अंतर्गत नहीं आता ।

28. यहां पर मैं कहता हूं कि यदि विधान-मंडल का आशय यह था कि अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" में पुलिस अधिकारी भी सम्मिलित होगा, तो वह इसको विनिर्दिष्ट रूप से व्यक्त करता और यह तथ्य कि विधान-मंडल ऐसा करने से विरत रहा, यह अनुमान लगाए जाने के लिए पर्याप्त होगा कि विधान-मंडल का आशय अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" द्वारा संसूचित अर्थ से पुलिस अधिकारी को विवर्जित करना था । ऐसी अन्य विशेष अधिनियमितियां भी हैं जिनमें विधान-मंडल ने अभिव्यक्त रूप से पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण किए जाने के प्राधिकार को उपबंधित किया है और ऐसी शक्ति प्रदत्त करते हुए विधान-मंडल ने न केवल यह शक्ति पुलिस अधिकारी को प्रदत्त की है बल्कि यह स्पष्ट भी किया है कि इसका प्रयोग केवल विशिष्ट रैंक के पुलिस अधिकारी द्वारा किया जाएगा और किसी अन्य पुलिस अधिकारी द्वारा नहीं । दृष्टांत के माध्यम से इस प्रकार के कुछ अधिनियमितियों को निर्दिष्ट किया जा सकता है जैसेकि 1988 के भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17 या 1968 के विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43 । यह उपबंध प्रतिभूति अधिनियम में अनुपलब्ध है और इसलिए इस बात को कहने का यह एक अतिरिक्त कारण होगा अभिव्यक्ति "कोई व्यक्ति" में पुलिस अधिकारी न तो सम्मिलित है और न ही अनुध्यात है ।

29. अभियोजन द्वारा यह दुर्बल दलील देने का प्रयास किया गया कि पुलिस अधिकारी भी प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "राज्य सरकार" की अपेक्षाओं को पूरा कर सकता है । मुझको भय है कि ऐसा संविधान के अनुच्छेद 166 सपठित अनुच्छेद 12 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए कभी नहीं हो सकता, जैसीकि दलील आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा दी गई है । अनुच्छेद 12 के अधीन "राज्य" में अन्य बातों के साथ राज्य सरकार सम्मिलित होती है और अनुच्छेद 166 के

अधीन राज्य सरकार की प्रत्येक कार्यपालिका कार्यवाही राज्य के कारबार के संव्यवहार के लिए बनाए गए नियमों के अनुसार राज्यपाल के नाम में की जाती है । प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अभिकथित अतिलंघन के लिए शिकायत फाइल किए जाने के लिए आशयित पुलिस अधिकारी राज्यपाल के नाम में न तो ऐसा करता है और न कर सकता है, जब तक कि सरकार के कारबार के सुविधाजनक संव्यवहार के लिए बनाए गए नियम उसको ऐसा करने की अनुज्ञा प्रदान करते हों । काल्पनिक रूप से बात करें तो यदि इस प्रकार की अनुज्ञा प्रदान करने वाला कोई भी उपबंध नियम में बनाया जाता है, यद्यपि इस प्रकार का कोई भी नियम दर्शित नहीं किया गया है तो इस नियम में सामान्यतया पुलिस अधिकारी का रैंक स्पष्ट किया जाएगा, जो सामान्यतया पुलिस हेड कांस्टेबल से अत्यधिक उच्चतर होगा । इसी कारणवश इस अधिनियम के अधीन अपराधियों के विरुद्ध कार्रवाई किए जाने की अपेक्षाएं, शेयर बाजार के क्रियाकलापों की गहरी समझ अंतर्वलित करने वाले अपराधों की सफेदपोश प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, अत्यधिक उच्चतर स्तरमान के होते हैं । अतः इस दलील को अस्वीकृत किया जाता है ।

30. विद्वान् लोक अभियोजक ने आगे दलील दी कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 प्रतिभूति अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों को संज्ञेय बनाती है और इसलिए पुलिस को अन्वेषण करने की अनुज्ञा प्रदान करती है । उनकी यह दलील भी है कि इस अधिनियम की धारा 25 अधिनियम की धारा 26 से स्वतंत्र रूप से कार्य करती है । मैं पहले ही इस निष्कर्ष पर पहुंच चुका हूं कि अन्वेषण पहले नहीं किया जा सकता और शिकायत को बाद में नहीं लिया जा सकता या संक्षिप्ततः अन्वेषण के अंत में नहीं लिया जा सकता । इस प्रकार का निर्वचन उसी प्रकार से है जैसेकि डिजर्ट को पहले परोस दिया जाए और मुख्य भोजन को बाद में । यह पुलिस अधिकारी द्वारा लिए जाने वाले अवसर के बाबत अत्यधिक जोखिम भरी दलील है । यदि सिक्योरिटी अधिनियम के अधीन अपराध घटित होता है तो जब एक व्यक्ति को सलाखों के पीछे पहुंचा दिया जाएगा, मामले का अन्वेषण किया जाएगा और पूर्ण होगा और यदि उस प्रक्रम पर प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के अधीन अनुध्यात प्राधिकारी या व्यक्ति शिकायत फाइल करने के द्वारा पुलिस की सहायता करने से इनकार कर देता है तो पुलिस द्वारा गिरफ्तारी और निरोध के द्वारा की गई संपूर्ण कार्रवाई दूषित हो जाएगी और तत्पश्चात् कोई नहीं जानता कि

प्रभावित व्यक्ति को सांत्वना किस प्रकार प्रदान की जाएगी, उसको सांत्वना कौन प्रदान करेगा और किस प्रकार से करेगा । निश्चित रूप से विधान-मंडल का यह आशय कभी भी नहीं था । इसलिए इस मामले में सामंजस्यपूर्ण निर्वचन प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 और 26 के उपबंधों और दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंधों को एक साथ पढ़े जाने के द्वारा किया जाएगा । यदि एक बार इस प्रकार निर्वचन कर दिया जाता है, तो यह निष्कर्ष निकलेगा कि यह निर्वचन विधान-मंडल के आशय को प्रतिभूतियों में अवांछनीय संव्यवहारों का दमन करने, राज्य के राजकोष या किसी अन्य पणधारी को कारित होने वाली हानि को रोकने और प्रतिभूति अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के द्वारा सुकर बनाता है । इस प्रकार का निर्वचन यह भी दर्शित करेगा कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 स्वतंत्र रूप से कार्यान्वित नहीं होती बल्कि वास्तव में धारा 26 की पूरक है ।

31. धारा 25 जो उपबंधित करती है, धारण उपबंध द्वारा प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन किसी दंडनीय अपराध की संज्ञेयता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(ग) के अधीन संज्ञेय अपराध एक ऐसा अपराध है जिसके लिए पुलिस बिना वारंट गिरफ्तार कर सकती है । जब धारणा उपबंध द्वारा किसी अपराध को संज्ञेय बनाया जाता है, तो इसका आवश्यक रूप से यह अर्थ होता है कि पुलिस अधिकारी बिना वारंट के गिरफ्तार केवल तब कर सकता है जब अधिनियमिति में विहित सभी शर्तें पूर्ण हो गईं हों । ऐसा तब नहीं होता जब किसी अपराध को वह अपने अधिकार के अंतर्गत संज्ञेय बनाता है और उस मामले में जैसे ही अपराध रजिस्ट्रीकृत किया जाता है, पुलिस अधिकारी को बिना वारंट के गिरफ्तार करने का प्राधिकार प्राप्त हो जाता है । इसका अर्थ यह होगा कि पुलिस अधिकारी बिना वारंट के केवल तब गिरफ्तार कर सकेगा जब प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के अधीन विशेष न्यायालय के समक्ष शिकायत फाइल की जाती है और दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 15 और 16 के उपबंधों की अन्तर्निहित शर्तें पूरी कर दी जाती हैं । दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 15 और 16 के विभिन्न उपबंधों द्वारा उपदर्शित प्रक्रिया का भी अनुसरण उस न्यायालय, जिसके समक्ष शिकायत फाइल की गई है, द्वारा किया जाना होगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के अधीन मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान ले सकता है और विधि के अनुसार अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 के अधीन या तो

परिवाद को निर्णीत कर सकता है या उसको खारिज कर सकता है या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के निबंधनों के अनुसार प्रक्रिया जारी कर सकता है । धारा 202(1) के अधीन मजिस्ट्रेट या विशेष न्यायाधीश प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों के मामलों में अभियुक्त के विरुद्ध प्रक्रिया जारी किए जाने को स्थगित भी कर सकता है और या तो मामले की जांच स्वयं कर सकता है या पुलिस अधिकारी या किसी अन्य उचित व्यक्ति द्वारा यह निर्णीत किए जाने के प्रयोजनार्थ कि कार्रवाई को आगे बढ़ाए जाने के पर्याप्त आधार हैं या नहीं, अन्वेषण किए जाने के लिए निदेशित कर सकता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202(1) के अधीन प्रक्रिया जारी किए जाने को स्थगित किए जाने का विनिश्चय लिया जाता है कि विशेष न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए पुलिस अधिकारी द्वारा मामले का अन्वेषण किए जाने के लिए निदेशित कर सकता है । ऐसा केवल तब होता है जब इस प्रकार का कोई निदेश जारी किया जाता है कि पुलिस अधिकारी अन्वेषण कर सकता है और अन्यथा नहीं । यदि विशेष न्यायाधीश के निर्देश में गिरफ्तारी किए जाने के संबंध में आगे का कोई आदेश समाविष्ट नहीं होता, तो अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह गिरफ्तारी के संबंध में स्पष्टीकारण प्राप्त करने के लिए एक बार पुनः उनसे संपर्क करे और वह विशेष न्यायाधीश द्वारा कोई वारंट या विनिर्दिष्ट आदेश जारी किए बिना अभियुक्त को अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान गिरफ्तार कर सकता है । अतः प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 शिकायत फाइल किए जाने के प्रयोजनार्थ धारा 26 के अधीन और साथ ही पुलिस अधिकारी द्वारा किए जाने वाले अन्वेषण के प्रयोजनार्थ विशेष न्यायाधीश या न्यायालय द्वारा निदेश जारी किए जाने पर आश्रित है ।

32. किसी भी स्थिति में प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि यह धारा पुलिस को धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों के मामलों में भी अन्वेषण करने की शक्ति मात्र इस कारणवश प्रदान करती है कि इन अपराधों को संज्ञेय अपराध के रूप में प्रतीत किया जाता है जिसके लिए पुलिस अधिकारी बिना वारंट गिरफ्तार कर सकता है, बिल्कुल वैसे ही जैसे धारा 26 के अधीन फाइल की गई शिकायत के मामले में । किसी संज्ञेय अपराध के मामले में बिना वारंट गिरफ्तार करने के प्राधिकार और किसी संज्ञेय अपराध के मामले में मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना अन्वेषण करने की शक्ति के मध्य दृश्यमान

भिन्नता होती है । धारा 25 प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय किसी अपराध को संज्ञेय बनाती है और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं । यह धारा इन अपराधों में से संबंधित किसी भी मामले को संज्ञेय नहीं बनाती । मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 के अधीन अन्वेषण करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति किसी संज्ञेय मामले के संबंध में होती है और यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन किसी संज्ञेय अपराध के कारण से संबंधित सूचना से उत्पन्न होती है । यह शक्ति पूर्णता को तब प्राप्त होती है जब या तो धारा 169 के अधीन कोई रिपोर्ट या धारा 173(2) के अधीन पुलिस रिपोर्ट मजिस्ट्रेट के समक्ष फाइल की जाती है । हमने पहले भी देखा है कि विधि को प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अधीन किसी सक्षम प्राधिकारी या प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 में नामित किसी व्यक्ति द्वारा फाइल की गई शिकायत पर गति प्रदान की जा सकती है और इस प्रकार की शिकायत में पुलिस रिपोर्ट सम्मिलित नहीं होती । इसलिए किसी पुलिस अधिकारी द्वारा संज्ञेय अपराध के कारण के संबंध में कोई सूचना प्राप्त करने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अनुध्यात है और यदि ऐसी कोई सूचना नहीं दी जाती, तो इस बात का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता कि किसी पुलिस अधिकारी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 के अधीन इस प्रकार के किसी अपराध के मामले में अन्वेषण करने का कोई प्राधिकार प्राप्त होगा । यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) के स्पष्टीकारण के अनुसार "शिकायत" को परिभाषित करते हुए किसी पुलिस अधिकारी द्वारा तैयार की गई किसी रिपोर्ट को परिवाद केवल तब प्रतीत किया जाता है जब यह अन्वेषण के पश्चात् किसी असंज्ञेय अपराध के कारण का प्रकटीकारण करती है । तथापि, प्रतिभूति अधिनियम की धारा 25 इसी अधिनियम की धारा 23 के अधीन कारित किसी अपराध को संज्ञेय बनाती है । इसलिए, किसी भी दृष्टिकोण से यह नहीं कहा जा सकता कि पुलिस अधिकारी द्वारा अन्वेषण किया जा सकता है और अन्वेषण के पश्चात् पुलिस अधिकारी द्वारा जो फाइल किया जाएगा उसको शिकायत प्रतीत किया जा सकता है, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2(घ) के स्पष्टीकारण में अभिकथित है । इसलिए, उन शर्तों, जिन पर पहले भी चर्चा की गई है, को पूरा किए बिना पुलिस अधिकारी द्वारा किया गया अन्वेषण प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों की योजना के अंतर्गत पूर्णरूपेण अमान्य होगा । तथापि, यदि इन शर्तों को पूरा कर दिया जाता है,

तो निश्चित रूप से अन्वेषण किया जा सकता है, गिरफ्तारी की जा सकती है और अन्वेषण के अंतिम परिणाम को उपदर्शित करने वाली रिपोर्ट भी फाइल की जा सकती है जिसको विशेष न्यायालय के समक्ष फाइल किया जाएगा जिससे कि वह उस पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 या 204 में से किसी के भी अनुसार कार्यवाही कर सके ।

33. विद्वान् लोक अभियोजक ने भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड द्वारा जारी मार्ग-दर्शक नियम पुस्तक का अवलंब लिया जिसमें अनेक अनुतोषों में एक अनुदेश यह है कि चूंकि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराध धारा 25 के अनुसार संज्ञेय होते हैं, पुलिस अन्वेषण कर सकती है । मैं यहां तक कहना चाहता हूं कि ऐसा कोई भी अनुदेश विधि की मात्र संकल्पना होगी जिसका पालन भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड द्वारा किया जाएगा, जो धारा 26 के अधीन एक शिकायत हो सकती है । एक शिकायतकर्ता की विधि की संकल्पना विधि का स्थान नहीं ले सकती । मार्ग-दर्शक नियम पुस्तिका का विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा लिया गया अवलंब मेरे विचार में गलत है ।

34. आवेदक के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल और साथ ही विद्वान् लोक अभियोजक, दोनों ने अपनी-अपनी दलीलों के विभिन्न आधारों के समर्थन में **जीवन कुमार राऊत** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब लिया । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा इस मामले का अवलंब इस सिद्धांत के आधार पर लिया गया है कि प्रतिभूति अधिनियम एक विशेष कानून होने के कारण **दंड प्रक्रिया संहिता** के उपबंधों पर अभिभावी होगा, जब दोनों कानूनों के मध्य कोई टकराव उत्पन्न हो और विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा इस मामले का अवलंब माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति के आधार पर लिया गया है जो इस मामले के पैराग्राफ 25 में दर्शित है और जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चूंकि 1994 के **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** किसी समुचित प्राधिकारी द्वारा की गई शिकायत की अनुपस्थिति में संज्ञान लिए जाने को प्रतिषिद्ध करता है और यद्यपि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अन्वेषण अभिकारण की समस्त शक्तियां प्राप्त हैं, फिर भी इसको समुचित प्राधिकारी के समक्ष शिकायत याचिका फाइल करनी होगी और न कि **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 22 की अपेक्षाओं के सामंजस्य में कोई पुलिस रिपोर्ट ।

35. मैं नहीं समझता कि **दंड प्रक्रिया संहिता** के उपबंधों के ऊपर

विशेष कानून के अभिभावी होने के सिद्धांत के बारे में कोई टकराव इस सीमा तक हो सकता है कि वे (विशेष कानून के उपबंध) **दंड प्रक्रिया संहिता** के उपबंधों को उपांतरित या प्रतिस्थापित कर सकें । किंतु वह सिद्धांत जिसको विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा पैराग्राफ 25 में माननीय उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्ति से निष्कर्षित किया है, को उससे वास्तव में प्रकट होने वाले सिद्धांत के रूप में नहीं देखा जा सकता । चूंकि उन मताभिव्यक्तियों को उस अधिनियम में समाविष्ट विनिर्दिष्ट उपबंधों के प्रकाश में किया गया है, विशेष रूप से **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 13, जो उपबंध स्पष्टतः प्रतिभूति अधिनियम में अनुपस्थित है । **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 13 अभिव्यक्त रूप से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अन्वेषण करने का प्राधिकार प्रदान करती है । इसलिए माननीय उच्चतम न्यायालय ने धारा 22, जो अधिकथित करती है कि न्यायालय उस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान केवल तभी लेगा जब उस अधिनियम की धारा 13 के उपबंधों के अधीन समुचित प्राधिकारी द्वारा कोई शिकायत फाइल की जाएगी, के उपबंधों का समाधान करते हुए अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो अन्वेषण कर सकता है, फिर भी वह न्यायालय के समक्ष अन्वेषण की समाप्ति पर जो फाइल कर सकता है, वह मात्र शिकायत याचिका होगी और न कि पुलिस रिपोर्ट । जैसाकि पहले अभिकथित किया गया है, **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक (लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम** की धारा 13 के समरूप उपबंध प्रतिभूति अधिनियम में अनुपस्थित है और इसलिए माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **जीवन कुमार राऊत** (उपरोक्त) वाले मामले में की गई उपरोक्त मताभिव्यक्ति विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा अंगीकृत दलीलों की कोई सहायता नहीं करती ।

36. परस्पर विरोधी पक्षों ने मेरे समक्ष दो मामले निर्दिष्ट किए हैं (i) **डा. संध्या अरुण कुलकर्णी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] और (ii) **पंकज पाठक** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य** वाला असंप्रकाशित मामला ।

37. **डा. संध्या कुलकर्णी** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि 1994 के **गर्भधारण पूर्व और निदान क्लिनिक**

---

[1] 2016 इलाहाबाद एम. आर. (क्रिमिनल) 963.

(लिंग चयन प्रतिबंध) अधिनियम वाले मामले की धाराएं 17 और 28 को एक साथ पढ़े जाने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इस अधिनियम के उपबंधों के अतिलंघन के लिए शिकायत समुचित प्राधिकारी या उसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी द्वारा फाइल की जानी चाहिए और यदि शिकायत ऐसे प्राधिकारी या अधिकारी द्वारा फाइल नहीं की जाती, तो न्यायालय शिकायत का संज्ञान लेने से निरावृत्त होगा । **पंकज पाठक** वाले असंप्रकाशित मामले में लिया गया निर्णय याची और प्रत्यर्थी के मध्य समझौते को दृष्टि में रखते हुए लिया गया निर्णय प्रतीत होता है और इस संदर्भ में न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गई है कि पुलिस को प्रतिभूति अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के बाबत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत करने का प्राधिकार नहीं है ।

38. **डा. संध्या कुलकर्णी** (उपरोक्त) वाला मामला एक भिन्न अधिनियमिति के संदर्भ में दिया गया निर्णय है और इसलिए यह मामला वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रत्यक्षतः लागू नहीं होता और इस संदर्भ में यह टिप्पणी की गई है कि प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अधीन दंडनीय अपराध के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत नहीं की जा सकती । मैं नहीं समझता कि मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश में की गई इस प्रकार की टिप्पणी इस मामले में अंतर्वलित विवाद को निर्णीत करने में हमारी उद्देश्यपूर्ण सहायता कर सकती है ।

39. हम उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुंचते हैं जो इस आदेश में अभिनिश्चित प्रश्नों का उत्तर देता है :–

(क) प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय किसी अपराध के अभिकथितकरण की शिकायत केवल केंद्रीय सरकार या राज्य सरकार या भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड या मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज या किसी व्यक्ति, जो धारा 26 में उल्लिखित प्राधिकारियों की कोटि के अंतर्गत आता है या जो प्रतिभूति अधिनियम के उपबंधों के अतिलंघन द्वारा प्रभावित व्यक्ति है, द्वारा फाइल की जा सकती है ।

(ख) प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 द्वारा अनुध्यात किसी प्राधिकारी या किसी व्यक्ति द्वारा शिकायत का फाइल किया जाना अनिवार्य शर्त के रूप में विधि को गति प्रदान करता है ।

(ग) प्रतिभूति अधिनियम के अधीन किसी भी श्रेणी के पुलिस अधिकारी को अधिनियम की धारा 26 के अधीन शिकायत फाइल करने के लिए कोई प्राधिकार प्रदान नहीं किया गया है ।

(घ) कोई पुलिस अधिकारी न तो प्रतिभूति अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के संबंध में अन्वेषण कर सकता है और न ही उनके संबंध में गिरफ्तारी कर सकता है जब तक कि आदेश में विस्तारपूर्वक वर्णित अपेक्षित शर्तों को पूरा नहीं कर दिया जाता ।

(ङ) प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23 के अधीन दंडनीय अपराधों पर विचार करने के लिए प्रक्रिया अधिनियम की धारा 26, 26ख और धारा 26घ और साथ ही दंड प्रक्रिया संहिता के लागू होने योग्य और सुसंगत उपबंधों द्वारा शासित होगी, विशेष रूप से वे उपबंध जो दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 15 और 16 में समाविष्ट हैं ।

40. यदि एक बार यह निष्कर्ष निकलता है कि पुलिस अधिकारी द्वारा कोई अन्वेषण आरंभ नहीं किया जा सकता जब तक कि प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के निबंधनों के अनुसार शिकायत फाइल नहीं कर दी जाती और जब तक कि सक्षम न्यायालय द्वारा उसको प्रतिभूति अधिनियम की धारा 23(1) के विभिन्न खंडों के अधीन कारित अभिकथित अपराधों के संबंध में अन्वेषण करने के प्रयोजनार्थ अभिव्यक्त रूप से प्राधिकृत नहीं कर दिया जाता, पुलिस अधिकारी द्वारा कोई भी गिरफ्तारी नहीं की जा सकती । इस मामले में अभी तक प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के निबंधनों के अनुसार कोई शिकायत फाइल नहीं की गई है । इसलिए जहां तक अपराध का संबंध है, आवेदक पुष्टि के साथ अग्रिम जमानत पर निर्मुक्त किए जाने का हकदार नहीं होगा ।

41. जहां तक भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के अधीन रजिस्ट्रीकृत अपराध का संबंध है, मैं स्पष्ट करता हूं कि अभी तक अभिलेख पर कोई ऐसी सामग्री उपलब्ध नहीं हो पाई है जिससे सभी या किसी अपराध में आवेदक की प्रथमदृष्ट्या संलिप्तता दर्शित हो सके । इस बाबत कोई अभिकथन भी अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है कि किसी की राशि या संपत्ति को बेईमानीपूर्वक हड़पे जाने के आशय से भ्रमित किया गया हो । अभिलेख पर ऐसा कुछ भी उपलब्ध नहीं है जिससे यह दर्शित हो सके कि आवेदक द्वारा कुछ दस्तावेजों को प्रथमदृष्ट्या तैयार किया गया । वास्तव में इन आधारों पर अभियोजन की कमी के बारे में अधिक विवाद नहीं उठाया

गया है । इसलिए, आवेदक इन अपराधों के बाबत भी पुष्टि के साथ अग्रिम जमानत का अनुतोष प्राप्त करने का हकदार है ।

42. मैं समझता हूं कि यह स्पष्ट किया जाना उचित होगा कि इस आदेश में की गई मताभिव्यक्ति इन आवेदनों में उठाए गए विवाद को निर्णीत किए जाने के प्रयोजन तक सीमित रहेगी और इसलिए समुचित आवेदन फाइल किए जाने या समुचित कार्यवाही आरंभ किए जाने, जैसाकि विधि के अधीन अनुज्ञेय हो, उनका अर्थान्वयन प्रतिभूति अधिनियम की धारा 26 के अधीन अनुध्यात सक्षम प्राधिकारी या व्यक्ति से पृथक् किए जाने के प्रयोजनार्थ नहीं किया जाएगा ।

43. परिणामतः, मैं इन आवेदनों को मंजूर किए जाने के लिए आनत हूं । अतः यह आदेश पारित किया जा रहा है ।

आवेदन मंजूर किए जाते हैं और आवेदक को इन आवेदनों में इस न्यायालय द्वारा तारीख 13 जुलाई, 2016 को प्रदान की गई अग्रिम जमानत की पुष्टि उन्हीं शर्तों पर की जाती है, जिनको इसमें मताभिव्यक्तियों के अधीन रहते हुए व्यक्त किया गया है ।

तद्नुसार, सभी आवेदन निस्तारित किए जाते हैं ।

आवेदन मंजूर किया गया ।

शु.

प्रकाश

बनाम

कर्पागम और एक अन्य

तारीख 12 अप्रैल, 2016

न्यायमूर्ति एम. वेणुगोपाल

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 112 – विवाहित स्थिति के दौरान बच्चे का जन्म – यदि बच्चे का जन्म उसकी माता और किसी पुरुष के मध्य विधिमान्य विवाह के कायम रहने के दौरान हुआ तो जब तक कि यह दर्शित न किया जा सके कि विवाह के पक्षकारों की परस्पर पहुंच ऐसे किसी समय नहीं थी जब उसका गर्भाधान किया जा सकता था, यह इस बात का निश्चायक सबूत होगा कि वह उसी पुरुष का धर्मज पुत्र है ।

चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने (याची/पति द्वारा फाइल की गई) 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई 2014 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 में तारीख 8 अक्तूबर, 2014 का आदेश पारित करते हुए मताभिव्यक्ति की कि याची (पति) और प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के मध्य विवाह स्वीकृत रूप में दोनों पक्षों की सहमति से संपन्न हुआ था और जब विवाह संबंध विद्यमान होते हैं और विवाह संबंध की अवधि के दौरान बच्चे का जन्म होता है तो यह निष्कर्ष निकलता है कि बच्चा विवाह संबंध की विद्यमानता के दौरान जन्मा था और इस प्रकार प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी को डी एन ए परीक्षा के अध्यधीन रखे जाने का आदेश पारित करने की ईप्सा करने वाली याचिका को खारिज कर दिया । पुनरीक्षण याची/पति ने चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश से व्यथित होते हुए यह पुनरीक्षण याचिका फाइल की गई । पुनरीक्षण याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – हमारे समक्ष उपस्थित मामले में प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी (जो 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में विचारण न्यायालय के समक्ष अभि. सा. 1 है) का सुस्पष्ट साक्ष्य यह है कि पुनरीक्षण याची/पति प्रथम प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे का पिता है और अभि. सा. 1 का यह साक्ष्य भी जिससे बिना किसी त्रुटि के यह संकेत मिलता है कि विवाह आरुलमिघू पावादाई-मूर्ति विनायगर सुब्रमण्य स्वामी थिरूकोईल मंदिर, ईश्वरापुरम, चेय्यार कस्बा में संपन्न हुई थी और इसलिए विवाह से उत्पन्न बच्चे की वैधता के बारे में

सुदृढ़ उपधारणा मौजूद है । निश्चित रूप से इस उपधारणा का खंडन सुदृढ़, स्पष्ट, संतोषप्रद और निश्चायक साक्ष्य द्वारा किया जा सकता है । संक्षेप में उपधारणा से मात्र अधिसंभव्यताओं या किसी ऐसी परिस्थिति जिससे संदेह उत्पन्न होता है, के आधार पर इनकार नहीं किया जा सकता । किसी सभ्य समाज में पक्षों के मध्य विवाह और विधिमान्य विवाह की निरंतरता के दौरान जन्में बच्चे की वैधता की नितांत रूप से स्पष्ट उपधारणा होती है और जिसके संरक्षक पिता-माता एक दूसरे के पास पहुंच सकते हैं । बच्चे, जिसके माता-पिता एक दूसरे के पास पहुंच सकते हैं, के पैतृत्व के बारे में जांच किया जाना रुचिकर नहीं होता । वास्तव में, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 लोक नैतिकता और लोक नीति की उपधारणा पर आधारित है । यह न्यायालय उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए इस तथ्य का उल्लेख करते हुए कि प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी ने अभि. सा. 1 के रूप में विचारण न्यायालय के समक्ष सुस्पष्टतः स्पष्ट शब्दों में अभिकथित किया है कि उसका विवाह पुनरीक्षण याची के साथ तारीख 16 मई, 2008 को संपन्न हुआ था । आगे, उसने 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में पृष्ठ सं. 2 पर अभिकथित किया है कि पुनरीक्षण याची/पति ने वर्ष 2008 में विवाह के पूर्व उसके साथ शारीरिक संबंध बनाए थे । इस प्रकार पुनरीक्षण याची/पति की ओर से किए गए विपरीत अभिवाक् कि वह किसी भी समयबिन्दु पर विवाह के पूर्व या पश्चात् किसी भी प्रकार का लैंगिक संभोग में अन्तर्वलित नहीं हुआ था । इस परिप्रेक्ष्य में विचार करते हुए द्वितीय प्रत्यर्थी/बच्चे, जिसका जन्म विधिमान्य विवाह की विद्यमानता के दौरान हुआ, के पैतृत्व के बारे में भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के अधीन विचारण न्यायालय की निश्चायक उपधारणा को इस न्यायालय की सुविचारित राय में न्यायतः पुनर्स्थापित किया जाता है । परिणामस्वरूप, चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट न्यायालय द्वारा 2014 के प्रकीर्ण मामला सं. 10 में 2014 के सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 को खारिज किए जाने के बाबत विचार को त्रुटिहीन पाया जाता है । परिणामस्वरूप, पुनरीक्षण याचिका विफल होती है । (पैरा 28, 29 और 30)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 2 एस. सी. सी. 576 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 932 : **नन्दलाल वासुदेव बद्वैक** बनाम **लता नन्दलाल बद्वैक और एक अन्य** ;	14

[2011] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 52 = 2011 (2) सी. टी. सी. 635 : **मुनियप्पन** बनाम **पोन्नी** ; 13

[2009] (2009) 12 एस. सी. सी. 454 : **शामलाल** बनाम **संजीव कुमार** ; 28,29

[2009] 2009 (3) सी. टी. सी. 672 : **एम. कार्तिक** बनाम **आर. मनोहर** ; 12

[2008] 2008 (7) एम. एल. जे. 336 (मद्रास) : **सरस्वती** बनाम **चिन्ना रेनगे गॉउंडर** ; 25

[2003] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3450 = 2003 (2) सी. टी. सी. 760 : **शारदा** बनाम **धर्मपाल** ; 9

[2002] ए. आई. आर. 2002 मद्रास 462 = 2002 (2) मद्रास ला जर्नल 175 : **पार्वती अम्माल** बनाम **एस. एम. अम्माल** ; 19

[2000] ए. आई. आर. 2000 केरल 50 = 2000 (1) कर्नाटक ला जर्नल 281 (कर्नाटक) : **निनगम्मा** बनाम **चिकय्या** ; 25

[1978] 1978 क्रिमिनल ला जर्नल (एन. ओ. सी.) 176 : **समीला देवी** बनाम **शंकर दास** ; 23

[1971] ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 2352 : **पेरूमल नादार** बनाम **पौन्नुसामी** ; 22

[1965] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 364 : **महेन्द्र** बनाम **सुशीला** ; 24

[1954] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 176 : **सी. वेंकेटेश्वरलू** बनाम **सी. वेंकेटनारायण** ; 23

[1942] ए. आई. आर. 1942 मद्रास 129 : **टी. पी. मोनी** बनाम **अम्मा कन्नू** ; 23

[1937] ए. आई. आर. 1937 लाहौर 784 : **थांडी राम** बनाम **जगन्नाथ** ; 20

[1935] ए. आई. आर. 1935 प्रिवी कौंसिल 1999 :
भगवान बनाम **महेश** ; 20

[1934] ए. आई. आर. 1934 प्रिवी कौंसिल 49 :
कर्पाया बनाम **मयांडी** ; 21

[1925] ए. आई. आर. 1925 लाहौर 414 :
कहान सिंह बनाम **नाथा सिंह** । 20

पुनरीक्षण (दांडिक) अधिकारिता : 2016 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 222.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397/401 के अधीन पुनरीक्षण याचिका ।

याची की ओर से श्री पी. मणि

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री वी. आर. अप्पास्वामी और आर. ससी कुमार

निर्णय

पुनरीक्षण याची/पति ने चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई 2014 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 में पारित तारीख 8 अक्तूबर, 2014 के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई पुनरीक्षण याचिका की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया गया है ।

2. चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने (याची/पति द्वारा फाइल किए गए) 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई 2014 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 में तारीख 8 अक्तूबर, 2014 का आदेश पारित करते हुए मताभिव्यक्ति की थी कि याची/प्रत्यर्थी (पति) और प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के मध्य विवाह स्वीकृत रूप में दोनों पक्षों की सहमति से संपन्न हुआ था और जब विवाह संबंध विद्यमान होते हैं और विवाह संबंध की अवधि के दौरान बच्चे का जन्म होता है तो यह निष्कर्ष निकलता है कि बच्चा विवाह संबंध की विद्यमानता के दौरान जन्मा था, जैसाकि 1872 के भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 में अधिकथित है और इस प्रकार प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी को डी एन ए परीक्षा के अध्यधीन रखे जाने का आदेश पारित करने की ईप्सा करने वाली याचिका को खारिज कर दिया ।

3. पुनरीक्षण याची/पति ने आक्षेपित व्यक्ति के रूप में चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई 2014 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 में पारित तारीख 8 अक्तूबर, 2014 के आक्षेपित आदेश की शुद्धता, विधिमान्यता और वैधता को चुनौती इस अभिवाक् के आधार पर देते हुए पुनरीक्षण याचिका फाइल की कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधि की दृष्टि में अनियमितताओं और अवैधताओं से भरा हुआ है ।

4. पुनरीक्षण याची के विद्वान् काउंसेल ने दलील देते हुए यह अभिवाक् किया कि विवाह के पहले भी प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी ने गर्भधारण कर लिया था और इसलिए विचारण न्यायालय को 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई 2014 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 6486, जिसके द्वारा पुनरीक्षण याची/पति ने द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे के पैतृत्व के संबंध में डी एन ए परीक्षण कराए जाने के लिए न्यायालय द्वारा आदेश पारित किए जाने की ईप्सा की थी, को स्वीकार कर लेना चाहिए था ।

5. पुनरीक्षण याची की मुख्य शिकायत यह है कि विचारण न्यायालय को 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई 2014 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 को भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के निबंधनों के अनुसार इस उपधारणा का आश्रय लेते हुए खारिज नहीं करना चाहिए था कि द्वितीय प्रत्यर्थी पुनरीक्षण याची की ही पुत्री है चूंकि उसका जन्म पुनरीक्षण याची और प्रथम प्रत्यर्थी के मध्य विवाह की विद्यमानता के दौरान हुआ और इस संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है ।

6. अंततः पुनरीक्षण याची द्वारा यह पक्षकथन किया गया कि बच्चे के पैतृत्व के संबंध में वास्तविक और गंभीर विवाद है, अतः विचारण न्यायालय द्वारा बच्चे के पैतृत्व के संबंध में दोनों पक्षों के विनिर्दिष्ट पक्षकथन और खंडन पक्षकथन पर उचित और वास्तविक परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाना चाहिए था ।

7. पुनरीक्षण याची/पति के विद्वान् काउंसेल ने 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में अभि. सा. 1 (प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी) के साक्ष्य को निर्दिष्ट किया जिसके द्वारा और जिसके अधीन उसने शपथपूर्वक कथन किया कि वह इस बात को साबित करने के लिए तैयार है कि द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चा पुनरीक्षण याची/पति से ही जन्मा था ।

8. इसके अतिरिक्त अभि. सा. 1 ने अपने साक्ष्य में अभिकथित किया

है कि वह डी एन ए परीक्षण के लिए इच्छुक है और द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे का जन्म कार्तिक माह में (तारीख 22 नवम्बर, 2008 को) चेन्नई में हुआ था ।

9. याची/पति के विद्वान् काउंसेल ने इस प्रक्रम पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **शारदा** बनाम **धर्मपाल**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को उद्धृत किया जिसमें पैरा 74 में यह मताभिव्यक्ति की गई है :–

> "यदि कोई व्यक्ति न्यायालय द्वारा पारित आदेश के बावजूद अपनी चिकित्सीय परीक्षा कराने के लिए उपस्थित होने से इनकार करता है, तो विपरीत अनुमान लगाए जाने के लिए ठोस मामला बनता है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 न्यायालय को विपरीत अनुमान लगाने के लिए सक्षम बनाती है, यदि कोई पक्ष ऐसे सुसंगत साक्ष्य को, जो उसके कब्जे में है, प्रस्तुत करने से इनकार करता है ।"

10. पुनरीक्षण याची/पति के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक अभिवाक् किया कि संविधान के अनुच्छेद 21 के निबंधनों के अनुसार विचारण न्यायालय की फाइल पर 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में वैवाहिक कार्यवाहियों की प्रतिरक्षा करने के पुनरीक्षण याची के अधिकार समुचित रूप से संरक्षित हैं और वास्तव में न्यायालय को इस मामले में विवादग्रस्त विषयवस्तु के संबंध में डी एन ए परीक्षा कराए जाने का आदेश पारित करने की अन्तर्निहित शक्ति प्राप्त है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि यह न्यायालय का अधिकार है कि उस आदेश को पारित करने के द्वारा अलग-अलग पक्षों के परस्पर विरोधी हितों का समाधान करें ।

11. याची के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक अभिवाक् किया कि याची/पति द्वारा फाइल की गई 2014 की प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 को स्वीकार किए जाने और डी एन ए परीक्षा कराए जाने का आदेश पारित किए जाने के कारण प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और अंततः डी एन ए परीक्षा कराए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई याचिका मंजूर किए जाने के कारण विचारण न्यायालय विवादग्रस्त विषयवस्तु की वास्तविक सत्यता का पता लगा पाने के समर्थ होगा ।

12. इसके अतिरिक्त याची के विद्वान् काउंसेल ने **एम. कार्तिक**

---

[1] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3450 = 2003 (2) सी. टी. सी. 760.

बनाम **आर. मनोहर**[1] वाले मामले, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के अधीन उपधारणा का खंडन ठोस साक्ष्य द्वारा किया जाना अपेक्षित है जो डी एन ए परीक्षा के परिणाम से प्राप्त किया जा सकता है, में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया ।

13. याची के विद्वान् काउंसेल ने **मुनियप्पन** बनाम **पोन्नी**[2] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को उद्धृत किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि डी एन ए परीक्षा का आदेश पारित किए जाने में कोई बाधा नहीं है और परिणामस्वरूप पति द्वारा फाइल की गई सिविल रिवीजन याचिका को मंजूर कर लिया गया ।

14. याची के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय का ध्यान माननीय उच्चतम न्यायलाय द्वारा **नन्दलाल वासुदेव बद्वैक** बनाम **लता नन्दलाल बद्वैक और एक अन्य**[3] वाले मामले में पारित विनिश्चय की ओर आकर्षित किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि डी एन ए परीक्षा द्वारा उपलब्ध कराए गए वैज्ञानिक सबूत स्वीकार्य होते हैं और बच्चे के धर्मजत्व की उपधारा का खंडन किया जा सकता है ।

15. याची के विद्वान् काउंसेल ने अपनी दलीलों को जारी रखते हुए उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए पूर्वोक्त विनिश्चय के पेज 586 पर पैरा सं. 17 का अवलंब लिया जिसके द्वारा और जिसके अधीन यह मताभिव्यक्ति की गई :–

> "हम को यह स्मरण होना चाहिए कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 ऐसे समय पर अधिनियमित की गई थी जब आधुनिक वैज्ञानिक उन्नति और डी एन ए परीक्षण विधान-मंडल के विचारण क्षेत्र के अंतर्गत भी नहीं थे । डी एन ए परीक्षण का परिणाम वैज्ञानिक रूप से सही माना जाता है । यद्यपि धारा 112 में उल्लिखित शर्तों के समाधान के आधार पर निश्चायक सबूत की उपधारणा पर बल दिया गया है, किन्तु यह उपधारणा खंडनीय भी है । यह उपधारणा किसी निश्चायक विधिक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विधिसम्मत साधनों का प्रयोग कर सकती है । जब सत्यता और तथ्य ज्ञात हों, तो हमारे

---

[1] 2009 (3) सी. टी. सी. 672.
[2] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 52 = 2011 (2) सी. टी. सी. 635.
[3] (2014) 2 एस. सी. सी. 576 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 932.

विचार में किसी उपधारणा के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती । इसके विपरीत यदि कोई साक्ष्य उपलब्ध हो तो उपधारणा खंडनीय होती है और उसको सबूत के समक्ष झुकना चाहिए । न्यायहित की पूर्ति सर्वोत्तम तरीके से तभी होगी जब सत्य का पता लगाया जाए और न्यायालय को सर्वोत्तम रूप से उपलब्ध वैज्ञानिक उपाय उपलब्ध कराए जाए और जब तक कि विवाद्यक के तथ्यों का विज्ञान के पास कोई उत्तर उपलब्ध न हो, उसको उपधारणाओं का सहारा लेने के लिए न छोड़ा जाए । हमारे विचार में जब विधि के अधीन परिकल्पित निश्चायक सबूत और वैज्ञानिक प्रगति पर आधारित सबूत, जिसको विश्व समुदाय द्वारा स्वीकृत किया गया है, के मध्य कोई टकराव है तो पश्चात्वर्ती को पूर्ववर्ती के ऊपर अभिभावी होना चाहिए ।"

16. इस प्रक्रम पर 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में 2014 के सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 में पुनरीक्षण याची/पति ने पैरा 2 में अभिकथित किया कि उसने मुख्य याचिका और अन्तर्वर्ती आवेदन में एक प्रकथन किया था कि द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क का जन्म उसके द्वारा नहीं हुआ । इसके अतिरिक्त 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 के खंडन में पुनरीक्षण याची/पति ने अभिकथित किया कि प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के परिवार ने उसके परिवार के सदस्यों को धमकी दी थी और तारीख 16 मई, 2008 को विवाह का रजिस्ट्रीकरण करा लिया था । इसके अतिरिक्त, उसने अभिकथित किया कि किसी भी समयबिन्दु पर अर्थात् विवाह के पूर्व, उसका द्वितीय प्रत्यर्थी/पत्नी के साथ लैंगिक संसर्ग नहीं हुआ था । उसने यह अभिकथित नहीं किया कि वह एक दिन के लिए भी प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के साथ एक परिवार के रूप में नहीं रहा ।

17. सारतः, प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के विद्वान् काउंसेल ने निवदेन किया कि पुनरीक्षण याची/पति ने 2014 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 में फाइल की गई याचिका में और अपने कथन में भी कहीं पर भी यह उल्लेख नहीं किया है कि उसके और प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के मध्य विवाह संपन्न नहीं हुआ था और यह अभिकथन कि द्वितीय प्रत्यर्थी/बच्चा उसके द्वारा उत्पन्न नहीं हुआ था । जैसाकि याची द्वारा मात्र वर्तमान मामले के प्रयोजनार्थ दर्शित किया गया है ।

18. प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के विद्वान् काउंसेल ने भी विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल की गई 2014 की प्रकीर्ण वाद सं. 10 में फाइल की गई (प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी और द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे द्वारा) भरणपोषण

याचिका को निर्दिष्ट किया जिसमें उन्होंने पुनरीक्षण याची/पति से 7,500/- रुपए के मासिक भरणपोषण की ईप्सा की है, इस न्यायालय का ध्यान पैरा 3 की ओर आकर्षित किया जिसमें यह अभिकथित किया गया है कि उसके पिता-माता, नातेदार और पुनरीक्षण याची/पति के पिता-माता और नातेदार अनकवूर पुलिस थाना में उपस्थित थे और पुलिस थाना के बाहर और पिता-माता और नातेदारों की उपस्थिति में पुनरीक्षण याची और प्रथम प्रत्यर्थी का विवाह तारीख 16 मई, 2008 को संपन्न कराए जाने का निर्णय लिया गया था और उसी निर्णय के आधार पर प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी और पुनरीक्षण याची/पति के मध्य विवाह अरुलमिघू पावदाई-मूर्थी विनायगर सुब्रमण्य स्वामी थिरूकोईल, इश्वारापुरम, चेय्यार कस्बा के मंदिर में उक्त निर्धारित तारीख को संपन्न हुआ था । प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित किया कि पुनरीक्षण याची और प्रथम प्रत्यर्थी के मध्य उक्त विवाह चेय्यार के उपरजिस्ट्रार के कार्यालय में रजिस्ट्रीकृत किया गया था जिसकी रजिस्ट्रीकरण सं. 2008 का 57 है और प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा सबूत के रूप में विवाह रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र भी 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 के साथ इस न्यायालय के समक्ष संलग्न किया गया था ।

19. प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी की ओर से निवेदन किया गया कि विवाह के परिणामस्वरूप प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी ने द्वितीय प्रत्यर्थी को तारीख 22 नवम्बर, 2008 को एग्मोर सरकारी महिला और शिशु अस्पताल में जन्म दिया । इसके अतिरिक्त प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी का यह पक्षकथन भी है कि पुनरीक्षण याची/पति के साथ उसका विवाह अन्तर्जातीय विवाह था और पुनरीक्षण याची/पति के परिवार ने उसको अपनी पुत्रवधू के रूप में स्वीकार नहीं किया था और साथ ही उसने यह भी अभिकथित किया कि उन लोगों ने द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे को भी परिवार के उत्तराधिकारी के रूप में स्वीकार नहीं किया था । यहां पर यह उल्लेखनीय है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 53 "पुलिस अधिकारी के अनुरोध पर कार्रवाई करते हुए चिकित्सा व्यवसायी द्वारा अभियुक्त के परीक्षण" के बारे में चर्चा करती है । इस संबंध में इस न्यायालय ने प्रासंगिक रूप से उल्लेख किया है कि विधि विवाहों की विधिमान्यता और उनकी वैधता के पक्ष में झुकती है और न कि दोगलेपन के पक्ष में, जैसाकि **पार्वती अम्माल** बनाम **एस. एम. अम्माल**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में अधिकथित किया गया है । हमको यह

---

[1] ए. आई. आर. 2002 मद्रास 462 = 2002 (2) मद्रास ला जर्नल 175.

नहीं भूलना चाहिए कि पक्षों के विवाह के दौरान जन्मे बच्चे के बारे में यह उपधारणा की जाती है कि वह एक वैध बच्चा है और वास्तव में इस संबंध में अन्यथा साबित करने का भार पति के कंधों पर होता है ।

20. इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि "वैधता" तथ्य का प्रश्न होती है और इसका निर्णय चार पहलुओं के संदर्भ में किया जा सकता है :–

(1) बच्चे की माता कौन है ?

(2) बच्चे का पिता कौन है ?

(3) क्या बच्चे के पिता और माता उसके गर्भधारण या जन्म के समय विधिक रूप से विवाहित थे ?

(4) क्या बच्चे, जब उसका गर्भधारण हो सकता था, के पिता और माता के पास युक्तिसंगत रूप से एक साथ रहने का अवसर था ?

पद "वैधता" एक संकल्पना है जिसमें दो बातें अनुध्यात हैं, (1) यह कि बच्चे के नैसर्गिक संरक्षक एक दूसरे से विवाहित थे ; (2) यह कि वे एक दूसरे से विधिक रूप से विवाहित थे । इस संबंध में इस बात को कहने से कोई लाभ नहीं है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के अधीन निश्चायक उपधारणा यह है कि एक बच्चा जिसका जन्म उसके पिता-माता के मध्य विधिमान्य विवाह की विधिमान्यता के दौरान होता है, उनका वैध बच्चा है, इस प्रश्न को ध्यान में रखे बिना कि क्या बच्चे का जन्म उस विवाह के छह, सात या आठ माह के पश्चात् हुआ, जैसाकि **कहान सिंह** बनाम **नाथा सिंह**[1] और **थांडी राम** बनाम **जगन्नाथ**[2] वाले मामलों में अभिनिर्धारित किया गया । इसके अतिरिक्त जब तक कि पति संतोषजनक और निश्चायक रूप से पहुंच न पाने को साबित करने के समर्थ है, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के अधीन उपधारणा अभिभावी होगी जैसाकि **भगवान** बनाम **महेश**[3] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में अभिनिर्धारित किया गया है ।

21. उपरोक्त के अतिरिक्त भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के अधीन शब्द "पहुंच" का अर्थ है संभोग का अवसर न होना जैसाकि **कर्पाया** बनाम **मयांडी**[4] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में अभिनिर्धारित किया गया है ।

---

[1] ए. आई. आर. 1925 लाहौर 414.

[2] ए. आई. आर. 1937 लाहौर 784.

[3] ए. आई. आर. 1935 प्रिवी कौंसिल 1999.

[4] ए. आई. आर. 1934 प्रिवी कौंसिल 49.

22. इस न्यायालय ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **पेरूमल नादार** बनाम **पौन्नुसामी**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का उल्लेख किया जिसमें यह मताभिव्यक्ति और अभिनिर्धारित किया गया कि, जब तक कि पति पहुंच की असमर्थता को साबित कर पाने में सक्षम है, बच्चे की वैधता की उपधारणा से इनकार नहीं किया जाएगा जैसाकि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय में अभिनिर्धारित किया गया है ।

23. **सी. वेंकेटेश्वरलू** बनाम **सी. वेंकेटनारायण**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए एक अन्य विनिश्चय में यह मताभिव्यक्ति की गई कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 में उल्लिखित उपधारणा निश्चायक है और इससे उस समय बिन्दु पर जब बच्चे का जन्म हो सकता है, मात्र "पहुंच न पाने" के सबूत द्वारा इनकार किया जा सकता है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 जन्म की अवधि को अंगीकृत किए जाने के आधार पर अग्रसर होती है जैसाकि वैधता के न्यायनिर्णायक बिन्दु के रूप में "गर्भधारण" से विभेदित होता है । **समीला देवी** बनाम **शंकर दास**[3] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में यह मताभिव्यक्ति की गई यदि पक्षों के पास अनेक दिनों तक एक दूसरे के पास पहुंचने का अवसर था और बच्चे का जन्म विवाह के छह माह के पश्चात् हुआ तो बच्चे को वैध अभिनिर्धारित किया गया । इसके अतिरिक्त "पहुंच न पाने" के निश्चायक सबूत को साबित किया जाना चाहिए । निश्चित रूप से इसको किसी अन्य भौतिक तथ्य की भांति असंदिग्ध प्रकृति के प्रत्यक्ष और पारिस्थितिक साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है किन्तु जब तक इस प्रकार का साक्ष्य सामने नहीं आ जाता, किसी भी न्यायालय के लिए इस संभाव्यता पर विश्वास करना संभव नहीं होगा कि "पहुंच" का अभाव था जैसाकि **टी. पी. मोनी** बनाम **अम्मा कन्नू**[4] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में पूर्ण न्यायपीठ द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है ।

24. सामान्यतया, जब दो मुकदमा लड़ने वाले पक्षों के मध्य कोई निष्कर्ष नहीं निकलता तो किसी अभिवचन में दी गई "स्वीकृति" पर विचार किया जा सकता है । इस प्रक्रम पर इस न्यायालय द्वारा **महेन्द्र** बनाम **सुशीला**[5] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए

---

[1] ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 2352.

[2] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 176.

[3] 1978 क्रिमिनल ला जर्नल (एन. ओ. सी.) 176.

[4] ए. आई. आर. 1942 मद्रास 129.

[5] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 364.

विनिश्चय का स्मरण किया जाना लाभदायक होगा जिसमें यह मताभिव्यक्ति की गई कि जब न्यायालय इस बाबत संतुष्ट है कि दुरभिसंधि के लिए कोई अवसर नहीं है तो, इसका कोई कारण नहीं है कि पक्षों द्वारा की गई स्वीकृति पर सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 8, नियम 5 और धारा 58 के अधीन सिविल कार्यवाहियों के रूप में विचार किया जाए । सामान्यतया, यदि पति इस बात को साबित करने के योग्य है कि उसने अपनी पत्नी के साथ सुसंगत अवधि के दौरान संभोग किया था या उसके पास अपनी पत्नी के साथ लैंगिक संभोग का युक्तिसंगत अवसर था, तो न्यायालय को पति को रक्त समूह साक्ष्य का आश्रय लेने की अनुज्ञा प्रदान नहीं करनी चाहिए ।

25. आगे, जब किसी बच्चे का जन्म किसी विवाह के फलस्वरूप होता है, तो उसकी वैधता के बाबत निश्चायक उपधारणा होती है, जब तक कि उसका खंडन विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा न कर दिया जाए (देखें **सरस्वती** बनाम **चिन्ना रेनगे गॉउंडर**[1] वाला मामला) । यह विधि का एक स्वयं सिद्ध सिद्धांत है कि वैधता की उपधारणा विधि की खंडनीय उपधारणा होती है और इससे इनकार करने का एक मात्र मार्ग यह है कि विवाह के एक पक्ष द्वारा यह दर्शित किया जाए कि सुसंगत समय बिन्दु पर वह अपनी पत्नी के पास नहीं पहुंच सकता था अर्थात् उस अवधि के दौरान जब बच्चे या उस व्यक्ति जिसकी वैधता विवादित है, का गर्भधारण किया जा सकता था या उसका जन्म हो सकता था । विवाह के पक्ष एक दूसरे के पास उस समय बिन्दु पर जब बच्चे का जन्म हुआ, नहीं पहुंच सकते थे के बाबत पद "उपधारणा कर सकेगा" और "उपधारणा करेगा" और पद "निश्चायक सबूत" को 1872 के भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 4 में परिभाषित किया गया है जैसाकि **निनगम्मा** बनाम **चिकय्या**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया ।

26. एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्य जिसका अनदेखा नहीं किया जा सकता, यह है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 केवल तभी लागू होगी जब पिता यह साबित करने के समर्थ हो कि वह महिला के साथ लैंगिक मैथुन के प्रयोजनार्थ नहीं पहुंच सकता था और केवल तभी वह पुरुष पिता नहीं कहला सकता । किन्तु जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है अभि. सा. 1 (प्रत्यर्थी/पत्नी) का सुस्पष्ट साक्ष्य यह है कि पुनरीक्षण याची/पति ही द्वितीय प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे का पिता है ।

---

[1] 2008 (7) एम. एल. जे. 336 (मद्रास).

[2] ए. आई. आर. 2000 केरल 50 = 2000 (1) कर्नाटक ला जर्नल 281 (कर्नाटक).

27. यह कहने का कोई लाभ नहीं है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 "जन्म का समय बिन्दु" को निर्णायक तथ्य के रूप में निर्दिष्ट करती है न कि गर्भधारण के समय बिन्दु के रूप में । जब कभी भी किसी बच्चे का जन्म वैध विवाह के परिणामस्वरूप होता है, तो उसकी वैधता की उपधारणा का प्रश्न अंतर्वलित होता है जब तक कि उसके जन्म को अत्यंत विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा साबित नहीं कर दिया जाता (उदाहरणार्थ विवाह-विच्छेद द्वारा, लंबे और निरंतर पृथक्करण द्वारा, बीमारी द्वारा इत्यादि) कि पक्ष एक दूसरे के पास नहीं पहुंचे थे या नहीं पहुंच सकते थे । जो भी मामला हो ।

28. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी (जो 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में विचारण न्यायालय के समक्ष अभि. सा. 1 है) का सुस्पष्ट साक्ष्य यह है कि पुनरीक्षण याची/पति प्रथम प्रत्यर्थी/अवयस्क बच्चे का पिता है और अभि. सा. 1 का यह साक्ष्य भी जिससे बिना किसी त्रुटि के यह संकेत मिलता है कि विवाह आरुलमिघू पावदाई-मूर्थी विनायगर सुब्रमण्य स्वामी थिरूकोईल मंदिर, ईश्वरापुरम, चेय्यार कस्बा में संपन्न हुई थी और इसलिए विवाह से उत्पन्न बच्चे की वैधता के बारे में सुदृढ़ उपधारणा मौजूद है । निश्चित रूप से इस उपधारणा का खंडन सुदृढ़, स्पष्ट, संतोषप्रद और निश्चायक साक्ष्य द्वारा किया जा सकता है । संक्षेप में उपधारणा से मात्र अधिसंभव्यताओं या किसी ऐसी परिस्थिति जिससे संदेह उत्पन्न होता है, के आधार पर इनकार नहीं किया जा सकता, जैसाकि **शामलाल** बनाम **संजीव कुमार**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में अभिनिर्धारित किया गया है ।

29. किसी सभ्य समाज में पक्षों के मध्य विवाह और विधिमान्य विवाह की निरंतरता के दौरान जन्में बच्चे की वैधता की नितांत रूप से स्पष्ट उपधारणा होती है और जिसके संरक्षक पिता-माता एक दूसरे के पास पहुंच सकते हैं । बच्चे, जिसके माता-पिता एक दूसरे के पास पहुंच सकते हैं, के पैतृत्व के बारे में जांच किया जाना रुचिकर नहीं होता । वास्तव में, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 लोक नैतिकता और लोक नीति की उपधारणा पर आधारित है, जैसाकि **शामलाल** बनाम **संजीव कुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है ।

30. यह न्यायालय उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए इस तथ्य का उल्लेख करते हुए कि प्रथम प्रत्यर्थी/पत्नी ने अभि. सा. 1 के रूप में

---

[1] (2009) 12 एस. सी. सी. 454.

विचारण न्यायालय के समक्ष सुस्पष्टतः स्पष्ट शब्दों में अभिकथित किया है कि उसका विवाह पुनरीक्षण याची के साथ तारीख 16 मई, 2008 को संपन्न हुआ था । आगे, उसने 2014 के प्रकीर्ण वाद सं. 10 में पृष्ठ सं. 2 पर अभिकथित किया है कि पुनरीक्षण याची/पति ने वर्ष 2008 में विवाह के पूर्व उसके साथ शारीरिक संबंध बनाए थे । इस प्रकार पुनरीक्षण याची/पति की ओर से किए गए विपरीत अभिवाक् कि वह किसी भी समयबिन्दु पर विवाह के पूर्व या पश्चात् किसी भी प्रकार का लैंगिक संभोग में अन्तर्वलित नहीं हुआ था । इस परिप्रेक्ष्य में विचार करते हुए द्वितीय प्रत्यर्थी/बच्चे, जिसका जन्म विधिमान्य विवाह की विद्यमानता के दौरान हुआ, के पैतृत्व के बारे में भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 112 के अधीन विचारण न्यायालय की निश्चायक उपधारणा को इस न्यायालय की सुविचारित राय में न्यायतः पुनर्स्थापित किया जाता है । परिणामस्वरूप, चेय्यार के विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट न्यायालय द्वारा 2014 के प्रकीर्ण मामला सं. 10 में 2014 के सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 6486 को खारिज किए जाने के बाबत विचार को त्रुटिहीन पाया जाता है । परिणामस्वरूप, पुनरीक्षण याचिका विफल होती है ।

31. परिणामस्वरूप, दांडिक पुनरीक्षण याचिका खारिज की जाती है । यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण याचिका खारिज किए जाने के कारण दोनों पक्ष 2014 के प्रकीर्ण मामला सं. 10 में अंतिम सुनवाई के समय तथ्यात्मक और विधिक अभिवाक् विधि अनुसार उठाने से प्रवारित नहीं होंगे । 2016 की संबद्ध दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 1541 भी खारिज की जाती है ।

पुनरीक्षण याचिका खारिज की गई ।

शु.

टी. कोट्टाइसामी

बनाम

पुलिस आयुक्त, चेन्नई और एक अन्य

तारीख 9 जनवरी, 2017

न्यायमूर्ति एम. जयचंद्रन और न्यायमूर्ति टी. माठीवनन्

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21, 22(5) [सपठित तमिलनाडु मद्य तस्करों, साइबर कानून अपराधियों, ओषधि अपराधियों, वन अपराधियों, गुंडागर्दी, अनैतिक व्यापार अपराधियों, रेत अपराधियों, लैंगिक अपराधियों, झुग्गी झोपड़ी के कब्जे से संबंधित अपराधियों और अवैध रूप से वीडियो बनाने वाले अपराधियों के खतरनाक क्रियाकलाप अधिनियम, 1982 (1982 का 14) की धारा 3(1)] – प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण, किन्तु कतिपय दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध की कार्यवाही को संरक्षण – सरकार पर संवैधानिक बाध्यता होती है कि बंदी के प्रत्यावेदन पर बिना किसी विलंब के विचार करे – यद्यपि अनुच्छेद 22 में ऐसे किसी प्रत्यावेदन पर विनिश्चय किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई अवधि विहित नहीं की गई है, किन्तु इस अनुच्छेद के खंड (5) में स्पष्टतः उपबंध है कि बंदी के प्रत्यावेदन पर अविलंब विचार किया जाना चाहिए और उसका निस्तारण यथाशीघ्र किया जाना चाहिए ।

यह बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका बंदी के भाई द्वारा इसमें के प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित तारीख 22 जून, 2016 के निरोध आदेश, जिसके अंतर्गत बंदी को 1982 के तमिलनाडु मद्य तस्करों, साइबर कानून अपराधियों, ओषधि अपराधियों, वन अपराधियों, गुंडागर्दी, अनैतिक व्यापार अपराधियों, रेत अपराधियों, लैंगिक अपराधियों, झुग्गी झोपड़ी के कब्जे से संबंधित अपराधियों और अवैध रूप से वीडियो बनाने वाले अपराधियों के खतरनाक क्रियाकलाप अधिनियम, 1982 की धारा 3(1) के अधीन निरोध किया गया, में बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका जारी किए जाने, अभिलेख मंगाए जाने और इस आदेश को अभिखंडित किए जाने और प्रत्यर्थियों को बंदी को सशरीर पेश किए जाने और उसको मुक्त किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई है । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह स्थापित विधि है कि प्रत्यावेदन पर अत्यंत शीघ्रतापूर्वक

विचार किया जाना चाहिए और उसका निस्तारण अत्यावश्यकता के भाव के साथ बिना किसी अपरिहार्य विलंब के किया जाना चाहिए । प्रत्यावेदन के निस्तारण में किसी ऐसे विलंब, जिसका स्पष्टीकरण न दिया जा सकता हो, का उल्लेख न किया जाना संवैधानिकता बाध्यता का भंग होगा और यह निरंतर निरोध को अननुज्ञेय और अवैध बना देगा । हमारे समक्ष प्रस्तुत किए गए अभिलेखों से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि 11 दिनों के विलंब के लिए कोई स्वीकार किए जाने योग्य स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया गया है । इसलिए हम अभिनिर्धारित करते हैं कि विलंब के कारण बंदी को आगे निरोधाधीन रखा जाना गलत होगा । "सरकार पर यह संवैधानिक बाध्यता होती है कि बंदी द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रत्यावेदन पर बिना किसी विलंब के विचार किया जाए । यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 22 द्वारा इस प्रकार के प्रत्यावेदन पर विनिश्चय किए जाने के लिए कोई अवधि विहित नहीं की गई है, अनुच्छेद 22 के खंड 5 में शब्द "यथाशीघ्र" यह संदेश संप्रेषित करते हैं कि प्रत्यावेदन पर विचार किया जाना चाहिए और यथाशीघ्र उसका निस्तारण किया जाना चाहिए ।" विलंब के दिनों की संख्या अतात्विक होती है और जिस बात पर विचार किया जाना चाहिए यह है कि क्या संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा कारित विलंब का उचित रीति में स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया गया है । किन्तु इस मामले में 11 दिनों के विलंब का उचित रीति में स्पष्टीकरण बिल्कुल भी नहीं दिया गया है । (पैरा 6, 7 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	(2011) 10 एस. सी. सी. 781 : **उम्मुसबिना** बनाम **केरल राज्य** ;	9
[1999]	(1999) 1 एस. सी. सी. 417 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 684 : **राजम्मल** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ।	2,7,8

रिट (दांडिक) अधिकारिता : 2016 की एच. सी. पी. सं. 1507.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री पी. शिवराज मोहन

प्रत्यर्थी की ओर से श्री वी. एम. आर. राजनेत्रन, अपर लोक अभियोजक

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. जयचंद्रन ने दिया ।

न्या. जयचंद्रन – यह बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका बंदी के भाई सेलवासकर **उर्फ** सेकर उम्र लगभग 30 वर्ष पुत्र थांगापांडी द्वारा इसमें के प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित तारीख 22 जून, 2016 के निरोध आदेश सं. 582/बीसीडीएफजीआईएसएसएसवी/2016, जिसके अंतर्गत बंदी का निषेध तमिलनाडु मद्य तस्करों, साइबर कानून अपराधियों, ओषधि अपराधियों, वन अपराधियों, गुंडागर्दी, अनैतिक व्यापार अपराधियों, रेत अपराधियों, लैंगिक अपराधियों, झुग्गी झोपड़ी के कब्जे से संबंधित अपराधियों और अवैध रूप से वीडियो बनाने वाले अपराधियों के खतरनाक क्रियाकलाप अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन किया गया, में बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका जारी किए जाने, अभिलेख मंगाए जाने और उपरोक्त आदेश को अभिखंडित किए जाने और प्रत्यर्थियों बंदी को सशरीर पेश किए जाने और उसको मुक्त किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई है ।

2. यद्यपि याची के विद्वान् काउंसेल ने याचिका में आक्षेपित निरोधादेश पर आक्रमण किए जाने के परियोजनार्थ अनेक आधारों का अवलंब लिया है, किन्तु उन्होंने अपनी दलीलों को केवल बंदी के प्रत्यावेदन पर विचार किए जाने में कारित विलंब से संबंधित आधारों तक सीमित रखा । याची के विद्वान् काउंसेल के अनुसार बंदी का प्रत्यावेदन सरकार द्वारा तारीख 5 जुलाई, 2016 को प्राप्त हुआ था और निरोध प्राधिकारी से तारीख 5 जुलाई, 2016 को ही टिप्पणी मांग ली गई थी । तथापि, सरकार द्वारा टिप्पणी तारीख 11 जुलाई, 2016 को प्राप्त हुई अर्थात् छह दिनों के विलंब के पश्चात् । उन्होंने आगे निवेदन किया कि फाइल पर संबद्ध उप सचिव द्वारा तारीख 11 जुलाई, 2016 को विचार किया गया था और तत्पश्चात् इसी फाइल पर संबद्ध मंत्री द्वारा तारीख 21 जुलाई, 2016 को विचार किया गया और बंदी को उसका प्रत्यावेदन अस्वीकृत किए जाने से संबंधित पत्र तारीख 22 जुलाई, 2016 को भेज दिया गया था । उन्होंने आगे निवेदन किया कि विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा प्रस्तुत किए गए प्ररूप के अनुसार इस दौरान पांच अवकाश पड़े थे और इन मध्यवर्ती अवकाशों के दौरान भी कार्य करने के बावजूद 11 दिनों का विलंब हो गया, जिनका कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया । अतः बंदी के प्रत्यावेदन पर विचार किए जाने में विभिन्न प्रक्रमों पर विलंब कारित हुआ । बंदी के प्रत्यावेदन पर विचार किए जाने में विलंब, जिसका कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है, निरोधादेश को दूषित कर देता है । याची के विद्वान्

काउंसेल ने इस दलील के समर्थन में **राजम्मल** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया ।

3. याची के विद्वान् काउंसेल की दलील का विरोध करते हुए विद्वान् लोक अभियोजक ने निवेदन किया कि आक्षेपित निरोधादेश तर्कपूर्ण और पर्याप्त सामग्री के आधार पर पारित किया गया है और निरोध के आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता या शिथिलता नहीं है । विद्वान् अपर लोक अभियोजक ने आगे निवेदन किया कि संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा बंदी के प्रत्यावेदन पर विचार किए जाने और उसका निस्तारण किए जाने में जानबूझकर कोई विलंब कारित नहीं किया गया । उन्होंने आगे दलील दी कि इस प्रकार का विलंब अभियोजन के प्रयोजनार्थ आक्षेपित निरोधादेश के लिए घातक नहीं है, चूंकि संबद्ध प्राधिकारी फाइल पर प्रत्यावेदन की प्राप्ति की तारीख से विचार कर रहे हैं और इसलिए उन्होंने याचिका को खारिज किए जाने की प्रार्थना की ।

4. हमने परस्पर विरोधी दलीलों, तथ्यों और निर्णयज विधियों को ध्यान में रखते हुए विचार किया और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया ।

5. विद्वान् अपर लोक अभियोजक द्वारा प्रस्तुत प्ररूप के अनुसार बंधक का प्रत्यावेदन सरकार द्वारा तारीख 5 जुलाई, 2016 को प्राप्त हुआ था और उस पर निरोध प्राधिकारी से उसी दिन अर्थात् 5 जुलाई, 2016 को टिप्पणी मांग ली गई थी । यद्यपि सरकार द्वारा तारीख 11 जुलाई, 2016 को टिप्पणी प्राप्त कर ली गई अर्थात् छह दिनों के विलंब के पश्चात् और बंदी के मामले पर संबद्ध उप सचिव द्वारा तारीख 11 जुलाई, 2016 को विचार किया गया और उस पर संबद्ध मंत्री द्वारा तारीख 21 जुलाई, 2016 को विचार किया गया और उसको तारीख 22 जुलाई, 2016 को अस्वीकृत कर दिया गया था । उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि तारीख 5 जुलाई, 2016 और 11 जुलाई, 2016 के मध्य (अर्थात् टिप्पणी मांगे जाने और टिप्पणी प्राप्त होने के मध्य के मध्यवर्ती दिनों) छह दिनों का विलंब कारित हुआ । अतः बंदी के प्रत्यावेदन पर विचार करते समय विभिन्न प्रक्रमों पर विलंब कारित हुआ । यदि हम सरकारी अवकाशों को सम्मिलित करते हुए इस दौरान पड़ने वाले पांच अवकाशों के दिनों की छूट प्रदान कर दें, फिर भी

---

[1] (1999) 1 एस. सी. सी. 417 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 684.

11 दिनों का विलंब कारित हुआ जिसका कोई स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

6. यह स्थापित विधि है कि प्रत्यावेदन पर अत्यंत शीघ्रतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए और उसका निस्तारण अत्यावश्यकता के भाव के साथ बिना किसी अपरिहार्य विलंब के किया जाना चाहिए । प्रत्यावेदन के निस्तारण में किसी ऐसे विलंब, जिसका स्पष्टीकरण न दिया जा सकता हो, का उल्लेख न किया जाना संवैधानिकता बाध्यता का भंग होगा और यह निरंतर निरोध को अननुज्ञेय और अवैध बना देगा । हमारे समक्ष प्रस्तुत किए गए अभिलेखों से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि 11 दिनों के विलंब के लिए कोई स्वीकार किए जाने योग्य स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया गया है । इसलिए हम अभिनिर्धारित करते हैं कि विलंब के कारण बंदी को आगे निरोधाधीन रखा जाना गलत होगा ।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **राजम्मल** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय में जो अभिनिर्धारित किया गया, वह निम्नलिखित है :—

> "सरकार पर यह संवैधानिक बाध्यता होती है कि बंदी द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रत्यावेदन पर बिना किसी विलंब के विचार किया जाए । यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 22 द्वारा इस प्रकार के प्रत्यावेदन पर विनिश्चय किए जाने के लिए कोई अवधि विहित नहीं की गई है, अनुच्छेद 22 के खंड 5 में शब्द "यथाशीघ्र" यह संदेश संप्रेषित करते हैं कि प्रत्यावेदन पर विचार किया जाना चाहिए और यथाशीघ्र उसका निस्तारण किया जाना चाहिए ।"

8. उच्चतम न्यायालय द्वारा **राजम्मल** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित प्रतिपादना के अनुसार विलंब के दिनों की संख्या अतात्विक होती है और जिस बात पर विचार किया जाना चाहिए यह है कि क्या संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा कारित विलंब का उचित रीति में स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया गया है । किन्तु इस मामले में 11 दिनों के विलंब का उचित रीति में स्पष्टीकरण बिल्कुल भी नहीं दिया गया है ।

9. पुनः, **उम्मुसबिना** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता का इतिहास जैसाकि सर्वविदित है, प्रक्रियात्मक रक्षोपायो पर जोर दिए जाने का

---

[1] (2011) 10 एस. सी. सी. 781.

इतिहास है । संविधान के अनुच्छेद 22(5) में अभिव्यक्ति "यथाशीघ्र" संविधान के निर्माताओं की शंका को स्पष्टतः दर्शित करती है कि बंदी की ओर से किए गए प्रत्यावेदन पर विचार किया जाना चाहिए और उसका निपटारा तुरंत और बिना किसी विलंब के किया जाना चाहिए ।

10. हम उपरोक्त तथ्यों और विधि के प्रकाश में निरोधादेश को इस आधार पर अभिखंडित करने में बिल्कुल भी हिचकिचाहट का अनुभव नहीं करते कि सरकार द्वारा बंदी के प्रत्यावेदन के निस्तारण में विलंब कारित किया गया ।

11. तद्नुसार, बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका मंजूर की जाती है और प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित तारीख 22 जून, 2016 को निरोधादेश को अभिखंडित किया जाता है । यह निर्देशित किया जाता है कि बंदी को तुरंत स्वतंत्र कर दिया जाए जब तक कि किसी अन्य मामले में उसकी उपस्थिति अपेक्षित न हो ।

याचिका मंजूर की गई ।

शु.

(2017) 1 दा. नि. प. 272 **मध्य प्रदेश**

अन्नपूरण नाथ

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

तारीख 19 सितंबर, 2016

न्यायमूर्ति वेद प्रकाश शर्मा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 307 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227] – हत्या का प्रयत्न – आरोप की विरचना – याची ने छड़ जो प्रथमदृष्ट्या घातक हथियार है, से पीड़ित के सिर पर हमला किया जिससे पीड़ित को क्षति पहुंची क्योंकि क्षति की प्रकृति यह विनिश्चित करने के कारकों में से एक है कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध का प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है या नहीं, अतः विद्वान् विचारण न्यायालय ने याची के विरुद्ध हत्या के प्रयत्न के लिए आरोप की विरचना में कोई विधिक या तथ्यात्मक गलती

नहीं की ।

यह आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397/401 के अधीन द्वितीय अपर सेशन न्यायाधीश, इन्दौर द्वारा सेशन विचारण मामला सं. 432/2016 में तारीख 28 जुलाई, 2016 को पारित किए गए उस आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया है जिसके द्वारा दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किया गया, साथ ही दंड संहिता की धारा 294 और 506 भाग 2 के अधीन अपराध के लिए भी आवेदक के विरुद्ध आरोप विरचित किया गया था । उच्च न्यायालय द्वारा आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – विधि निष्पक्ष रूप से सुस्थापित है कि आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर न्यायालय के लिए मात्र यह अपेक्षित है कि वह यह सुनिश्चित करे कि अभिकथित अपराध में अभियुक्त के आलिप्त होने से संबंधित सामग्री प्रथमदृष्ट्या उपलब्ध है या नहीं । इसका निष्कर्ष मामले के अभिलेख और उसके साथ प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों के आधार पर निकालना चाहिए । दंड संहिता की धारा 307 का परिशीलन करने से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के लिए न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह यह सिद्ध करे कि अभियुक्त ने कृत्य नहीं किया है और यह भी सिद्ध करे कि कृत्य ऐसे आशय या ज्ञान से किया गया है और ऐसी परिस्थितियों के अधीन किया गया है कि यदि वह ऐसे कृत्य से मृत्यु कारित कर देता तो हत्या का दोषी होता, यदि ऐसे कृत्य से उपहति कारित होती है तब अपराधी आजीवन कारावास का दायी होगा, अन्यथा कारावास की अधिकतम विहित अवधि 10 वर्ष होगी । आहत को पहुंची क्षति घोर क्षति नहीं है और न ही उससे मृत्यु कारित होना संभावित है, यह अपराध दंड संहिता की धारा 307 के अधीन नहीं बनता है, यहां तक कि प्रथमदृष्ट्या भी स्वीकार्य नहीं हैं । वर्तमान मामले में, आवेदक ने आहत के सिर पर अभिकथित रूप से सरिए से वार किया है जो प्रथमदृष्ट्या एक घातक आयुध है । आहत के सिर में क्षति कारित हुई है । यह एक संयोग की बात है कि उसके सिर में घातक क्षति कारित नहीं हुई है । इस संबंध में विधि स्पष्ट है कि क्षति की प्रकृति कारकों में से एक कारक है और एकमात्र इस आधार पर यह विनिश्चित नहीं किया जा सकता है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध बनता है या नहीं । अभिकथित अपराध में अभियुक्त की सह-अपराधिता से संबंधित घोर संदेह आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त है, अतः यह नहीं

कहा जा सकता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने आवेदक के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित करने में कोई भी विधिक या तथ्यात्मक त्रुटि की है । (पैरा 7, 10 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	2015 क्रिमिनल ला रिपोर्ट (मध्य प्रदेश) 376 : **बालू सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	3
[2015]	2015 क्रिमिनल ला रिपोर्ट (मध्य प्रदेश) 716 : **केशव शर्मा और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	3
[2014]	2014 (1) एम. पी. एल. जे. (क्रिमिनल) 480 : **भल्लू** उर्फ **बालकिशन यादव और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	3
[2014]	2014 क्रिमिनल ला रिपोर्ट (मध्य प्रदेश) 169 : **मोहम्मद शाहिद** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	3
[2010]	(2010) 9 एस. सी. सी. 368 : **सज्जन कुमार** बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** ;	8
[2004]	ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4119 : **बप्पा** उर्फ **बापू** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** ;	11
[2001]	2001 (3) डब्ल्यू. एल. सी. 603 : **शाहिद खान** बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य** ।	12

पुनरीक्षण (दांडिक) अधिकारिता : 2016 का दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 1009.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397/401 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री अविनाश सिरपुरकर

प्रत्यर्थी की ओर से श्री सी. एस. उज्जैनिया (लोक अभियोजक)

आदेश

यह आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397/401 के अधीन

द्वितीय अपर सेशन न्यायाधीश, इन्दौर द्वारा सेशन विचारण मामला सं. 432/2016 में तारीख 28 जुलाई, 2016 को पारित किए गए उस आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया है जिसके द्वारा दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किया गया, साथ ही दंड संहिता की धारा 294 और 506 भाग 2 के अधीन अपराध के लिए भी आवेदक के विरुद्ध आरोप विरचित किया गया था ।

2. आवेदक के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि अभिकथित रूप से जो क्षतियां कारित हुई हैं वे साधारण प्रकृति की हैं ; उसके शरीर के किसी भी अंग पर कोई भी गंभीर क्षति कारित नहीं हुई है ; चिकित्सक ने यह राय व्यक्त नहीं की है कि उसको कारित हुई क्षतियां प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हैं, अतः यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त का आशय हत्या कारित करने का था । यह दलील दी गई है कि अभिकथित रूप से यह घटना पार्किंग को लेकर अचानक घटित हुई थी, अतः इन परिस्थितियों में आवेदक को दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध से उन्मोचित किया जाना चाहिए ।

3. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने अपनी दलील के समर्थन में **बालू सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1], **केशव शर्मा और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2], **भल्लू** उर्फ **बालकिशन यादव और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[3] और **मोहम्मद शाहिद** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[4] वाले मामलों का अवलंब लिया है ।

4. इसके प्रतिकूल राज्य के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के लिए मुख्य रूप से अभियुक्त के आशय पर विचार किया जाना चाहिए । यदि अभियुक्त ने मृत्यु कारित करने के आशय से क्षति पहुंचाई है, तब ऐसा करना प्रथमदृष्ट्या दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध की कोटि में आएगा और यह महत्वपूर्ण नहीं है कि क्षति सामान्य है या गंभीर । यह दलील दी गई है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि चिकित्सक को यह राय देनी

---

[1] 2015 क्रिमिनल ला रिपोर्ट (मध्य प्रदेश) 376.
[2] 2015 क्रिमिनल ला रिपोर्ट (मध्य प्रदेश) 716.
[3] 2014 (1) एम. पी. एल. जे. (क्रिमिनल) 480.
[4] 2014 क्रिमिनल ला रिपोर्ट (मध्य प्रदेश) 169.

चाहिए कि आहत को कारित क्षति प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है । यह भी दलील दी गई है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने उसके समक्ष प्रस्तुत मामले के सम्पूर्ण अभिलेख और दस्तावेजों का निर्धारण करने पर प्रथमदृष्ट्या यह निष्कर्ष निकाला है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित करने हेतु पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है, इसलिए आक्षेपित निर्णय में कोई भी हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

5. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुना गया है और अभिलेख का परिशीलन किया गया है ।

6. परस्पर विरोधी पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर विचार करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 227 को निर्दिष्ट करना समुचित होगा जो निम्न प्रकार है :–

> "धारा 227 – यदि मामले के अभिलेख और उसके साथ दी गई दस्तावेजों पर विचार कर लेने पर, और इस निमित्त अभियुक्त और अभियोजन के निवेदन की सुनवाई कर लेने के पश्चात् न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है तो वह अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा और ऐसा करने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा ।"

7. विधि निष्पक्ष रूप से सुस्थापित है कि आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर न्यायालय के लिए मात्र यह अपेक्षित है कि वह यह सुनिश्चित करे कि अभिकथित अपराध में अभियुक्त के आलिप्त होने से संबंधित सामग्री प्रथमदृष्ट्या उपलब्ध है या नहीं । इसका निष्कर्ष मामले के अभिलेख और उसके साथ प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों के आधार पर निकालना चाहिए ।

8. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 की व्यापकता वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने विचार किया है जिसमें सुसंगत निर्णय विधि को निर्दिष्ट करते हुए इस निर्णय के पैरा 19 में निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

> "19. यह स्पष्ट है कि आरंभ में यदि ठोस संदेह के आधार पर न्यायालय का यह विचार है कि इस उपधारणा के लिए उसके समक्ष आधार है कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है, तब न्यायालय यह

कहने के लिए स्वतंत्र नहीं है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार नहीं है । अभियुक्त के दोषी होने की उपधारणा आरंभ के प्रक्रम पर केवल इस प्रयोजन से की जानी चाहिए कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि न्यायालय को उसका विचारण करना चाहिए या नहीं । यदि ऐसे साक्ष्य से, जिसे अभियोजन पक्ष अभियुक्त का दोष साबित करने के लिए प्रस्तुत करता है, अभियुक्त का दोष साबित हो जाता है और वह साक्ष्य प्रतिपरीक्षा में चुनौती दिए जाने या प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा खंडन किए जाने के पूर्व स्वीकार कर लिया जाए, तब उससे यह साबित नहीं हो सकता कि अभियुक्त ने अपराध कारित किया है और ऐसी स्थिति में विचारण की कार्यवाही के लिए कोई भी पर्याप्त आधार नहीं होगा ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

9. "दंड संहिता" की धारा 307 को भी निर्दिष्ट किया जा सकता है :–

"307. **हत्या करने का प्रयत्न** – जो कोई किसी कार्य को ऐसे आशय या ज्ञान से और ऐसी परिस्थितियों में करेगा यदि वह उस कार्य द्वारा मृत्यु कारित कर देता तो वह हत्या का दोषी होता, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा और यदि ऐसे कार्य द्वारा किसी व्यक्ति को उपहति कारित हो जाए, तो वह अपराधी या तो आजीवन कारावास से या ऐसे दंड से दंडनीय होगा जैसा एतस्मिनपूर्व वर्णित है ।"

10. दंड संहिता की धारा 307 का परिशीलन करने से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के लिए न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह यह सिद्ध करे कि अभियुक्त ने कृत्य नहीं किया है और यह भी सिद्ध करे कि कृत्य ऐसे आशय या ज्ञान से किया गया है और ऐसी परिस्थितियों के अधीन किया गया है कि यदि वह ऐसे कृत्य से मृत्यु कारित कर देता तो हत्या का दोषी होता, यदि ऐसे कृत्य से उपहति कारित होती है तब अपराधी आजीवन कारावास का दायी होगा, अन्यथा कारावास की अधिकतम विहित अवधि 10 वर्ष होगी ।

11. वास्तव में, दंड संहिता की धारा 307 के अन्तर्गत ऐसी क्षति के लिए कोई सबूत अपेक्षित नहीं है जो घातक हो या जीवन के लिए भयोपरत हो । वास्तव में इस धारा के अन्तर्गत अभियुक्त के कृत्य के प्रभाव को

उसके शास्तिक दायित्व से संबंद्ध करने के लिए महत्वपूर्ण नहीं माना है । इस संबंध में, **बप्पा** उर्फ **बापू** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए निम्न मत को निर्दिष्ट करना उचित होगा :–

> "7. दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दोषसिद्धि को न्यायोचित ठहराना पर्याप्त होगा यदि अभियुक्त आशय रखता हो और साथ ही उस आशय के निष्पादन के लिए अभियुक्त द्वारा स्पष्ट कृत्य किया गया हो । यह आवश्यक नहीं है कि शारीरिक क्षति कारित की जानी चाहिए । यद्यपि वास्तव में कारित की गई क्षति की प्रकृति प्रायः अभियुक्त का आशय स्पष्ट करने के लिए सहायक हो जाती है, अभियुक्त का ऐसा आशय अन्य परिस्थितियों से भी स्पष्ट किया जा सकता है और कुछ मामलों में वास्तविक रूप से कारित किए गए घावों को निर्दिष्ट किए बिना भी सुनिश्चित किया जा सकता है । इस धारा के अन्तर्गत अभियुक्त के कृत्य और उसके परिणाम, यदि कोई हो, के बीच अन्तर किया गया है । न्यायालय को इस पर विचार करना चाहिए कि अभियुक्त द्वारा किया गया कृत्य उसके परिणाम को विचार में लिए बिना, साशय या ज्ञान से किया गया था या नहीं और धारा में उल्लिखित परिस्थितियों के अधीन किया गया है या नहीं । आपराधिक कृत्य करने के लिए जो प्रयास किया जाता है वह आवश्यक नहीं है कि वह उपान्तिक कृत्य हो । यदि अभियुक्त का आशय स्पष्ट हो जाता है और उस आशय को निष्पादित करने के लिए उसके द्वारा स्पष्ट कार्य किया जाता है तब धारा 307 को गठित करने के लिए विधि की दृष्टि से पर्याप्त शर्त होगी ।"

12. **शाहिद खान** बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट किया जा सकता है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां तक दंड संहिता की धारा 307 का संबंध है, यह सुस्थिर विधि है कि इस अपराध के लिए यह आवश्यक नहीं है कि आहत व्यक्ति को उसके नाजुक अंग पर गंभीर क्षति कारित हुई हो और यह भी आवश्यक नहीं है कि चिकित्सक ने यह राय दी हो कि आहत को ऐसी क्षतियां पहुंची हैं जो प्रकृति के सामान्य

---

[1] ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4119.

[2] 2001 (3) डब्ल्यू. एल. सी. 603.

अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हैं । दंड संहिता की धारा 307 के लिए यह निश्चित किया जाना महत्वपूर्ण है कि अभियुक्तों का आशय आहत की मृत्यु कारित करने का था या नहीं । जहां तक अभियुक्त के आशय का संबंध है, इसका पता क्षतियों की संख्या, अपराध में प्रयोग किए गए आयुध की प्रकृति, अभियुक्त द्वारा क्षति पहुंचाए गए आहत के शरीर के भाग, अन्य परिस्थितियां जिनके अधीन अपराध कारित किया गया है और अभियुक्त तथा आहत के बीच संबंध आदि, से लगाया जा सकता है ।

13. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए आवेदक के विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि आहत को पहुंची क्षति घोर क्षति नहीं है और न ही उससे मृत्यु कारित होना संभावित है, यह अपराध दंड संहिता 307 के अधीन नहीं बनता है, यहां तक कि प्रथमदृष्ट्या भी स्वीकार्य नहीं हैं । वर्तमान मामले में, आवेदक ने आहत के सिर पर अभिकथित रूप से सरिए से वार किया है जो प्रथमदृष्ट्या एक घातक आयुध है । आहत के सिर में क्षति कारित हुई है । यह एक संयोग की बात है कि उसके सिर में घातक क्षति कारित नहीं हुई है । इस संबंध में विधि स्पष्ट है कि क्षति की प्रकृति कारकों में से एक कारक है और एकमात्र इस आधार पर यह विनिश्चित नहीं किया जा सकता है कि दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध बनता है या नहीं । अभिकथित अपराध में अभियुक्त की सह-अपराधिता से संबंधित घोर संदेह आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त है, अतः यह नहीं कहा जा सकता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने आवेदक के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित करने में कोई भी विधिक या तथ्यात्मक त्रुटि की है ।

14. आवेदक के विद्वान् काउंसेल द्वारा जिन मामलों का अवलंब लिया गया है वे प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर आधारित हैं । इस प्रकार, इन्हें आबद्धकारी नजीर के रूप में नहीं माना जा सकता, विशेषकर, **बप्पा** उर्फ **बापू** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा परिकल्पित विधि के आधार पर तो किसी भी दशा में नहीं माना जा सकता ।

15. उपरोक्त बातों को दृष्टिगत करते हुए इस आवेदन में कोई सार नहीं है, यह खारिज किया जाना चाहिए और तद्नुसार यह खारिज किया जाता है ।

आवेदन खारिज किया गया ।

अस.

हिमाचल प्रदेश राज्य

बनाम

दलीप कुमार

तारीख 1 मार्च, 2017

न्यायमूर्ति धरम चंद चौधरी और न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – साक्ष्य – यदि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा मृतक की हत्या किए जाने की घटना को देखे जाने का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है और साक्षियों का साक्ष्य सुना-सुनाया है तथा विचारण न्यायालय द्वारा निर्णय पारित करने में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं बरती गई है तो अभियुक्त दोषमुक्त होने का हकदार है ।

अभिकथित घटना चन्द्रशील के निर्माणाधीन ग्राम गंधार पर रात्रि के समय तारीख 26 अक्तूबर, 2010 को घटित हुई थी और अरविन्द गोस्वामी मृतक के जीवन को समाप्त कर दिया गया जो ग्राम लखनपुर, पोस्ट आफिस नवीनपुर, पुलिस थाना और जिला जुमुही (बिहार) का निवासी था । उक्त अभिकथन मृतक के साथ रहने वाला गांववासी और सहश्रमिक के विरुद्ध भी लगाए गए थे कि उसे गैंती से प्रहार करके मारा गया था जब मृतक शराब के नशे में था और अभियुक्त के साथ झगड़ा होने की बात अभिकथित रूप से प्रकट है । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार अभियुक्त मृतक और एक व्यक्ति अवधेश के साथ अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 द्वारा श्रमिक के रूप में नियुक्त किया गया था जो ग्राम गंधार में निर्माणाधीन मकान में मार्बल लगाने का काम कर रहे थे, उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन को अवधेश अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के पुराने मकान पर 9.00 बजे अपराह्न उनसे दही मांगने के लिए गया और उसके पीछे अभियुक्त भी वहां पर पहुंचा । उन्होंने उस समय टेलीविजन पर कार्यक्रम भी देखे थे । कुछ समय पश्चात् शिकायतकर्ता अभियुक्त दलीप कुमार और अपने साथी श्रमिक अवधेश के साथ गांव में निर्माणाधीन मकान पर गया । रास्ते पर जब वे राधाकृष्ण मंदिर के नजदीक थे, अभियुक्त ने अभि. सा. 1 से कहा कि मृतक शराब के नशे में है और उसे गालियां दे रहा है और झगड़ रहा है ।

उसने गालियां देना और झगड़ना नहीं रोका बावजूद इसके भी कि उसे ऐसा न करने के लिए अनुरोध किया गया, उसने उसकी हत्या कर दी । इस पर अभि. सा. 1 अभियुक्त और अवधेश के साथ पुराने मकान पर लौट आया । वहां उसे चन्द्रशील के पिता को अभियुक्त दलीप कुमार द्वारा किए गए प्रकटीकरण के बारे में अवगत कराया था । इस पर वह अभि. सा. 1 और उसके पिता चन्द्रशील और उसका चचेरा भाई संदीप कुमार को अभियुक्त द्वारा साथ लाया गया था और अवधेश निर्माणाधीन मकान की ओर गया । अभि. सा. 8 ने अभियुक्त से दरवाजा खोलने के लिए कहा । अभियुक्त ने उसे बताया कि दरवाजा खुला है । वे सभी मृतक अरविन्द गोस्वामी को देखने के लिए मकान के अंदर गए । अभियुक्त जो बाहर खड़ा था वहां से नजदीक खेतों की ओर भाग गया । कमरे में उन्होंने अरविन्द गोस्वामी के शव को देखा जो सफेद रंग की चादर में लपेटे हुए था तथा उसके सिर के घाव से रक्त टपक रहा था । अरविन्द गोस्वामी को देखकर उसने यह अनुमान लगाया कि उसकी पहले ही मौत हो चुकी है । उन्होंने अभियुक्त को ढूंढने का प्रयास किया और वह कहीं पर भी नहीं मिला । इस पर अभि. सा. 8 ने पुरुषोत्तम चंद प्रधान ग्राम पंचायत और 9 जुगल किशोर वार्ड पंच को सूचना दी थी । वे भी घटनास्थल पर पहुंचे । अभि. सा. 10 ने पुलिस थाना लंबागांव जिला कांगड़ा पर पुलिस को दूरभाष से सूचना दी । पुलिस थाने में प्राप्त की गई सूचना को दैनिक डायरी पर रपट 11.45 बजे अपराह्न मध्यरात्रि पर उसकी प्रविष्टि की गई थी । परिणामस्वरूप अन्वेषक अधिकारी, उपनिरीक्षक/ थानागृह अधिकारी, त्रिलोक चन्द को उपनिरीक्षक गंभीर चंद द्वारा अपने साथ ले जाया गया था और अन्य पुलिस पदधारी शासकीय यान में घटनास्थल पर पहुंचे । कथन अभिलिखित करने के पश्चात् उसे एच. एच. सी. विनोद कुमार के माध्यम से मामले के रजिस्ट्रेशन के लिए पुलिस थाना भेजा गया था जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की । अभि. सा. 14 ने मामले की फाइल प्राप्त की और सिनोध कुमार, फोटोग्राफर को बुलाया और शव की फोटो खिचवाई । घटनास्थल पर निरीक्षण करते हुए नक्शा दूसरे दिन तैयार किया गया था । रक्त-रंजित गद्दा (तलाई) को अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 के समक्ष ज्ञापन के माध्यम से कब्जे में लिया गया । शव के नजदीक जमीन पर फैला हुआ रक्त का नमूने को सूती कपड़ा में उठाया गया था और उसे प्लास्टिक कटोरी में रखा

गया । उसे अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 की मौजूदगी में ज्ञापन द्वारा कब्जे में लिया गया था । मृत्यु समीक्षा कागजात भी तैयार किए गए थे और आवेदन चिकित्सा अधिकारी सी. एच. सी. पालमपुर को भेजा गया था और शव को हेड कांस्टेबल चमन सिंह के माध्यम से शवपरीक्षण करने के लिए भी भेजा गया था । अभियुक्त को सुजानपुर में तारीख 10 अक्तूबर, 2010 को गिरफ्तार किया गया था और उसे पुलिस थाने पर लाया गया था तथा तारीख 28 अक्तूबर, 2010 को उससे पूछताछ करने के दौरान उसने इस प्रभाव का प्रकटीकरण कथन किया था कि उसने चन्द्रशील के निर्माणाधीन मकान के नजदीक झाड़ियों पर गैंती को छुपा दिया था और जिसको उसने वैसे ही हालात में बरामद करा सका । वह पुलिस दल को निर्माणाधीन मकान के नजदीक स्थान पर ले गया था और झाड़ी से उसने गैंती निकाली जिसकी फोटो खींची गई थी और जिसको ज्ञापन के माध्यम से कब्जे में लेकर सम्यक् रूप से मोहरबंद किया गया था । बरामदगी के स्थान का नक्शा भी पृथक् रूप से तैयार किया गया था । साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए थे । चिकित्सा अधिकारी की राय की ईप्सा करने पर उन्होंने यह राय व्यक्त की कि क्षति कारित की गई, जिससे मृतक की मृत्यु कारित होने की संभावना व्यक्त की जा सकती है । आवेदन प्रस्तुत किया गया था । डा. ने यह राय व्यक्त की है कि घातक क्षति की वजह से मृतक की मृत्यु कारित होना संभव है, राय प्रमाणपत्र को इसके साथ प्रस्तुत किया जा सका है । शवपरीक्षण रिपोर्ट अस्पताल से एकत्र किया गया था । आवेदन सहायक इंजीनियर, हिमाचल प्रदेश, लोक निर्माण विभाग को प्रस्तुत किया गया और घटनास्थल का नक्शा तैयार किया गया था जिसे पुलिस फाइल में संलग्न किया गया था । रसायन परीक्षक की रिपोर्ट प्राप्त की गई और अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् न्यायालय में अभियुक्त के विरुद्ध चालान फाइल किया गया था । विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषमुक्त कर दिया । हिमाचल प्रदेश राज्य द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील फाइल की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – साक्षी अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 मुख्य अभियोजन साक्षी हैं जो क्रमशः नातेदारी में पुत्र और पिता हैं । उनका मकान ग्राम कंधार पर निर्माणाधीन था । अभियुक्त, मृतक और अवधेश को उनके द्वारा उक्त मकान में मार्बल लगाने के लिए काम पर रखा गया था ।

स्वीकृततः उन्होंने मृतक और अभियुक्त को एक-दूसरे के साथ लड़ाई-झगड़ा करते हुए नहीं देखा था । उन्होंने गैंती प्रदर्श पी-1 से मृतक के सिर पर प्रहार कारित करते हुए अभियुक्त को नहीं देखा था उनका परिसाक्ष्य यह है कि मृतक के सिर पर गैंती से घातक प्रहार किया गया था यद्यपि इस विश्वास की सच्चाई सुनी-सुनाई है क्योंकि वह स्वयं अभियुक्त ही था जिसने उस प्रक्रम पर अभि. सा. 1 को अभिकथित रूप से यह बात प्रकट की जब वह अवधेश के साथ निर्माणाधीन मकान की ओर जा रहा था । अभियुक्त द्वारा इस तरह किए गए प्रकटीकरण को सुनकर अभि. सा. 1 के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि वह उसके और अवधेश के साथ उसी गांव के मकान पर लौटा और उसने अभियुक्त द्वारा इस तरह किए गए प्रकटीकरण के बारे में उसके पिता अभि. सा. 8 को अवगत कराया । इस रीति में केवल एक प्रत्यक्ष साक्ष्य है जिसमें घटना के घटने को प्रकट किया गया है तथा यह बात अन्वेषण के दौरान अवधेश को सहबद्ध किए जाने पर अभिलेख पर प्रकट हो सकी है और उसकी विचारण न्यायालय की कार्यवाहियों के दौरान साक्षी के रूप में परीक्षा भी की गई क्योंकि उसकी परीक्षा नहीं की गई थी इसलिए, अभियुक्त ने यह अभिवाक् किया कि वह अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के मकान में था और उन्होंने उसे मिथ्या रूप से फंसाया था । अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 14 द्वारा कहे जाने पर इस मामले में किसी व्यक्ति को आलिप्त किया जाना था जिस बात के विफल होने पर ये वे लोग थे जिन्होंने मृतक की हत्या के लिए उसको शामिल किया होगा । अरविन्द गोस्वामी जिसका शव उनके निर्माणाधीन मकान पर पड़ा हुआ था, उस बात से यह प्रतीत होता है कि यह तथ्य वास्तविक स्थिति के निकट प्रकट हुआ है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का परिसाक्ष्य यह है कि वह व्यक्ति अभियुक्त ही था जिसने मृतक की हत्या की । अतः इन सुनी-सुनाई बातों पर विचारण न्यायाधीश पर सुनी-सुनाई बात को त्यक्त करके ठीक ही किया । अभि. सा. 8 के परिसाक्ष्य का शेष भाग अन्वेषक अधिकारी द्वारा शव का निरीक्षण किए जाने सहित अन्य की गई कार्यवाहियों से संबंधित है जिसमें कुछ फोटो लेना, मृत्यु समीक्षा कागजातों को तैयार करना और शवपरीक्षण आदि के लिए शव को भेजा जाना जो औपचारिक प्रकृति की कार्यवाही है, इसलिए, इसका विस्तृत ब्यौरा देना आवश्यक नहीं है । यह भी सुस्थिर है कि अभियुक्त द्वारा अपने समीप के व्यक्ति को न्यायिकेतर संस्वीकृति की गई है जिससे उसने यह आशा की थी कि वह अभियोजन से उसका बचाव करेगा । उच्चतम न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू पर

विभिन्न न्यायिक निर्णयों पर विधि अधिकथित की है जिनके बारे में विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा ब्यौरेवार चर्चा की गई है । अभियुक्त के साथ अभि. सा. 1 की जान पहचान केवल वहां तक थी कि वह ग्राम गंधार में उनके निर्माणाधीन मकान में श्रमिक के रूप में कार्य कर रहा था । अभियुक्त और मृतक दोनों बिहार के निवासी थे । इस प्रकार अभि. सा. 1 ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसकी अभियुक्त या उसकी मित्र-मंडली के साथ घनिष्ठ संबंध हों । उक्त साक्षी न तो पंच और न तो प्रधान था जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वह स्थानीय पुलिस या उच्च संभ्रांत व्यक्ति पर प्रभाव रख सकता था जो इस मामले में पुलिस द्वारा अभियुक्त को परेशान किए जाने पर सुरक्षा दे सकता था इसलिए अभि. सा. 1 के समक्ष अभियुक्त द्वारा तथाकथित न्यायिकेतर न्यायिक संस्वीकृति किए जाने का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता । मामले के इस पहलू पर अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 का परिसाक्ष्य से इस कारण पर अभियोजन पक्षकथन को मदद नहीं मिलती कि उन्हें अभियुक्त द्वारा गैंती से मृतक पर प्रहार करके उसकी मृत्यु कारित किए जाने के बारे में अभि. सा. 8 द्वारा अवगत कराया गया । अभिकथित प्रकटीकरण कथन के परिणामस्वरूप गैंती की बरामदगी इस कारण से अत्यधिक संदेहपूर्ण है कि अभि. सा. 14 अन्वेषक अधिकारी के परिसाक्ष्य के अनुसार अभियुक्त द्वारा पुलिस थाने में अभिरक्षा में रहते हुए जुगल किशोर, वार्ड पंच और हुकुम चन्द प्रधान ग्राम पंचायत की मौजूदगी में प्रकटीकरण कथन किया था । यह बात सही है कि जुगल किशोर और पुरुषोत्तम चंद दोनों ने अभियुक्त द्वारा इस तरह किए गए कथन पर अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया है । तथापि, अभियुक्त ने घटनास्थल पर अर्थात् ग्राम गंधार पर उनके समक्ष था जहां अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का निर्माणाधीन मकान स्थित था न कि पुलिस थाना । ऐसा होते हुए भी अन्वेषक अधिकारी के परिसाक्ष्य के अनुसार अर्थात् दो संभव मत प्रकट होते हैं, ऐसा कथन अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 की मौजूदगी में पुलिस थाने में अभिलिखित किया गया था जबकि इन साक्षियों के परिसाक्ष्य के अनुसार उक्त कथन घटनास्थल पर अभिलिखित किया गया था । निःसंदेह अभि. सा. 10 को पुनः बुलाया गया था और उसकी पुनः परीक्षा की गई और उसका कथन तारीख 27 जून, 2012 को लेखबद्ध किया गया था, उसने यह स्पष्ट किया था कि अभियुक्त से पुलिस थाना में पूछताछ की गई और उसका कथन और वार्ड पंच की मौजूदगी में अभिलिखित किया गया था । यह भी प्रकट है कि उसके कथन का "क" से "क" और "ख" से "ख" भाग तारीख 14

अक्तूबर, 2011 को अभिलिखित किया गया था । उसका कारण यह था कि वह तथ्यों को भूल गया था । जब उससे प्रतिपरीक्षा की गई तब उसने यह कथन किया कि वह उसी दिन 5.00 बजे पूर्वाह्न पुलिस थाने पर पहुंचा । वह व्यक्ति चन्द्रशील था जिसे वहां पर बुलाया गया था । अभिलेख पर स्पष्टीकरण से यह भी प्रकट हुआ है कि इस कारण से अभियोजन पक्षकथन को कोई सहायता भी मिली है कि जुगल किशोर का परिसाक्ष्य जिसका तथाकथित प्रकटीकरण कथन घटनास्थल पर अभिलिखित किया गया था वह अविचलित रहा । केवल इतना ही नहीं परंतु चन्द्रशील जो साक्षी कठघरे में खड़ा हुआ उसने कथन के अभिलिखित करने के बारे में कुछ भी नहीं कहा है । क्या अभि. सा. 10 द्वारा वर्णित स्पष्टीकरण के शब्दों में उक्त साक्षी को चन्द्रशील द्वारा पुलिस थाने पर बुलाया गया था, यह साक्षी भी वहां पर मौजूद होगा । इसलिए उसकी इस मामले के पहलू पर परीक्षा भी की जानी चाहिए । ऐसा करने पर विफल होना से यह व्यापक बात प्रकट होती है कि घटनास्थल पर ऐसा कुछ भी घटित हुआ और न अभियुक्त ने अभिरक्षा में रहते हुए पुलिस के समक्ष कोई प्रकटीकरण कथन किया हो और इस प्रकार इस कथन से अभियुक्त को मिथ्या रूप से फंसाया जाना प्रतीत होता है और उसे मामले में मिथ्या रूप से फंसाया गया है । यह संभावना कि उसे तारीख 27/28 अक्तूबर, 2010 की मध्य रात्रि के दौरान अभिरक्षा में रखते हुए थर्ड डिग्री तरीका के अधीन रखा गया था और इस दस्तावेज पर हस्ताक्षर करवाए गए इस बात की अनदेखी नहीं की जा सकती । जब इस रीति में प्रकटीकरण कथन अभिलिखित किया गया जैसाकि अभियोजन पक्ष द्वारा दावा किया गया है, इसे तनिक भी साबित नहीं किया गया है जिसके आधार पर गैंती की बरामदगी का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता । अन्यथा भी तथाकथित हेतु कि मृतक शराब के नशे में था और उसने अभियुक्त को गालियां दीं और इस कारण से बाद में गैंती से उस पर हमला किया गया इस बात को तनिक भी साबित नहीं किया गया है क्योंकि अभियोजन पक्षकथन के इस भाग को सिद्ध करने के लिए किसी भी व्यक्ति को सहबद्ध नहीं किया गया था । यदि ऐसा है तो कम से कम अवधेश जो उनके साथ श्रमिक था तो उसने उन दोनों के बीच जो कुछ भी घटित हुआ उस झगड़े को देखा गया होगा । क्या मृतक की अभियुक्त द्वारा हत्या की गई । यह बात समझ से परे है कि वह अपराध किए जाने के पश्चात् भाग खड़ा क्यों नहीं हुआ । उसके पास ऐसा कोई अवसर नहीं था कि वह अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के मकान पर गया हो । वह अभि. सा. 1 और

अभि. सा. 8 के निर्माणाधीन मकान पर उनके साथ नहीं गया होगा और यह कहानी कि जब वे निर्माणाधीन मकान के अंदर प्रविष्ट हुए वह भाग खड़ा हुआ और वह इसलिए भागा होगा कि उसे झूठे रूप से फंसाया जाना प्रतीत हुआ था और अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 जो निर्माणाधीन मकान के स्वामी थे उनकी ओर से यह हो सकता है कि उन्होंने अरविन्द गोस्वामी की मृत्यु के संबंध में उन पर लगाए गए लांछन की संभावना से अपने को बचाने की कोशिश की इसलिए किसी प्रत्यक्ष साक्ष्य के अभाव में और ऐसा साक्ष्य जो अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के परिसाक्ष्य के फलस्वरूप अभिलेख पर प्रकट हुआ है और उस संबंध में अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 का साक्ष्य न तो अकाट्य और न ही विश्वसनीय है । किसी आपराधिक दायित्व से अभियुक्त को बांधा नहीं जा सकता है । अतः विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अभियुक्त के विरुद्ध विरचित आरोपों से उसे दोषमुक्त करते समय कोई अवैधता और अनियमितता नहीं बरती गई है । शेष साक्ष्य जैसाकि पहले ही प्रकट किया गया है, औपचारिक प्रकृति का है । उसकी कुछ सुसंगतता होगी जिससे कि क्या अभियोजन पक्ष यह बात साबित करने में समर्थ होगा कि मृतक अरविन्द गोस्वामी की अभियुक्त द्वारा हत्या की गई अतः इस बात की आगे कोई व्याख्या किया जाना आवश्यक नहीं है । अभिलेख पर प्रकट मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने पर न्यायालय की सुविचारित राय यह है कि विचारण न्यायालय द्वारा इस अपील में चुनौतीधीन निर्णय को पारित करते हुए कोई अवैधता या अनियमितता नहीं बरती गई । इस प्रकार उस निर्णय की पुष्टि की जाती है और अपील को खारिज किया जाता है । अभियुक्त व्यक्ति द्वारा दिए गए वैयक्तिक बंधपत्र को रद्द किया जाएगा और प्रतिभूति को उन्मोचित किया जाएगा । (पैरा 14, 15, 16, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2869 : **जागृति देवी** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ।	11

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2013 की दांडिक अपील सं. 175.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 378 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री डी. एस. नैनता और वीरेन्द्र वर्मा, अपर महाधिवक्तागण

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री भुवनेश शर्मा और सुरेन्द्र मोहन शर्मा, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति धरम चंद चौधरी ने दिया ।

न्या. चौधरी – हिमाचल प्रदेश राज्य ने 2011 के सेशन विचारण सं. 6-पी/vii/2011 में विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश त्वरित निपटान न्यायालय कांगड़ा द्वारा तारीख 27 नवंबर, 2012 को पारित किए गए निर्णय से व्यथित होकर अपील फाइल की । जिसके द्वारा प्रत्यर्थी दलीप कुमार (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अभियुक्त" कहा गया है) को उसके विरुद्ध विरचित दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया और मामले में यह अभिकथन किया गया कि तारीख 26/27 अक्तूबर, 2010 को उसने गैंती से प्रहार करके अरविन्द गोस्वामी की हत्या की और तदुपरि दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध किया ।

2. आक्षेपित निर्णय की वैधानिकता और विधिमान्यता को अन्य बातों के साथ-साथ इन आधारों पर प्रश्नगत किया गया कि अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किया गया अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य के बारे में कोई कारण दिए बिना त्यक्त करके गलती की है । इसलिए अभियुक्त की दोषमुक्ति के बारे में अभिलेख पर उपलब्ध तात्विक साक्ष्य की उपेक्षा किए जाने का कथन किया गया है । अभि. सा. 1 अंकुश कुमार और उसके पिता चन्द्रशील का परिसाक्ष्य यह है कि अभियुक्त ने तारीख 26 अक्तूबर, 2010 को उनके समक्ष अपने दोषमुक्त होने की संस्वीकृति दी है और इसके पश्चात् वह घटनास्थल से भाग गया था, इस बात का तनिक भी मूल्यांकन नहीं किया गया । अभियुक्त द्वारा किए गए न्यायिकेतर संस्वीकृति और विधि के अनुसरण में अभिलेख को सम्यक् रूप से साबित किया गया, जिस बात का तनिक भी मूल्यांकन नहीं किया गया । यह निष्कर्ष कि अभि. सा. 1 न तो ग्राम पंचायत का पंच या प्रधान था और न उसकी अभियुक्त से कोई जान पहचान थी । बाद में ऐसा कोई अवसर प्रकट नहीं था कि उसके समक्ष अपनी दोषिता की संस्वीकृति देता और न ही उक्त साक्षी से यह भी ऐसी कोई आशा थी कि उसे अभियोजन से बचाना चाहता था, और अभिलेख पर गलत रूप से उक्त बात को दर्शाया गया है । विचारण न्यायालय अभिकथित रूप से इस बात का मूल्यांकन करने में विफल हुआ है कि अभियुक्त के एक बाहरी व्यक्ति होने की

बात को ध्यान में लाए बिना जो अभि. सा. 1 के निर्माणाधीन मकान में श्रमिक के रूप में कार्य कर रहा था और उसके पिता अभि. सा. 8 ग्राम गंधार जिला कांगड़ा पर थे, इसलिए, उनको वह जानता था इस बात की भी उपेक्षा की गई है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 दोनों ऐसे व्यक्ति थे जिनके समक्ष अभियुक्त ने इस आशा के साथ अपनी दोषिता की संस्वीकृति दे सका कि वे अभियोजन से उसका बचाव कर सकेंगे । अभि. सा. 9 जुगल किशोर और अभि. सा. 10 पुरुषोत्तम चन्द का परिसाक्ष्य के बारे में प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/क और गैंती प्रदर्श पी-1 की बरामदगी के बारे में गलत अर्थ लगाया गया है । विचारण न्यायालय साक्ष्य का मूल्यांकन करने में भी विफल हुआ है क्योंकि उनके परिसाक्ष्य के आधार पर उक्त बातें अभिलेख पर आई हैं कि उक्त अपराध का आयुध गैंती अभियुक्त के कहने पर बरामदगी हुई है । चिकित्सा साक्ष्य जैसाकि अभि. सा. 2 डा. विनय महाजन का परिसाक्ष्य द्वारा अभिलेख पर प्रकट हुआ है कि मृतका के सिर पर जो प्रहार किया गया था, गैंती प्रदर्श पी-1 सिद्ध किया जा सकता है, और इस बात की भी गलत रूप से उपेक्षा की गई है । यह निष्कर्ष कि गैंती जब डा. अभि. सा. 2 के समक्ष पेश की गई तब उस बारे में उसकी राय ली गई और जिस पर रक्त का कोई धब्बा नहीं था और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य विभेदकारी है क्योंकि अपीलार्थी-राज्य के अनुसार निचला न्यायालय इस बात का मूल्यांकन करने में विफल हुआ है कि डा. द्वारा शवपरीक्षण रिपोर्ट में ऐसे किसी तथ्य का उल्लेख नहीं किया गया है, इससे अभियोजन पक्षकथन पर घातक प्रभाव नहीं पड़ता है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के इस तथ्य की एक-दूसरे के वृत्तांत से सम्पुष्टि हुई है और उन्होंने मामले में मिथ्या रूप से अभियुक्त को आलिप्त करने के बारे में कोई सतर्कता प्रकट नहीं की थी, इस बात को भी विचार में नहीं लिया गया ।

3. अभिकथित घटना अभि. सा. 8 चन्द्रशील के निर्माणाधीन ग्राम गंधार पर रात्रि के समय तारीख 26 अक्तूबर, 2010 को घटित हुई थी और अरविन्द गोस्वामी मृतक के जीवन को समाप्त कर दिया गया जो ग्राम लखनपुर पोस्ट आफिस नवीनपुर पुलिस थाना और जिला जुमुही (बिहार) का निवासी था । उक्त अभिकथन मृतक के साथ रहने वाला गांववासी और सहश्रमिक के विरुद्ध भी लगाए गए थे कि उसे गैंती प्रदर्श पी-1 से प्रहार करके मारा गया था जब मृतक शराब के नशे में था और अभियुक्त के साथ झगड़ा होने की बात अभिकथित

रूप से प्रकट है । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार अभियुक्त मृतक और एक व्यक्ति अवधेश के साथ अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 द्वारा श्रमिक के रूप में नियुक्त किया गया था जो ग्राम गंधार में निर्माणाधीन मकान में मार्बल लगाने का काम कर रहे थे, उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन को अवधेश अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के पुराने मकान पर 9.00 बजे अपराह्न उनसे दही मांगने के लिए गया और उसके पीछे अभियुक्त भी वहां पर पहुंचा । उन्होंने उस समय टेलीविजन पर कार्यक्रम भी देखे थे । कुछ समय पश्चात् शिकायतकर्ता अभियुक्त दलीप कुमार और अपने साथी श्रमिक अवधेश के साथ गांव में निर्माणाधीन मकान पर गया । रास्ते पर जब वे राधाकृष्ण मंदिर के नजदीक थे, अभियुक्त ने अभि. सा. 1 से कहा कि मृतक शराब के नशे में है और उसे गालियां दे रहा है और झगड़ रहा है । उसने गालियां देना और झगड़ना नहीं रोका इसके बावजूद भी कि उसे ऐसा न करने के लिए अनुरोध किया गया, उसने उसकी हत्या कर दी । इस पर अभि. सा. 1 अभियुक्त और अवधेश के साथ पुराने मकान पर लौट आया । वहां उसे अभि. सा. 8 चन्द्रशील के पिता को अभियुक्त दलीप कुमार द्वारा किए गए प्रकटीकरण के बारे में अवगत कराया था । इस पर वह (अभि. सा. 1) और उसके पिता चन्द्रशील और उसका चचेरा भाई संदीप कुमार को अभियुक्त द्वारा साथ लाया गया था और अवधेश निर्माणाधीन मकान की ओर गया । अभि. सा. 8 ने अभियुक्त से दरवाजा खोलने के लिए कहा । अभियुक्त ने उसे बताया कि दरवाजा खुला है । वे सभी मृतक अरविन्द गोस्वामी को देखने के लिए मकान के अंदर गए । अभियुक्त जो बाहर खड़ा था वहां से नजदीक खेतों की ओर भाग गया । कमरे में उन्होंने अरविन्द गोस्वामी के शव को देखा जो सफेद रंग की चादर में लपेटे हुए था तथा उसके सिर के घाव से रक्त टपक रहा था । अरविन्द गोस्वामी को देखकर उसने यह अनुमान लगाया कि उसकी पहले ही मौत हो चुकी है । उन्होंने अभियुक्त को ढूंढने का प्रयास किया और वह कहीं पर भी नहीं मिला । इस पर अभि. सा. 8 ने पुरुषोत्तम चंद (अभि. सा. 10) प्रधान ग्राम पंचायत और अभि. सा. 9 जुगल किशोर वार्ड पंच को सूचना दी थी । वे भी घटनास्थल पर पहुंचे । अभि. सा. 10 ने पुलिस थाना लंबागांव, जिला कांगड़ा पर पुलिस को दूरभाष से सूचना दी । पुलिस थाने में प्राप्त की गई सूचना को दैनिक डायरी पर रपट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 14/क पर 11.45 बजे अपराह्न मध्यरात्रि पर उसकी प्रविष्टि की गई थी । परिणामस्वरूप अन्वेषक अधिकारी, उपनिरीक्षक/

थानागृह अधिकारी, त्रिलोक चन्द को उप निरीक्षक गंभीर चंद द्वारा अपने साथ ले जाया गया था और अन्य पुलिस पदधारी शासकीय यान में घटनास्थल पर पहुंचे । कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क अभिलिखित करने के पश्चात् उसे एच. एच. सी. विनोद कुमार के माध्यम से मामले के रजिस्ट्रेशन के लिए पुलिस थाना भेजा गया था जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11/क दर्ज की ।

4. अभि. सा. 14 ने मामले की फाइल प्राप्त की और अभि. सा. 13 सिनोध कुमार, फोटोग्राफर को बुलाया और शव की फोटो खिचवाई, देखिए फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 13/क से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 13/घ । घटनास्थल पर निरीक्षण करते हुए नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 14/ग दूसरे दिन तैयार किया गया था । रक्त-रंजित गद्दा (तलाई) प्रदर्श पी-3 को अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 के समक्ष ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/क के माध्यम से कब्जे में लिया गया । शव के नजदीक जमीन पर फैला हुआ रक्त के नमूने को सूती कपड़ा प्रदर्श पी-5 में उठाया गया था और उसे प्लास्टिक कटोरी प्रदर्श पी-4 में रखा गया । उसे अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 की मौजूदगी में ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ख द्वारा कब्जे में लिया गया था । मृत्यु-समीक्षा कागजात पी. डब्ल्यू. 2/ख भी तैयार किए गए थे और आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू 2/क चिकित्सा अधिकारी सी. एच. सी. पालमपुर को भेजा गया था और शव को हेड कांस्टेबल चमन सिंह के माध्यम से शवपरीक्षण करने के लिए भी भेजा गया था । अभियुक्त को सुजानपुर में तारीख 10 अक्तूबर, 2010 को गिरफ्तार किया गया था और उसे पुलिस थाने पर लाया गया था तथा तारीख 28 अक्तूबर, 2010 को उससे पूछताछ करने के दौरान उसने इस प्रभाव का प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ किया गया था कि उसने अभि. सा. 8 चन्द्रशील के निर्माणाधीन मकान के नजदीक झाड़ियों पर गैंती को छुपा दिया था और जिसको उसने वैसे ही हालात में बरामद करा सका । वह पुलिस दल को निर्माणाधीन मकान के नजदीक स्थान पर ले गया था और झाड़ी से उसने गैंती निकाली जिसकी फोटो खीची गई थी, देखिए फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 13/ङ और जिसको ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ के माध्यम से कब्जे में लेकर सम्यक् रूप से मोहरबंद किया गया था । बरामदगी के स्थान का नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 14/ग भी पृथक् रूप से तैयार किया गया था । साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए थे । चिकित्सा अधिकारी की राय की ईप्सा

करने पर उन्होंने यह राय व्यक्त की कि क्षति प्रदर्श पी-1 से कारित की गई, जिससे मृतक की मृत्यु कारित होने की संभावना व्यक्त की जा सकती है । आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/घ प्रस्तुत किया गया था । डा. ने यह राय व्यक्त की है कि घातक क्षति की वजह से मृतक की मृत्यु कारित होना संभव है, राय प्रमाणपत्र को इसके साथ प्रस्तुत किया जा सका है । शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ग अस्पताल से एकत्र किया गया था । आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/क सहायक इंजीनियर, हिमाचल प्रदेश, लोक निर्माण विभाग को प्रस्तुत किया गया और घटनास्थल का नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/घ तैयार किया गया था जिसे पुलिस फाइल में संलग्न किया गया था । रसायन परीक्षक की रिपोर्ट प्रदर्श पी-क और प्रदर्श पी-ख की रिपोर्ट प्राप्त की गई और अन्वेषण पूरा करने के पश्चात न्यायालय में अभियुक्त के विरुद्ध चालान फाइल किया गया था ।

5. विचारण न्यायाधीश ने अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या मामले के अस्तित्व में होने पर अपना समाधान अभिलिखित करने के पश्चात् उसके विरुद्ध दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आरोप विरचित किया था । तथापि, उसने आरोप पर दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अतः अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के विरुद्ध आरोपों को कायम रखते हुए कुल मिलाकर 14 साक्षियों की परीक्षा की जो तात्विक अभियोजन साक्षी हैं । तथापि, अभि. सा. 1 अंकुश कुमार, अभि. सा. 8 चन्द्रशील, अभि. सा. 9 जुगल किशोर और अभि. सा. 10 पुरुषोत्तम आदि हैं बाकी अभियोजन साक्षी औपचारिक हैं क्योंकि अभि. सा. 2 डा. विनय महाजन को शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ग को साबित करने के लिए सहबद्ध किया गया और मृतक की मृत्यु के कारण तथा गैंती प्रदर्श पी-1 से किया प्रहार पर उसकी राय से उसकी मृत्यु कारित किया जाना हो सकता है या नहीं । अभि. सा. 3 एच. एस. सी. रवीन्द्र कुमार ने चिकित्सा अधिकारी की राय इस बारे में प्राप्त की थी कि क्या मृतक की मृत्यु गैंती प्रदर्श पी-1 के प्रहार के कारण हो सकी है । अभि. सा. 4 प्रेम चन्द ने संख्या में 6 मोहरबंद पार्सल जमा किए थे जिसमें न्यायालयिक प्रयोगशाला, जुंगा में इस मामले से संबंधित वाद संपत्ति सम्मिलित थी । अभि. सा. 5 हेड कांस्टेबल खेमचंद उस सुसंगत समय पर पुलिस थाने में मोहर्रिर हेड कांस्टेबल के पद पर था जिसके अभिरक्षा में इस मामले की वाद सम्पति रखी गई थी जिसे

अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 10 द्वारा उसे सौंपा गया था । उसने मालखाने में उस वस्तु की प्रविष्टि की और उसे अपनी सुरक्षित अभिरक्षा में रखा । अभि. सा. 6 कुलदीप चंद नियमित मोहर्रिर हेड कांस्टेबल के पद पर तैनात था क्योंकि वह अवकाश पर था और उसकी अनुपस्थिति में अभि. सा. 5 मोहर्रिर हेड कांस्टेबल के पद पर अपना पद निभा रहा था, अवकाश पूरा करने के पश्चात् जब वह पुलिस थाने पर पहुंचा तब इस मामले के वाद सम्पत्ति की अभिरक्षा अभि. सा. 5 द्वारा उसे सौंपी गई थी । बाद में उसके द्वारा इस वाद संपत्ति को हेड कांस्टेबल प्रेम चंद के माध्यम से आर. सी. सं. 107/10 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 6/क के माध्यम से न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा गया था । अभि. सा. 7 पर्यवेक्षक के पद पर था जो हिमाचल प्रदेश लोक निर्माण विभाग उपखंड थुरल में कार्य कर रहा था । पुलिस द्वारा आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/क पेश किया गया था और उसने घटनास्थल का नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ख तैयार किया था । अभि. सा. 11 सहायक उपनिरीक्षक सुरेश कुमार ने रुक्का प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क प्राप्त करने के पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11/क रजिस्ट्रीकृत किया था । अभि. सा. 12 गंभीर चंद ने इस मामले का आंशिक रूप से अन्वेषण किया था । क्योंकि अरूण कुमार अभि. सा. 7 का कथन उसके द्वारा अभिलिखित किया गया था । अभि. सा. 13 फोटोग्राफर है जिसने अपने डिजीटल कैमरे से फोटो प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 13/क से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 13/घ फोटो खींचे थे । इस मामले का अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 14 तिलक राज है जिसने इस मामले का अन्वेषण किया था ।

6. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करके और विद्वान् लोक अभियोजक तथा विद्वान् प्रतिरक्षा काउंसेल की सुनवाई की और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अभियोजन पक्ष प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ को साबित करने में विफल हुआ है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का परिसाक्ष्य के बारे में सुना सुनाया कथन होना भी कहा गया है क्योंकि मामले की घटना उनकी मौजूदगी में घटित नहीं हुई थी । विचारण न्यायाधीश की राय यह है कि उनका परिसाक्ष्य से अभियुक्त व्यक्ति किसी आपराधिक दायित्व में बांधा नहीं जाना चाहिए । यह भी मत व्यक्त किया गया कि केवल महत्वपूर्ण साक्षी अवधेश को बताया जा सका है जो उसी कमरे में रहता था और अभियुक्त के साथ श्रमिक के रूप में

कार्य करता था । तथापि, अभियोजन पक्ष ने अच्छी तरह से ज्ञात सभी कारणों पर उसे सहबद्ध किए जाने के लिए अंगीकृत नहीं किया और न उसकी परीक्षा की गई । विचारण न्यायाधीश की राय में अभियोजन पक्ष सभी युक्तियुक्त संदेह के परे अभियुक्त के विरुद्ध अपने पक्षकथन को साबित करने में विफल हुआ था, इस प्रकार, उसे आरोप से दोषमुक्त किया गया था ।

7. अपर महाधिवक्ता श्री डी. एस. मेन्ता ने सभी प्रकार पुरजोर यह दलील दी कि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का परिसाक्ष्य से प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ को समर्थन मिलता है और गैंती प्रदर्श पी-1 की बरामदगी जो अभियोजन पक्ष द्वारा इंगित किए गए सुझावों के परिणामस्वरूप हुई उस बात को अभियुक्त के विरुद्ध सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है । तथापि, अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य पर विचार नहीं किया गया और गलत रूप से उसकी अनदेखी की गई ।

8. दूसरी ओर श्री भुवनेश शर्मा अधिवक्ता जिनकी सहायता श्री सुरेन्द्र मोहन शर्मा अधिवक्ता द्वारा की गई उन्होंने अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करते हुए यह दलील दी कि अन्वेषण अभिकरण द्वारा कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य पेश नहीं किया गया जिन कारणों को अभियोजन पक्ष अच्छी तरह जानता है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का परिसाक्ष्य अत्यधिक अविश्वसनीय रहा है जिसकी विचारण न्यायाधीश द्वारा ठीक ही तरह से उपेक्षा की गई है और इसके अतिरिक्त यह भी है कि प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ के परिणामस्वरूप गैंती प्रदर्श पी-1 की बरामदगी को तनिक भी साबित नहीं किया गया है जैसाकि विद्वान् काउंसेल के अनुसार साक्षी अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 ने तनिक भी इस बारे में अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है और न इस बात को साबित किया है कि अभिकथित प्रकटीकरण कथन जिसे अभियुक्त द्वारा अभिरक्षा में रहते हुए किया गया था उसे पुलिस थाने में अभिलिखित किया गया था । इसलिए, विद्वान् काउंसेल के अनुसार अभियुक्त को विचारण न्यायाधीश द्वारा आरोपों से दोषमुक्त करके ठीक ही किया गया है ।

9. इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों का पुनर्मूल्यांकन करते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को संज्ञान में लेते हुए तथा परस्पर विरोधी दलीलों को विचार में लेकर हमारे विचार में एकमात्र

प्रश्न यह उद्भूत होता है कि यद्यपि अभियोजन पक्ष ने सभी युक्तियुक्त संदेह के परे अपने पक्षकथन को साबित किया है तथापि, विचारण न्यायालय उन बातों का मूल्यांकन करने में विफल नहीं हुआ है तथा दोषमुक्ति के निष्कर्ष को गलत रूप से अभिलिखित करने में विफल नहीं हुआ है । तथापि, इस तरह से उद्भूत प्रश्नों के उत्तर में पहुंचने से पूर्व हमारा यह विचार है कि इस बात पर टिप्पण करना वांछनीय है कि कैसे दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का गठन होता है ।

10. दंड संहिता की धारा 300 के अनुसार आपराधिक मानव वध यदि कोई व्यक्ति कोई ऐसी बात करने के द्वारा जिससे उसका आशय मृत्यु कारित करना हो या जिसे वह जानता हो कि मृत्यु कारित होना संभाव्य है किसी व्यक्ति की मृत्यु कारित करके जिसकी मृत्यु कारित करने का उसका न तो आशय हो न वह यह संभाव्य जानता हो कि वह उसकी मृत्यु कारित करेगा आपराधिक मानव वध करे तो अपराधी द्वारा किया गया मानव वध उसी भांति का होगा जिस भांति का वह होता है यदि वह उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करता जिसकी मृत्यु कारित करना उसके द्वारा आशयित था या वह जानता था कि उसके द्वारा उसकी मृत्यु कारित करना संभाव्य था ।

11. आपराधिक मानव वध को दंड संहिता की धारा 299 के अधीन परिभाषित किया गया है जो कोई मृत्यु कारित करने के आशय से या ऐसी शारीरिक क्षति करने के आशय से जिससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य है या यह ज्ञान रखते हुए कि यह संभाव्य है कि वह उस कार्य से मृत्यु कारित कर दे कोई कार्य करके मृत्यु कारित कर देता है तो वह आपराधिक मानव वध का अपराध करता है । आपराधिक मानव वध हत्या है यदि ऐसा कार्य जिसके द्वारा हत्या की जाती है और मृत्यु कारित करने के आशय से किया जाता है । "आशय" और "जानकारी" सकारात्मक मानसिक दृष्टिकोण की विद्यमानता को प्रकट करते हैं जो भिन्न-भिन्न मात्रा को दर्शाता है । **जागृति देवी** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में हमें उच्चतम न्यायालय के निर्णय से इस संबंध में समर्थन मिलता है ।

12. आपराधिक मानव वध के संघटक जो हत्या की कोटि में

---

[1] ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2869.

आता है इस प्रकार है; (i) साशय मृत्यु कारित करना और (ii) शारीरिक क्षति कारित करना जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य हो । क्या वर्तमान मामला एक ऐसा मामला है जहां अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह इंगित होता हो कि वह अभियुक्त ही था जिसने गैंती प्रदर्श पी-1 से प्रहार किया था जब मृतक शराब के नशे में था और उसके साथ अभिकथित रूप से झगड़ा कर रहा था तब साशय उसकी मृत्यु कारित करना तब उसकी ओर से ऐसा कार्य किया जाना, आपराधिक मानव वध की कोटि में आता है जो हत्या की कोटि में है या नहीं, उस पर अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करने की जरूरत है । तथापि, इस बात को इंगित करने से पूर्व समुचित रूप से यह समझा जाना चाहिए कि यदि अभियुक्त का मृतक की हत्या कारित का कोई हेतु था, घटना के विषय में प्रत्यक्षदर्शी साक्षी से अध्यपेक्षा किया जाना नहीं हो सकता तथापि, जहां हेतु गायब है वहां पर अभियोजन पक्ष के लिए प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के परिसाक्ष्य की मदद से अपने पक्षकथन को साबित करना अपेक्षित है ।

13. अब यदि इसमें ऊपर उल्लिखित प्रश्न पर विचार करते हैं जो इस मामले में हमारा ध्यान आकर्षित करता है । उस संबंध में उत्तर सभी तरह से ऋजुतापूर्ण और न्याय के उद्देश्य पर इस कारण से नकारात्मक होगा कि वर्तमान मामला ऐसा मामला है जहां अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि वह एकमात्र अभियुक्त ही था जिसने गैंती प्रदर्श पी-1 से मृतक के सिर पर घातक प्रहार किया ऐसा उस प्रक्रम पर हुआ जब बाद में शराब के नशे में लड़ाई-झगड़ा हुआ था और तदुपरि उसकी मृत्यु कारित की गई और यह बात अभियुक्त के साथी श्रमिक अवधेश के परिसाक्ष्य द्वारा अभिलेख पर प्रकट हो सका है और मृतक जो उसी कमरे में उसके साथ रहता था । तथापि, ऐसा साक्ष्य जो उस रीति के बारे में कुछ प्रकाश डाल सका है जिसमें यह घटना घटी और अरविन्द गोस्वामी की मृत्यु की घटना घटी जिस बात को अभियोजन पक्ष द्वारा अच्छी तरह कारणों को जानते हुए रोका रखा गया ।

14. साक्षी अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 मुख्य अभियोजन साक्षी हैं जो क्रमशः नातेदारी में पुत्र और पिता हैं । उनका मकान ग्राम कंधार पर निर्माणाधीन था । अभियुक्त, मृतक और अवधेश को उनके द्वारा उक्त मकान में मार्बल लगाने के लिए काम पर रखा गया

था । स्वीकृततः उन्होंने मृतक और अभियुक्त को एक-दूसरे के साथ लड़ाई-झगड़ा करते हुए नहीं देखा था । उन्होंने गैंती प्रदर्श पी-1 से मृतक के सिर पर प्रहार कारित करते हुए अभियुक्त को नहीं देखा था उनका परिसाक्ष्य यह है कि मृतक के सिर पर गैंती से घातक प्रहार किया गया था यद्यपि इस विश्वास की सच्चाई सुनी-सुनाई है क्योंकि वह स्वयं अभियुक्त ही था जिसने उस प्रक्रम पर अभि. सा. 1 को अभिकथित रूप से यह बात प्रकट की जब वह अवधेश के साथ निर्माणाधीन मकान की ओर जा रहा था । अभियुक्त द्वारा इस तरह किए गए प्रकटीकरण को सुनकर अभि. सा. 1 के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि वह उसके और अवधेश के साथ उसी गांव के मकान पर लौटा और उसने अभियुक्त द्वारा इस तरह किए गए प्रकटीकरण के बारे में उसके पिता अभि. सा. 8 को अवगत कराया । इस रीति में केवल एक प्रत्यक्ष साक्ष्य है जिसमें घटना के घटने को प्रकट किया गया है तथा यह बात अन्वेषण के दौरान अवधेश को सहबद्ध किए जाने पर अभिलेख पर प्रकट हो सकी है और उसकी विचारण न्यायालय की कार्यवाहियों के दौरान साक्षी के रूप में परीक्षा भी की गई क्योंकि उसकी परीक्षा नहीं की गई थी इसलिए, अभियुक्त ने यह अभिवाक् किया कि वह अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के मकान में था और उन्होंने उसे मिथ्या रूप से फंसाया था । अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 14 द्वारा कहे जाने पर इस मामले में किसी व्यक्ति को आलिप्त किया जाना था जिस बात के विफल होने पर ये वे लोग थे जिन्होंने मृतक की हत्या के लिए उसको शामिल किया होगा । अरविन्द गोस्वामी जिसका शव उनके निर्माणाधीन मकान पर पड़ा हुआ था, उस बात से यह प्रतीत होता है कि यह तथ्य वास्तविक स्थिति के निकट प्रकट हुआ है । अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का परिसाक्ष्य यह है कि वह व्यक्ति अभियुक्त ही था जिसने मृतक की हत्या की । अतः इन सुनी-सुनाई बातों पर विचारण न्यायाधीश पर सुनी-सुनाई बात को त्यक्त करके ठीक ही किया । अभि. सा. 8 के परिसाक्ष्य का शेष भाग अन्वेषक अधिकारी द्वारा शव का निरीक्षण किए जाने सहित अन्य कार्यवाहियों से संबंधित है जिसमें कुछ फोटो लेना, मृत्यु समीक्षा कागजातों को तैयार करना और शवपरीक्षण आदि के लिए शव को भेजा जाना जो औपचारिक प्रकृति की कार्यवाही है, इसलिए, इसका विस्तृत ब्यौरा देना आवश्यक नहीं है ।

15. यह भी सुस्थिर है कि अभियुक्त द्वारा अपने समीप के व्यक्ति को न्यायिकेतर संस्वीकृति की गई है जिससे उसने यह आशा की थी कि वह अभियोजन से उसका बचाव करेगा । उच्चतम न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू पर विभिन्न न्यायिक निर्णयों पर विधि अधिकथित की है जिनके बारे में विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा ब्यौरेवार चर्चा की गई है । हमें 2006 की दांडिक अपील सं. 43, सुदेश शर्मा **उर्फ** सुप्पा **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य वाले मामले में तारीख 2 जून, 2014 को इस न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय से इस संबंध में समर्थन मिलता है । अभियुक्त के साथ अभि. सा. 1 की जान पहचान केवल वहां तक थी कि वह ग्राम गंधार में उनके निर्माणाधीन मकान में श्रमिक के रूप में कार्य कर रहा था । अभियुक्त और मृतक दोनों बिहार के निवासी थे । इस प्रकार अभि. सा. 1 ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसकी अभियुक्त या उसकी मित्र-मंडली के साथ घनिष्ठ संबंध हों । उक्त साक्षी न तो पंच और न तो प्रधान था जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वह स्थानीय पुलिस या उच्च संभ्रांत व्यक्ति पर प्रभाव रख सकता था जो इस मामले में पुलिस द्वारा अभियुक्त को परेशान किए जाने पर सुरक्षा दे सकता था इसलिए अभि. सा. 1 के समक्ष अभियुक्त द्वारा तथाकथित न्यायिकेतर न्यायिक संस्वीकृति किए जाने का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता । मामले के इस पहलू पर अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 का परिसाक्ष्य से इस कारण पर अभियोजन पक्षकथन को मदद नहीं मिलती कि उन्हें अभियुक्त द्वारा गैंती से मृतक पर प्रहार करके उसकी मृत्यु कारित किए जाने के बारे में अभि. सा. 8 द्वारा अवगत कराया गया ।

16. अभिकथित प्रकटीकरण कथन के परिणामस्वरूप गैंती प्रदर्श पी-1 की बरामदगी इस कारण से अत्यधिक संदेहपूर्ण है कि अभि. सा. 14 अन्वेषक अधिकारी के परिसाक्ष्य के अनुसार अभियुक्त द्वारा पुलिस थाने में अभिरक्षा में रहते हुए अभि. सा. 9 जुगल किशोर, वार्ड पंच और अभि. सा. 10 हुकुम चन्द प्रधान ग्राम पंचायत की मौजूदगी में प्रकटीकरण कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ किया था । यह बात सही है कि जुगल किशोर और पुरुषोत्तम चंद दोनों ने अभियुक्त द्वारा इस तरह किए गए कथन पर अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया है । तथापि, अभियुक्त ने घटनास्थल पर अर्थात् ग्राम गंधार पर उनके समक्ष था जहां अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 का निर्माणाधीन मकान स्थित था न कि पुलिस थाना । ऐसा होते हुए भी अन्वेषक अधिकारी

अभि. सा. 14 के परिसाक्ष्य के अनुसार अर्थात् दो संभव मत प्रकट होते हैं, ऐसा कथन अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 की मौजूदगी में पुलिस थाने में अभिलिखित किया गया था जबकि इन साक्षियों के परिसाक्ष्य के अनुसार उक्त कथन घटनास्थल पर अभिलिखित किया गया था । निःसंदेह अभि. सा. 10 को पुनः बुलाया गया था और उसकी पुनः परीक्षा की गई और उसका कथन तारीख 27 जून, 2012 को लेखबद्ध किया गया था, उसने यह स्पष्ट किया था कि अभियुक्त से पुलिस थाना में पूछताछ की गई और उसका कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ और वार्ड पंच अभि. सा. 9 की मौजूदगी में अभिलिखित किया गया था । यह भी प्रकट है कि उसके कथन का "क" से "क" और "ख" से "ख" भाग तारीख 14 अक्तूबर, 2011 को अभिलिखित किया गया था । उसका कारण यह था कि वह तथ्यों को भूल गया था । जब उससे प्रतिपरीक्षा की गई तब उसने यह कथन किया कि वह उसी दिन 5.00 बजे पूर्वाह्न पुलिस थाने पर पहुंचा । वह व्यक्ति चन्द्रशील था जिसे वहां पर बुलाया गया था । अभिलेख पर स्पष्टीकरण से यह भी प्रकट हुआ है कि इस कारण से अभियोजन पक्षकथन को कोई सहायता भी मिली है कि अभि. सा. 9 जुगल किशोर का परिसाक्ष्य जिसका तथाकथित प्रकटीकरण कथन घटनास्थल पर अभिलिखित किया गया था वह अविचलित रहा । केवल इतना ही नहीं परंतु चन्द्रशील जो अभि. सा. 8 के रूप में साक्षी कठघरे में खड़ा हुआ उसने कथन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 9/ङ के अभिलिखित करने के बारे में कुछ भी नहीं कहा है । क्या अभि. सा. 10 द्वारा वर्णित स्पष्टीकरण के शब्दों में उक्त साक्षी को अभि. सा. 8 चन्द्रशील द्वारा पुलिस थाने पर बुलाया गया था, यह साक्षी भी वहां पर मौजूद होगा । इसलिए उसकी इस मामले के पहलू पर परीक्षा भी की जानी चाहिए । ऐसा करने पर विफल होने से यह व्यापक बात प्रकट होती है कि घटनास्थल पर ऐसा कुछ भी घटित नहीं हुआ और न अभियुक्त ने अभिरक्षा में रहते हुए पुलिस के समक्ष कोई प्रकटीकरण कथन किया हो और इस प्रकार इस कथन से अभियुक्त को मिथ्या रूप से फंसाया जाना प्रतीत होता है और उसे मामले में मिथ्या रूप से फंसाया गया है । यह संभावना कि उसे तारीख 27/28 अक्तूबर, 2010 की मध्य रात्रि के दौरान अभिरक्षा में रखते हुए थर्ड डिग्री तरीका के अधीन रखा गया था और इस दस्तावेज पर हस्ताक्षर करवाए गए इस बात की अनदेखी नहीं की जा सकती ।

17. जब इस रीति में प्रकटीकरण कथन अभिलिखित किया गया जैसाकि अभियोजन पक्ष द्वारा दावा किया गया है, इसे तनिक भी साबित नहीं किया गया है जिसके आधार पर गैंती प्रदर्श पी-1 की बरामदगी का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता । अन्यथा भी तथाकथित हेतु कि मृतक शराब के नशे में था और उसने अभियुक्त को गालियां दीं और इस कारण से बाद में गैंती से उस पर हमला किया गया इस बात को तनिक भी साबित नहीं किया गया है क्योंकि अभियोजन पक्षकथन के इस भाग को सिद्ध करने के लिए किसी भी व्यक्ति को सहबद्ध नहीं किया गया था । यदि ऐसा है तो कम से कम अवधेश जो उनके साथ श्रमिक था तो उसने उन दोनों के बीच जो कुछ भी घटित हुआ उस झगड़े को देखा होगा । क्या मृतक की अभियुक्त द्वारा हत्या की गई । यह बात समझ से परे है कि वह अपराध किए जाने के पश्चात् भाग खड़ा क्यों नहीं हुआ । उसके पास ऐसा कोई अवसर नहीं था कि वह अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के मकान पर गया हो । वह अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के निर्माणाधीन मकान पर उनके साथ नहीं गया होगा और यह कहानी कि जब वे निर्माणाधीन मकान के अंदर प्रविष्ट हुए वह भाग खड़ा हुआ और वह इसलिए भागा होगा कि उसे झूठे रूप से फंसाया जाना प्रतीत हुआ था और अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 जो निर्माणाधीन मकान के स्वामी थे उनकी ओर से यह हो सकता है कि उन्होंने अरविन्द गोस्वामी की मृत्यु के संबंध में उन पर लगाए गए लांछन की संभावना से अपने को बचाने की कोशिश की इसलिए किसी प्रत्यक्ष साक्ष्य के अभाव में और ऐसा साक्ष्य जो अभि. सा. 1 और अभि. सा. 8 के परिसाक्ष्य के फलस्वरूप अभिलेख पर प्रकट हुआ है और उस संबंध में अभि. सा. 9 और अभि. सा. 10 का साक्ष्य न तो अकाट्य और न ही विश्वसनीय है । किसी आपराधिक दायित्व से अभियुक्त को बांधा नहीं जा सकता है । अतः विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने अभियुक्त के विरुद्ध विरचित आरोपों से उसे दोषमुक्त करते समय कोई अवैधता और अनियमितता नहीं बरती गई है ।

18. शेष साक्ष्य जैसाकि पहले ही प्रकट किया गया है, औपचारिक प्रकृति का है । उसकी कुछ सुसंगतता होगी जिससे कि क्या अभियोजन पक्ष यह बात साबित करने में समर्थ होगा कि मृतक अरविन्द गोस्वामी की अभियुक्त द्वारा हत्या की गई अतः इस बात की आगे कोई व्याख्या किया जाना आवश्यक नहीं है ।

19. अभिलेख पर प्रकट मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन करने पर हमारी सुविचारित राय यह है कि विचारण न्यायालय द्वारा इस अपील में चुनौतीधीन निर्णय को पारित करते हुए कोई अवैधता या अनियमितता नहीं बरती गई । इस प्रकार उस निर्णय की पुष्टि की जाती है और अपील को खारिज किया जाता है । अभियुक्त व्यक्ति द्वारा दिए गए वैयक्तिक बंधपत्र को रद्द किया जाएगा और प्रतिभूति को उन्मोचित किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

आर्य

(2017) 1 दा. नि. प. 300 **हिमाचल प्रदेश**

वीरदीन उर्फ़ बीरू

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 21 मार्च, 2017

न्यायमूर्ति धरम चंद चौधरी

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 438 [सपठित स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की जमानत के लिए धारा 37 की कठोरता और धारा 15, 25, 19 या 24 या 27(क)] – आवेदक द्वारा गिरफ्तारी से पूर्व जमानत आवेदन – दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 की प्रयोज्यता – यदि आवेदक के पास से वाणिज्यिक मात्रा से कम मात्रा की अफीम की भूसी बरामद की गई है और एन. डी. पी. एस. अधिनियम की धारा 19 या 24 या 27(क) के अधीन अपराध नहीं है तो जमानत के लिए धारा 438 लागू होगी ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 438 [सपठित स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की जमानत के लिए धारा 37 की कठोरता और धारा 15, 25, 19 या 24 या 27(क)] – जहां आवेदक के ऊपर कुछ समय पूर्व अलग-अलग अपराधों में

सात अपराध दर्ज हैं और वर्तमान समय का एक अपराध मिलाकर आठ अपराध हैं तो वहां पर आवेदक को जमानत पर निर्मुक्त किया जाना न्यायसंगत नहीं होगा ।

अभियुक्त/आवेदक के विरुद्ध संक्षेप में यह अभिकथन किए गए हैं कि तारीख 12 फरवरी, 2017 को जब बोलेवाल चौक के नजदीक स्थित अभियुक्त/आवेदक के गौशाला की तलाशी ली गई तब वहां से 18.140 किलोग्राम अफीम की भूसी बरामद हुई थी । अतः स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 15 और 25 के अधीन मामला अभियुक्त/आवेदक के विरुद्ध दर्ज किया गया । जमानत आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – जमानत मंजूर करने के मामले में अधिनियम की धारा 37 की कठोरता अपराधी के विरुद्ध केवल ऐसे मामले में लागू होती है जहां अपराधी धारा 19 या 24 या 27(क) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए और इस अधिनियम के अधीन वाणिज्यिक मात्रा से अंतर्वलित अपराधों के लिए भी दोषी ठहराया जाता है । वर्तमान मामला अधिनियम की धारा 19 या धारा 24 या धारा 27(क) के अधीन अभियुक्त/आवेदक द्वारा अपराध कारित किए जाने के अंतर्गत नहीं है और यह मामला इस किस्म का मामला है जिसमें वाणिज्यिक मात्रा की बरामदगी अंतर्वलित है जो अफीम की भूसी के रूप में 18.140 किलोग्राम है जिसे अभियुक्त से बरामद किए जाने का अभिकथन किया गया है, यह वाणिज्यिक मात्रा नहीं है परंतु अंतर मध्यस्थता अर्थात् उपरोक्त कम मात्रा और जो वाणिज्यिक मात्रा से कम है । इसलिए शायद राकेश कुमार **उर्फ** कुक्का वाले मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय का विनिश्चयाधार इस मामले के वर्णित तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है और न स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 37 की कठोरता लागू होती है । अन्यथा भी बलजीत सिंह **बनाम** असम राज्य वाले मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि इस अधिनियम को कहीं भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन आवेदन के चलने को ऐसे मामले में अपवर्जित नहीं किया गया है जो इस उपबंध के अधीन दर्ज हुआ हो और मामले में यह मत भी अपनाया गया कि अभियुक्त जिसे स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम के अधीन अपराध कारित

किए जाने के लिए दोषी ठहराया गया है उसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन फाइल किया गया आवेदन चलने योग्य है । अधिनियम की धारा 37 के अधीन जमानत और बंधपत्रों के मामले में अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार भी दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध लागू होते हैं । इस आवेदन के चलने के बारे में प्रश्न जैसाकि विद्वान् अपर महाधिवक्ता द्वारा उठाया गया है उसमें मुश्किल से कोई बल है । किसी भी प्रकार वर्तमान वाले मामले में कोई ऐसा विवाद्यक अंतर्वलित नहीं है इसलिए मामले के इस पहलू पर यदि इस न्यायालय के समक्ष कोई विचार प्रकट होता है तो मामले में समुचित विचार करने के लिए वह स्वतंत्र है । जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है अफीम की भूसी "बाड़ा" (कच्चा ढांचा) में बरामद हुई है जिसके बारे में अभियुक्त/आवेदक की गौशाला होने का अभिकथन किया गया है । इस रीति में इस बारे में कोई समुचित अवलोकन किया जाना पर्याप्त नहीं है । ऐसा स्थान जहां से अभिकथित अफीम की भूसी विनिषिद्ध माल बरामद किया गया हो ऐसी दशा में दूसरे पक्षकार के मामले में प्रतिकूलता की संभावना प्रकट होती है । तथापि, यह कहना भी पर्याप्त होगा कि जब 7 आपराधिक मामले कुछ समय पूर्व उसके विरुद्ध दर्ज किए गए थे और दंड संहिता की धारा तथा भारतीय वन अधिनियम आबकारी अधिनियम तथा स्वापक ओषधि अधिनियम के अधीन भिन्न-भिन्न अपराध कारित किए जाने में यह एक आठवां अपराध है । वर्तमान मामला ऐसा नहीं है कि जहां गिरफ्तारी से पूर्व जमानत उसके लिए मंजूर की जानी चाहिए । वस्तुतः कि अन्वेषण किए जाने के अनुक्रम में उसको अभिरक्षा में पूछताछ के लिए रखा जाना तार्किक रूप से अपेक्षित है । इस प्रकार आवेदन को खारिज किया जाता है । (पैरा 4 और 5)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2004] 2004 (3) क्राइम 433 :
बलजीत सिंह बनाम **असम राज्य** ; 4

[2003] (2003) क्रिमिनल ला जर्नल 3503 :
राकेश कुमार उर्फ **कुक्का** बनाम
हिमाचल प्रदेश राज्य । 2

प्रकीर्ण (दांडिक) अधिकारिता : 2017 की दांडिक प्रकीर्ण आवेदन (एम.) सं. 245.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 के अधीन आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री संजीव कुमार सूरी, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री प्रमोद ठाकुर, अपर महाधिवक्ता, सहायक उप-निरीक्षक सुरेश कुमार, एसआईयू पूना (अभिलेख के साथ स्वयं उपस्थित)

न्यायमूर्ति धरम चंद चौधरी – मामले को सुना गया ।

2. आवेदक पुलिस थाना हरोली, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 39/17 पर स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 15 के अधीन दर्ज मामले में अभियुक्त है । उसके द्वारा गिरफ्तारी से पूर्व जमानत मंजूर करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन आवेदन फाइल किया गया । विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने मामले के तथ्यों पर यह टिप्पण किया कि जिस रीति में अफीम भूसी जिसका भार 18.140 किलोग्राम था उसके बारे में अभियुक्त के कब्जे से बरामद होने का अभिकथन किया गया है और मामले के चलने और उसके गुणागुण के आधार पर आवेदन को खारिज कर दिया गया । विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने **राकेश कुमार** उर्फ **कुक्का** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में उस न्यायालय के समन्वित पीठ द्वारा अधिकथित विधि का उल्लेख करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 37 के अधीन अंतर्विष्ट उपबंध को ध्यान में रखते हुए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन आवेदन चलने योग्य नहीं है ।

3. अभियुक्त/आवेदक के विरुद्ध संक्षेप में यह अभिकथन किए गए हैं कि तारीख 12 फरवरी, 2017 को जब बोलेवाल चौक के नजदीक स्थित अभियुक्त/आवेदक के गौशाला की तलाशी ली गई तब वहां से 18.140 किलोग्राम अफीम की भूसी बरामद हुई थी । अतः स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम (जिसे इसमें इसके

---

[1] 2003 क्रिमिनल ला जर्नल 3503.

पश्चात् "एन. डी. पी. एस. अधिनियम" कहा गया है) की धारा 15 और 25 के अधीन मामला अभियुक्त/आवेदक के विरुद्ध दर्ज किया गया ।

4. जमानत मंजूर करने के मामले में अधिनियम की धारा 37 की कठोरता अपराधी के विरुद्ध केवल ऐसे मामले में लागू होती है जहां अपराधी धारा 19 या 24 या 27(क) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए और इस अधिनियम के अधीन वाणिज्यिक मात्रा से अंतर्वलित अपराधों के लिए भी दोषी ठहराया जाता है । वर्तमान मामला अधिनियम की धारा 19 या धारा 24 या धारा 27(क) के अधीन अभियुक्त/आवेदक द्वारा अपराध कारित किए जाने के अंतर्गत नहीं है और यह मामला इस किस्म का मामला है जिसमें वाणिज्यिक मात्रा की बरामदगी अंतर्वलित है जो अफीम की भूसी के रूप में 18.140 किलोग्राम है जिसे अभियुक्त से बरामद किए जाने का अभिकथन किया गया है, यह वाणिज्यिक मात्रा नहीं है परंतु अंतर मध्यस्थता अर्थात् उपरोक्त कम मात्रा और जो वाणिज्यिक मात्रा से कम है । इसलिए शायद **राकेश कुमार** उर्फ **कुक्का** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के समन्वित पीठ के निर्णय का विनिश्चयाधार इस मामले के वर्णित तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है और न स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 37 की कठोरता लागू होती है । अन्यथा भी **बलजीत सिंह** बनाम **असम राज्य**[1] वाले मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि इस अधिनियम को कहीं भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन आवेदन के चलने को ऐसे मामले में अपवर्जित नहीं किया गया है जो इस उपबंध के अधीन दर्ज हुआ हो और मामले में यह मत भी अपनाया गया कि अभियुक्त जिसे स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम के अधीन अपराध कारित किए जाने के लिए दोषी ठहराया गया है उसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन फाइल किया गया आवेदन चलने योग्य है । अधिनियम की धारा 37 के अधीन जमानत और बंधपत्रों के मामले में अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार भी दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध लागू होते हैं । इस आवेदन के चलने के बारे में प्रश्न जैसाकि विद्वान् अपर महाधिवक्ता द्वारा उठाया गया है, कोई

---

[1] 2004 (3) क्राइम 433.

बल है । किसी भी प्रकार वर्तमान मामले में कोई ऐसा विवाद्यक अंतर्वलित नहीं है इसलिए मामले के इस पहलू पर यदि इस न्यायालय के समक्ष कोई विचार प्रकट होता है तो मामले में समुचित विचार करने के लिए वह स्वतंत्र है ।

5. जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है अफीम की भूसी "बाड़ा" (कच्चा ढांचा) में बरामद हुई है जिसके बारे में अभियुक्त/आवेदक की गौशाला होने का अभिकथन किया गया है । इस रीति में इस बारे में कोई समुचित अवलोकन किया जाना पर्याप्त नहीं है । ऐसा स्थान जहां से अभिकथित अफीम की भूसी विनिषिद्ध माल बरामद किया गया हो ऐसी दशा में दूसरे पक्षकार के मामले में प्रतिकूलता की संभावना प्रकट होती है । तथापि, यह कहना भी पर्याप्त होगा कि जब 7 आपराधिक मामले कुछ समय पूर्व उसके विरुद्ध दर्ज किए गए थे और दंड संहिता की धारा तथा भारतीय वन अधिनियम, आबकारी अधिनियम तथा स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम के अधीन भिन्न-भिन्न अपराध कारित किए जाने में यह एक आठवां अपराध है । वर्तमान मामला ऐसा नहीं है कि जहां गिरफ्तारी से पूर्व जमानत उसके लिए मंजूर की जानी चाहिए । वस्तुतः कि अन्वेषण किए जाने के अनुक्रम में उसको अभिरक्षा में पूछताछ के लिए रखा जाना तार्किक रूप से अपेक्षित है । इस प्रकार आवेदन को खारिज किया जाता है ।

आवेदन खारिज किया गया ।

आर्य

राजेन्द्र सिंह

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 28 मार्च, 2017

न्यायमूर्ति चन्द्र भूषण बारोवालिया

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 379 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438] – जमानत आवेदन – यदि अभियुक्त-आवेदक अभियोजन साक्ष्य में हेरफेर करने की स्थिति में नहीं है और विधि के अनुसरण में अभियुक्त-आवेदक बुलाए जाने पर अन्वेषण कार्यवाही में सम्मिलित होता है तथा न्यायालय की अनुज्ञा बिना भारत से बाहर नहीं जाता है तथा अभियुक्त-आवेदक अधिकारी या न्यायालय के समक्ष किसी व्यक्ति द्वारा कोई बात प्रकट करने पर रोकता नहीं है तो उसे जमानत पर निर्मुक्त किया जाएगा ।

वर्तमान जमानत आवेदन आवेदक द्वारा पुलिस थाना फतेहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में दर्ज दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "भा. दं. सं." कहा गया है) की धारा 379 के अधीन तारीख 19 जनवरी, 2017 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 12/2017 वाले मामले में अपनी गिरफ्तार होने की दशा में अपनी जमानत पर निर्मुक्त होने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन फाइल किया गया । जमानत आवेदन का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने आवेदक के विद्वान् काउंसेल, राज्य के विद्वान् अपर महाधिवक्ता को सुना तथा ध्यानपूर्वक पुलिस रिपोर्ट सहित अभिलेख का परिशीलन किया । आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वर्तमान मामले में आवेदक निर्दोष है और उसे मिथ्या रूप से फंसाया गया है और वह उसी स्थान का निवासी है तथा न तो अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर करने की स्थिति में है और न न्याय को विफल करने की स्थिति में है । इसके विपरीत विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह दलील दी कि आवेदक ने गंभीर अपराध किया है और यह संभावना प्रकट होती है कि वह अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर

कर सकता है तथा न्याय को क्षति पहुंचा सकता है । अंततः उन्होंने यह अनुरोध किया कि आवेदक का जमानत आवेदन खारिज किया जाए । इस प्रक्रम पर सभी तथ्यों को विचार में लेते हुए कि आवेदक उसी स्थान का निवासी है और वह अन्वेषण में शामिल हुआ है तथा अन्वेषण में सहयोग भी कर रहा है । वह न तो अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर करने की स्थिति में है और न न्याय को विफलता के कगार पर लाने की स्थिति में है । इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि यह एक उपयुक्त मामला है जहां उसकी गिरफ्तारी की दशा में न्यायिक विवेक उसके पक्ष में आवेदक की जमानत को स्वीकार किया जाना अपेक्षित है । इन परिस्थितियों के अधीन यह आदेश किया जाता है कि आवेदक को उसकी गिरफ्तारी की दशा में जो पुलिस थाना फतेहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में दर्ज दंड संहिता की धारा 379 के अधीन तारीख 19 जनवरी, 2017 के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 12/2017 वाले मामले में, उसे 10,000/- रुपए की राशि के बंधपत्र के साथ उसी राशि का एक प्रतिभू देने पर अन्वेषक अधिकारी के समाधान पर निर्मुक्त किया जाता है । जमानत निम्नलिखित शर्तों के अध्यधीन मंजूर की जाती है – (i) विधि के अनुसरण में जब भी आवेदक को अन्वेषक अधिकारी द्वारा बुलाया जाएगा वह अन्वेषण में सम्मिलित होगा । (ii) कि आवेदक न्यायालय से पूर्व अनुज्ञा लिए बिना भारत छोड़कर नहीं जाएगा । (iii) कि आवेदक प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से मामले के तथ्यों से परिचित किसी व्यक्ति को कोई धमकी या किसी तरह के वचन नहीं करेगा जिससे कि अन्वेषण अधिकारी या न्यायालय को ऐसे तथ्यों को प्रकट करने से उसे रोका जाए । (पैरा 5 और 6)

प्रकीर्ण (दांडिक) अधिकारिता : 2017 की दांडिक प्रकीर्ण आवेदन (एम.) सं. 118.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 के अधीन आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री एन. के. तोमर, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री विरेन्द्र कुमार वर्मा, अपर महाधिवक्ता साथ में पुष्पिन्दर जसवाल उप-महाधिवक्ता और रजत चौहान विधि अधिकारी

हेड कांस्टबेल कपिल देव सं. 211, अन्वेषक अधिकारी, पुलिस थाना फतेहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश

न्यायमूर्ति चन्द्र भूषण बारोवालिया – वर्तमान जमानत आवेदन आवेदक द्वारा पुलिस थाना फतेहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में दर्ज दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "भा. दं. सं." कहा गया है) की धारा 379 के अधीन तारीख 19 जनवरी, 2017 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 12/2017 वाले मामले में अपनी गिरफ्तार होने की दशा में अपनी जमानत पर निर्मुक्त होने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन फाइल किया गया ।

2. आवेदक के विद्वान् काउंसेल के अनुसार वर्तमान मामले में आवेदक निर्दोष है और उसे मिथ्या रूप से फंसाया गया है । वह उसी स्थान का निवासी है और इसलिए अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर करने की स्थिति में नहीं है जिससे कि न्याय पर प्रभाव पड़ता हो इसलिए वह जमानत पर निर्मुक्त हो सकता है ।

3. पुलिस रिपोर्ट फाइल की गई । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार तारीख 19 जनवरी, 2017 को फारेस्ट गार्ड देवेन्द्र सिंह ने दूरभाष से पुलिस को यह सूचना दी कि पिछली रात्रि कुछ व्यक्ति पेड़ काट रहे थे और वे घटनास्थल से भाग गए । वहां पर एक स्कूटी खड़ी थी और प्रातः वह वहीं पर खड़ी रही । एक खैर का पेड़ कटा हुआ पाया गया था तथा भिन्न-भिन्न आकार के 4 लट्ठा भी वहां पर पड़े हुए थे । लट्ठे सहित स्कूटी को पकड़ा गया था । पुलिस ने मामले में अन्वेषण किया और अन्वेषण के दौरान इसका तारीख 18 जनवरी, 2017 को पता लगाया गया था । आवेदक ने श्री सुखविन्दर सिंह नामक व्यक्ति से अपने हाथ की मरहम पट्टी करते हुए देखा गया था । यह भी पता लगाया गया था कि आवेदक ने मीना देवी से मदद के लिए कहा था और उसने उससे कहा कि वह जंगली पेड़ काटने के लिए जंगल में गया हुआ था तथापि, वहां पर वन विभाग के लोग पहुंच गए और वह भाग खड़ा हुआ तथा वहां पर उसने अपनी स्कूटी भी छोड़ दी । मीना देवी का कथन भी अभिलिखित किया गया था । आवेदक के साथ सह-अभियुक्त को गिरफ्तार किया

गया था और एक अन्य सह-अभियुक्त को अभी भी गिरफ्तार किया जाना है क्योंकि वह फरार है । आवेदक तारीख 26 मार्च, 2017 तक अन्वेषण में सम्मिलित नहीं हुआ । आवेदक से कोई बरामदगी नहीं हुई है ।

4. मैंने आवेदक के विद्वान् काउंसेल, राज्य के विद्वान् अपर महाधिवक्ता को सुना तथा ध्यान पूर्वक पुलिस रिपोर्ट सहित अभिलेख का परिशीलन किया ।

5. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वर्तमान मामले में आवेदक निर्दोष है और उसे मिथ्या रूप से फंसाया गया है और वह उसी स्थान का निवासी है तथा न तो अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर करने की स्थिति में है और न न्याय को विफल करने की स्थिति में है । इसके विपरीत विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह दलील दी कि आवेदक ने गंभीर अपराध किया है और यह संभावना प्रकट होती है कि वह अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर कर सकता है तथा न्याय को क्षति पहुंचा सकता है । अंततः उन्होंने यह अनुरोध किया कि आवेदक का जमानत आवेदन खारिज किया जाए ।

6. इस प्रक्रम पर सभी तथ्यों को विचार में लेते हुए कि आवेदक उसी स्थान का निवासी है और वह अन्वेषण में शामिल हुआ है तथा अन्वेषण में सहयोग भी कर रहा है । वह न तो अभियोजन साक्ष्य में हेर-फेर करने की स्थिति में है और न न्याय को विफलता के कगार पर लाने की स्थिति में है । इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि यह एक उपयुक्त मामला है जहां उसकी गिरफ्तारी की दशा में न्यायिक विवेक उसके पक्ष में आवेदक की जमानत को स्वीकार किया जाना अपेक्षित है । इन परिस्थितियों के अधीन यह आदेश किया जाता है कि आवेदक को उसकी गिरफ्तारी की दशा में जो पुलिस थाना फतेहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में दर्ज दंड संहिता की धारा 379 के अधीन तारीख 19 जनवरी, 2017 के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 12/2017 वाले मामले में, उसे 10,000/- रुपए की राशि के बंधपत्र के साथ उसी राशि का एक प्रतिभू देने पर अन्वेषक अधिकारी के समाधान पर निर्मुक्त किया जाता है । जमानत निम्नलिखित शर्तों के अध्यधीन मंजूर की जाती है :–

"(i) विधि के अनुसरण में जब भी आवेदक को अन्वेषक

अधिकारी द्वारा बुलाया जाएगा वह अन्वेषण में सम्मिलित होगा ।

(ii) कि आवेदक न्यायालय से पूर्व अनुज्ञा लिए बिना भारत छोड़कर नहीं जाएगा ।

(iii) कि आवेदक प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से मामले के तथ्यों से परिचित किसी व्यक्ति को कोई धमकी या किसी तरह के वचन नहीं करेगा जिससे कि अन्वेषण अधिकारी या न्यायालय को ऐसे तथ्यों को प्रकट करने से उसे रोका जाए ।"

7. उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए, आवेदन का निपटारा किया जाता है ।

आवेदन का निपटारा किया गया ।

आर्य

गतांक से आगे.....

अध्याय 23
जांचों और विचारणों में साक्ष्य

क – साक्ष्य लेने और अभिलिखित करने का ढंग

272. न्यायालयों की भाषा – राज्य सरकार यह अवधारित कर सकती है कि इस संहिता के प्रयोजनों के लिए राज्य के अन्दर उच्च न्यायालय से भिन्न प्रत्येक न्यायालय की कौन सी भाषा होगी ।

273. साक्ष्य का अभियुक्त की उपस्थिति में लिया जाना – अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में लिया गया सब साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में या जब उसे वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्त कर दिया गया है तब उसके प्लीडर की उपस्थिति में लिया जाएगा :

[1][परन्तु जहां अठारह वर्ष से कम आयु की स्त्री का, जिससे बलात्संग या किसी अन्य लैंगिक अपराध के किए जाने का अभिकथन किया जाता है, साक्ष्य अभिलिखित किया जाना है, वहां न्यायालय यह सुनिश्चित करने के लिए ऐसी स्त्री का अभियुक्त से सामना न हो और साथ ही अभियुक्त की प्रतिपरीक्षा के अधिकार को सुनिश्चित करते हुए समुचित उपाय कर सकेगा ।]

स्पष्टीकरण – इस धारा में "अभियुक्त" के अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति भी है जिसकी बाबत अध्याय 8 के अधीन कोई कार्यवाही इस संहिता के अधीन प्रारंभ की जा चुकी है ।

274. समन-मामलों और जांचों में अभिलेख – (1) मजिस्ट्रेट के समक्ष विचारित सब समन-मामलों में, धारा 145 से धारा 148 तक की धाराओं के अधीन (जिनके अन्तर्गत ये दोनों धाराएं भी हैं) सब जांचों में, और विचारण के अनुक्रम की कार्यवाहियों से भिन्न धारा 446 के अधीन सब कार्यवाहियों में, मजिस्ट्रेट जैसे-जैसे प्रत्येक साक्षी की परीक्षा होती जाती है, वैसे-वैसे उसके साक्ष्य के सारांश का ज्ञापन न्यायालय की भाषा में तैयार करेगा :

परन्तु यदि मजिस्ट्रेट ऐसा ज्ञापन स्वयं तैयार करने में असमर्थ है तो वह अपनी असमर्थता के कारणों को अभिलिखित करने के पश्चात् ऐसे ज्ञापन को खुले न्यायालय में स्वयं बोलकर लिखित रूप में तैयार कराएगा ।

---

[1] 2013 के अधिनियम सं. 13 की धारा 20 द्वारा अंतःस्थापित ।

(2) ऐसे ज्ञापन पर मजिस्ट्रेट हस्ताक्षर करेगा और वह अभिलेख का भाग होगा ।

275. वारण्ट-मामलों में अभिलेख – (1) मजिस्ट्रेट के समक्ष विचारित सब वारंट-मामलों में प्रत्येक साक्षी का साक्ष्य जैसे-जैसे उसकी परीक्षा होती जाती है, वैसे-वैसे या तो स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा लिखा जाएगा या खुले न्यायालय में उसके द्वारा बोलकर लिखवाया जाएगा या जहां वह किसी शारीरिक या अन्य असमर्थता के कारण ऐसा करने में असमर्थ है, वहां उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा उसके निदेशन और अधीक्षण में लिखा जाएगा :

[1][परंतु इस उपधारा के अधीन साक्षी का साक्ष्य उस अपराध के अभियुक्त व्यक्ति के अधिवक्ता की उपस्थिति में श्रव्य-दृश्य इलैक्ट्रानिक साधनों द्वारा भी अभिलिखित किया जा सकेगा ।]

(2) जहां मजिस्ट्रेट साक्ष्य लिखवाए वहां वह यह प्रमाणपत्र अभिलिखित करेगा कि साक्ष्य उपधारा (1) में निर्दिष्ट कारणों से स्वयं उसके द्वारा नहीं लिखा जा सका ।

(3) ऐसा साक्ष्य मामूली तौर पर वृत्तांत के रूप में अभिलिखित किया जाएगा किन्तु मजिस्ट्रेट स्वविवेकानुसार, ऐसे साक्ष्य के किसी भाग को प्रश्नोत्तर के रूप में लिख या लिखवा सकता है ।

(4) ऐसे लिखे गए साक्ष्य पर मजिस्ट्रेट हस्ताक्षर करेगा और वह अभिलेख का भाग होगा ।

276. सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण में अभिलेख – (1) सेशन न्यायालय के समक्ष सब विचारणों में प्रत्येक साक्षी का साक्ष्य, जैसे-जैसे उसकी परीक्षा होती जाती है, वैसे-वैसे या तो स्वयं पीठासीन न्यायाधीश द्वारा लिखा जाएगा या खुले न्यायालय में उसके द्वारा बोलकर लिखवाया जाएगा या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा उसके निदेशन और अधीक्षण में लिखा जाएगा ।

[2][(2) ऐसा साक्ष्य मामूली तौर पर वृत्तांत के रूप में लिखा जाएगा किन्तु पीठासीन न्यायाधीश स्वविवेकानुसार ऐसे साक्ष्य के किसी भाग को

---

[1] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 20 द्वारा अंतःस्थापित ।

[2] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 20 द्वारा उपधारा (2) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

प्रश्नोत्तर के रूप में लिख सकता है या लिखवा सकता है ।]

(3) ऐसे लिखे गए साक्ष्य पर पीठासीन न्यायाधीश हस्ताक्षर करेगा और वह अभिलेख का भाग होगा ।

277. साक्ष्य के अभिलेख की भाषा – प्रत्येक मामले में जहां साक्ष्य धारा 275 या धारा 276 के अधीन लिखा जाता है वहां –

(क) यदि साक्षी न्यायालय की भाषा में साक्ष्य देता है तो उसे उसी भाषा में लिखा जाएगा ;

(ख) यदि वह किसी अन्य भाषा में साक्ष्य देता है तो उसे, यदि साक्ष्य हो तो, उसी भाषा में लिखा जा सकेगा और यदि ऐसा करना साध्य न हो तो जैसे-जैसे साक्षी की परीक्षा होती जाती है, वैसे-वैसे साक्ष्य का न्यायालय की भाषा में सही अनुवाद तैयार किया जाएगा, उस पर मजिस्ट्रेट या पीठासीन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे और वह अभिलेख का भाग होगा ;

(ग) उस दशा में जिसमें साक्ष्य खंड (ख) के अधीन न्यायालय की भाषा से भिन्न किसी भाषा में लिखा जाए, न्यायालय की भाषा में उसका सही अनुवाद यथासाध्य शीघ्र तैयार किया जाएगा, उस पर मजिस्ट्रेट या पीठासीन न्यायाधीश हस्ताक्षर करेगा और वह अभिलेख का भाग होगा :

परन्तु जब खंड (ख) के अधीन साक्ष्य अंग्रेजी में लिखा जाता है और न्यायालय की भाषा में उसके अनुवाद की किसी पक्षकार द्वारा अपेक्षा नहीं की जाती है तो न्यायालय ऐसे अनुवाद से अभिमुक्ति दे सकता है ।

278. जब ऐसा साक्ष्य पूरा हो जाता है तब उसके संबंध में प्रक्रिया – (1) जैसे-जैसे प्रत्येक साक्षी का साक्ष्य जो धारा 275 या धारा 276 के अधीन लिया जाए, पूरा होता जाता है, वैसे-वैसे वह, यदि अभियुक्त हाजिर हो तो उसकी, या यदि वह प्लीडर द्वारा हाजिर हो तो उसके प्लीडर की उपस्थिति में साक्षी को पढ़कर सुनाया जाएगा और यदि आवश्यक हो तो शुद्ध किया जाएगा ।

(2) यदि साक्षी साक्ष्य के किसी भाग की शुद्धता से उस समय इनकार करता है जब वह उसे पढ़कर सुनाया जाता है तो मजिस्ट्रेट या पीठासीन न्यायाधीश साक्ष्य को शुद्ध करने के बजाय उस पर साक्षी द्वारा

उस बाबत की गई आपत्ति का ज्ञापन लिख सकता है और उसमें ऐसी टिप्पणियां जोड़ देगा जैसी वह आवश्यक समझे ।

(3) यदि साक्ष्य का अभिलेख उस भाषा से भिन्न भाषा में है जिसमें वह दिया गया है और साक्षी उस भाषा को नहीं समझता है तो, उसे ऐसे अभिलेख का भाषान्तर उस भाषा में जिसमें वह दिया गया था अथवा उस भाषा में जिसे वह समझता हो, सुनाया जाएगा ।

279. अभियुक्त या उसके प्लीडर को साक्ष्य का भाषान्तर सुनाया जाना – (1) जब कभी कोई साक्ष्य ऐसी भाषा में दिया जाए जिसे अभियुक्त नहीं समझता है और वह न्यायालय में स्वयं उपस्थित है तब खुले न्यायालय में उसे उस भाषा में उसका भाषान्तर सुनाया जाएगा जिसे वह समझता है ।

(2) यदि वह प्लीडर द्वारा हाजिर हो और साक्ष्य न्यायालय की भाषा से भिन्न और प्लीडर द्वारा न समझी जाने वाली भाषा में दिया जाता है तो उसका भाषान्तर ऐसे प्लीडर को न्यायालय की भाषा में सुनाया जाएगा ।

(3) जब दस्तावेजें यथा रीति सबूत के प्रयोजन के लिए पेश की जाती हैं तब यह न्यायालय के स्वविवेक पर निर्भर करेगा कि वह उनमें से उतने का भाषान्तर सुनाए जितना आवश्यक प्रतीत हो ।

280. साक्षी की भावभंगी के बारे में टिप्पणियां – जब पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट साक्षी का साक्ष्य अभिलिखित कर लेता है तब वह उस साक्षी की परीक्षा किए जाते समय उसकी भावभंगी के बारे में ऐसी टिप्पणियां भी अभिलिखित करेगा (यदि कोई हों), जो वह तात्विक समझता है ।

281. अभियुक्त की परीक्षा का अभिलेख – (1) जब कभी अभियुक्त की परीक्षा किसी महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा की जाती है तो वह मजिस्ट्रेट अभियुक्त की परीक्षा के सारांश का ज्ञापन न्यायालय की भाषा में तैयार करेगा और ऐसे ज्ञापन पर मजिस्ट्रेट हस्ताक्षर करेगा और वह अभिलेख का भाग होगा ।

(2) जब कभी अभियुक्त की परीक्षा महानगर मजिस्ट्रेट से भिन्न किसी मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय द्वारा की जाती है तब उससे पूछे गए प्रत्येक प्रश्न और उसके द्वारा दिए गए प्रत्येक उत्तर सहित ऐसी सब परीक्षा स्वयं पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा या जहां वह किसी शारीरिक या

अन्य असमर्थता के कारण ऐसा करने में असमर्थ है, वहां उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा उसके निदेशन और अधीक्षण में पूरे तौर पर अभिलिखित की जाएगी ।

(3) अभिलेख, यदि साध्य हो तो, उस भाषा में होगा जिसमें अभियुक्त की परीक्षा की जाती है या यदि यह साध्य न हो तो न्यायालय की भाषा में होगा ।

(4) अभिलेख अभियुक्त को दिखा दिया जाएगा या उसे पढ़ कर सुना दिया जाएगा या यदि वह भाषा को नहीं समझता है जिसमें वह लिखा गया है तो उसका भाषान्तर उसे उस भाषा में, जिसे वह समझता है, सुनाया जाएगा और वह अपने उत्तरों का स्पष्टीकरण करने या उनमें कोई बात जोड़ने के लिए स्वतंत्र होगा ।

(5) तब उस पर अभियुक्त और मजिस्ट्रेट या पीठासीन न्यायाधीश हस्ताक्षर करेंगे और मजिस्ट्रेट या पीठासीन न्यायाधीश अपने हस्ताक्षर से प्रमाणित करेगा कि परीक्षा उसकी उपस्थिति में की गई थी और उसने उसे सुना था और अभिलेख में अभियुक्त द्वारा किए गए कथन का पूर्ण और सही वर्णन है ।

(6) इस धारा की कोई बात संक्षिप्त विचारण के अनुक्रम में अभियुक्त की परीक्षा को लागू होने वाली न समझी जाएगी ।

282. दुभाषिया ठीक-ठीक भाषान्तर करने के लिए आबद्ध होगा – जब किसी साक्ष्य या कथन के भाषान्तर के लिए दुभाषिए की सेवा की किसी दंड न्यायालय द्वारा अपेक्षा की जाती है तब वह दुभाषिया ऐसे साक्ष्य या कथन का ठीक भाषान्तर करने के लिए आबद्ध होगा ।

283. उच्च न्यायालय में अभिलेख – प्रत्येक उच्च न्यायालय, साधारण नियम द्वारा ऐसी रीति विहित कर सकता है जिससे उन मामलों में साक्षियों के साक्ष्य को और अभियुक्त की परीक्षा को लिखा जाएगा जो उसके समक्ष आते हैं, और ऐसे साक्ष्य और परीक्षा को ऐसे नियम के अनुसार लिखा जाएगा ।

ख – साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन

284. कब साक्षियों को हाजिर होने से अभिमुक्ति दी जाए और कमीशन जारी किया जाएगा – (1) जब कभी इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में, न्यायालय या मजिस्ट्रेट को

प्रतीत होता है कि न्याय के उद्देश्यों के लिए यह आवश्यक है कि किसी साक्षी की परीक्षा की जाए और ऐसे साक्षी की हाजिरी इतने विलम्ब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी मामले की परिस्थितियों में अनुचित होगी, नहीं कराई जा सकती है तब न्यायालय या मजिस्ट्रेट ऐसी हाजिरी से अभिमुक्ति दे सकता है और साक्षी की परीक्षा की जाने के लिए इस अध्याय के उपबंधों के अनुसार कमीशन जारी कर सकता है :

परन्तु जहां न्याय के उद्देश्यों के लिए भारत के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल या किसी संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक की साक्षी के रूप में परीक्षा करना आवश्यक है वहां ऐसे साक्षी की परीक्षा करने के लिए कमीशन जारी किया जाएगा ।

(2) न्यायालय अभियोजन के किसी साक्षी की परीक्षा के लिए कमीशन जारी करते समय यह निदेश दे सकता है कि प्लीडर की फीस सहित ऐसी रकम जो न्यायालय अभियुक्त के व्ययों की पूर्ति के लिए उचित समझे, अभियोजन द्वारा दी जाए ।

285. कमीशन किसको जारी किया जाएगा – (1) यदि साक्षी उन राज्यक्षेत्रों के अन्दर है, जिन पर इस संहिता का विस्तार है, तो कमीशन, यथास्थिति, उस महानगर मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को निर्दिष्ट होगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसा साक्षी मिल सकता है ।

(2) यदि साक्षी भारत में है किन्तु ऐसे राज्य या ऐसे किसी क्षेत्र में है जिस पर इस संहिता का विस्तार नहीं है तो कमीशन ऐसे न्यायालय या अधिकारी को निर्दिष्ट होगा जिसे केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे ।

(3) यदि साक्षी भारत से बाहर के देश या स्थान में है और ऐसे देश या स्थान की सरकार से केन्द्रीय सरकार ने आपराधिक मामलों के संबंध में साक्षियों का साक्ष्य लेने के लिए ठहराव कर रखे हैं तो कमीशन ऐसे प्ररूप में जारी किया जाएगा, ऐसे न्यायालय या अधिकारी को निर्दिष्ट होगा और पारेषित किए जाने के लिए ऐसे प्राधिकारी को भेजा जाएगा जो केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा इस निमित्त विहित करे ।

286. कमीशनों का निष्पादन – कमीशन प्राप्त होने पर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अथवा ऐसा महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करे, साक्षी

को अपने समक्ष आने के लिए समन करेगा अथवा उस स्थान को जाएगा जहां साक्षी है और उसका साक्ष्य उसी रीति से लिखेगा और इस प्रयोजन के लिए उन्हीं शक्तियों का प्रयोग कर सकेगा जो इस संहिता के अधीन वारंट-मामलों के विचारण के लिए हैं ।

287. पक्षकार साक्षियों की परीक्षा कर सकेंगे – (1) इस संहिता के अधीन किसी ऐसी कार्यवाही के पक्षकार, जिसमें कमीशन जारी किया गया है, अपने-अपने ऐसे लिखित परिप्रश्न भेज सकते हैं जिन्हें कमीशन का निदेश देने वाला न्यायालय या मजिस्ट्रेट विवाद्यक से सुसंगत समझता है और उस मजिस्ट्रेट, न्यायालय या अधिकारी के लिए, जिसे कमीशन निर्दिष्ट किया जाता है या जिसे उसके निष्पादन का कर्तव्य प्रत्यायोजित किया जाता है, यह विधिपूर्ण होगा कि वह ऐसे परिप्रश्नों के आधार पर साक्षी की परीक्षा करे ।

(2) कोई ऐसा पक्षकार ऐसे मजिस्ट्रेट, न्यायालय या अधिकारी के समक्ष प्लीडर द्वारा, या यदि अभिरक्षा में नहीं है तो स्वयं हाजिर हो सकता है और उक्त साक्षी की (यथास्थिति) परीक्षा, प्रति-परीक्षा और पुनः परीक्षा कर सकता है ।

288. कमीशन का लौटाया जाना – (1) धारा 284 के अधीन जारी किए गए किसी कमीशन के सम्यक् रूप से निष्पादित किए जाने के पश्चात् वह उसके अधीन परीक्षित साक्षियों के अभिसाक्ष्य सहित उस न्यायालय या मजिस्ट्रेट को, जिसने कमीशन जारी किया था, लौटाया जाएगा ; और वह कमीशन, उससे संबद्ध विवरणी और अभिसाक्ष्य सब उचित समयों पर पक्षकारों के निरीक्षण के लिए प्राप्य होंगे, और सब न्यायसंगत अपवादों के अधीन रहते हुए, किसी पक्षकार द्वारा मामले में साक्ष्य पढ़े जा सकेंगे और अभिलेख का भाग होंगे ।

(2) यदि ऐसे लिया गया कोई अभिसाक्ष्य, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 33 द्वारा विहित शर्तों को पूरा करता है, तो वह किसी अन्य न्यायालय के समक्ष भी मामले के किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम में साक्ष्य में लिया जा सकेगा ।

289. कार्यवाही का स्थगन – प्रत्येक मामले में, जिसमें धारा 284 के अधीन कमीशन जारी किया गया है, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही ऐसे विनिर्दिष्ट समय तक के लिए, जो कमीशन के निष्पादन और लौटाए जाने के लिए उचित रूप से पर्याप्त है, स्थगित की जा सकती है ।

290. विदेशी कमीशनों का निष्पादन – (1) धारा 286 के उपबंध और धारा 287 और धारा 288 के उतने भाग के उपबंध, जितना कमीशन का निष्पादन किए जाने और उसके लौटाए जाने से संबंधित है, इसमें इसके पश्चात् वर्णित किन्हीं न्यायालयों, न्यायाधीशों या मजिस्ट्रेटों द्वारा जारी किए गए कमीशनों के बारे में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे धारा 284 के अधीन जारी किए गए कमीशनों को लागू होते हैं ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट न्यायालय, न्यायाधीश और मजिस्ट्रेट निम्नलिखित हैं –

(क) भारत के ऐसे क्षेत्र के अन्दर, जिस पर इस संहिता का विस्तार नहीं है, अधिकारिता का प्रयोग करने वाला ऐसा न्यायालय, न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट जिसे केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे ;

(ख) भारत से बाहर के किसी ऐसे देश या स्थान में, जिसे केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, अधिकारिता का प्रयोग करने वाला और उस देश या स्थान में प्रवृत्त विधि के अधीन आपराधिक मामलों के संबंध में साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन जारी करने का प्राधिकार रखने वाला न्यायालय, न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट ।

291. चिकित्सीय साक्षी का अभिसाक्ष्य – (1) अभियुक्त की उपस्थिति में मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया और अनुप्रमाणित किया गया या इस अध्याय के अधीन कमीशन पर लिया गया, सिविल सर्जन या अन्य चिकित्सीय साक्षी का अभिसाक्ष्य इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में दिया जा सकेगा, यद्यपि अभिसाक्षी को साक्षी के तौर पर नहीं बुलाया गया है ।

(2) यदि न्यायालय ठीक समझता है तो वह ऐसे किसी अभिसाक्षी को समन कर सकता है और उसके अभिसाक्ष्य की विषयवस्तु के बारे में उसकी परीक्षा कर सकता है और अभियोजन या अभियुक्त के आवेदन पर वैसा करेगा ।

[1][**291क. मजिस्ट्रेट की शिनाख्त रिपोर्ट** – (1) कोई दस्तावेज, जिसका किसी व्यक्ति या सम्पत्ति के संबंध में किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट

---

[1] 2005 के अधिनियम सं. 25 की धारा 24 द्वारा अंतःस्थापित ।

की स्वहस्ताक्षरित शिनाख्त रिपोर्ट होना तात्पर्यित है, इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में उपयोग में लाया जा सकेगा, यद्यपि ऐसे मजिस्ट्रेट को साक्षी के तौर पर नहीं बुलाया गया है :

परन्तु जहां ऐसी रिपोर्ट में ऐसे किसी संदिग्ध व्यक्ति या साक्षी का विवरण है, जिसे भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की, यथास्थिति, धारा 21, धारा 32, धारा 33, धारा 155 या धारा 157 के उपबंध लागू होते हैं, वहां, ऐसा विवरण इस उपधारा के अधीन, उन धाराओं के उपबंधों के अनुसार के सिवाय, प्रयोग में नहीं लाया जाएगा ।

(2) न्यायालय, यदि वह ठीक समझता है और अभियोजन या अभियुक्त के आवेदन पर ऐसे मजिस्ट्रेट को समन कर सकेगा और उक्त रिपोर्ट की विषयवस्तु के बारे में उसकी परीक्षा कर सकेगा और करेगा ।]

292. टकसाल के अधिकारियों का साक्ष्य – (1) कोई दस्तावेज, [1][जो, यथास्थिति, किसी टकसाल या नोट छपाई मुद्रणालय के या सिक्योरिटी प्रिंटिंग प्रेस के (जिसके अन्तर्गत स्टांप और लेखन सामग्री नियंत्रक का कार्यालय भी है) या न्याय संबंधी विभाग या न्यायालयिक प्रयोगशाला प्रभाग के ऐसे अधिकारी की या प्रश्नगत दस्तावेजों के सरकारी परीक्षक या प्रश्नगत दस्तावेजों के राज्य परीक्षक की] जिसे केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, इस संहिता के अधीन किसी कार्यवाही के दौरान परीक्षा और रिपोर्ट के लिए सम्यक् रूप से उसे भेजी गई किसी सामग्री या चीज के बारे में स्वहस्ताक्षरित रिपोर्ट होनी तात्पर्यित है, इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के तौर पर उपयोग में लाई जा सकेगी, यद्यपि ऐसे अधिकारी को साक्षी के तौर पर नहीं बुलाया गया है ।

(2) यदि न्यायालय ठीक समझता है तो वह ऐसे अधिकारी को समन कर सकता है और उसकी रिपोर्ट की विषयवस्तु के बारे में उसकी परीक्षा कर सकता है :

परन्तु ऐसा कोई अधिकारी किन्हीं ऐसे अभिलेखों को पेश करने के लिए समन नहीं किया जाएगा जिन पर रिपोर्ट आधारित है ।

(3) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) की धारा 123

---

[1] 2006 के अधिनियम सं. 2 की धारा 5 द्वारा कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

और 124 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि ऐसा कोई अधिकारी [1][यथास्थिति, किसी टकसाल या नोट छपाई मुद्रणालय या सिक्योरिटी प्रिंटिंग प्रेस या न्याय संबंधी विभाग के महाप्रबंधक या किसी अन्य भारसाधक अधिकारी या न्यायालयिक प्रयोगशाला के भारसाधक किसी अधिकारी या प्रश्नगत दस्तावेज संगठन के सरकारी परीक्षक या प्रश्नगत दस्तावेज संगठन के राज्य परीक्षक की] अनुज्ञा के बिना, –

(क) ऐसे अप्रकाशित शासकीय अभिलेखों से, जिन पर रिपोर्ट आधारित है, प्राप्त कोई साक्ष्य देने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा ; अथवा

(ख) किसी सामग्री या चीज की परीक्षा के दौरान उसके द्वारा किए गए परीक्षण के स्वरूप या विशिष्टियों को प्रकट करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा ।

293. कतिपय सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञों की रिपोर्ट – (1) कोई दस्तावेज, जो किसी सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ की, जिसे यह धारा लागू होती है, इस संहिता के अधीन किसी कार्यवाही के दौरान परीक्षा या विश्लेषण और रिपोर्ट के लिए सम्यक् रूप से उसे भेजी गई किसी सामग्री या चीज के बारे में स्वहस्ताक्षरित रिपोर्ट होनी तात्पर्यित है, इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के तौर पर उपयोग में लाई जा सकेगी ।

(2) यदि न्यायालय ठीक समझता है तो वह ऐसे विशेषज्ञ को समन कर सकता है और उसकी रिपोर्टों की विषयवस्तु के बारे में उसकी परीक्षा कर सकेगा ।

(3) जहां ऐसे किसी विशेषज्ञ को न्यायालय द्वारा समन किया जाता है और वह स्वयं हाजिर होने में असमर्थ है वहां, उस दशा के सिवाय जिससे न्यायालय ने उसे स्वयं हाजिर होने के लिए स्पष्ट रूप से निदेश दिया है, वह अपने साथ काम करने वाले किसी जिम्मेदार अधिकारी को न्यायालय में हाजिर होने के लिए प्रतिनियुक्त कर सकता है यदि वह अधिकारी मामले के तथ्यों से अवगत है तथा न्यायालय में उसकी ओर से समाधानप्रद रूप में अभिसाक्ष्य दे सकता है ।

(4) यह धारा निम्नलिखित सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञों को लागू होती है अर्थात् :–

---

[1] 2006 के अधिनियम सं. 2 की धारा 5 द्वारा कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(क) सरकार का कोई रासायनिक परीक्षक या सहायक रासायनिक परीक्षक ;

[1][(ख) मुख्य विस्फोटक नियंत्रक] ;

(ग) अंगुली-छाप कार्यालय निदेशक ;

(घ) निदेशक, हाफकीन संस्थान, मुम्बई ;

(ङ) किसी केन्द्रीय न्याय संबंधी विज्ञान प्रयोगशाला या किसी राज्य न्याय संबंधी विज्ञान प्रयोगशाला का निदेशक [2][उप-निदेशक या सहायक निदेशक] ;

(च) सरकारी सीरम विज्ञानी ।

[3][(छ) कोई अन्य सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ, जो इस प्रयोजन के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट किया गया हो ।]

294. कुछ दस्तावेजों का औपचारिक सबूत आवश्यक न होना – (1) जहां अभियोजन या अभियुक्त द्वारा किसी न्यायालय के समक्ष कोई दस्तावेज फाइल की गई है वहां ऐसी प्रत्येक दस्तावेज की विशिष्टियां एक सूची में सम्मिलित की जाएंगी और, यथास्थिति, अभियोजन या अभियुक्त अथवा अभियोजन या अभियुक्त के प्लीडर से, यदि कोई हों, ऐसी प्रत्येक दस्तावेज का असली होना स्वीकार या इनकार करने की अपेक्षा की जाएगी ।

(2) दस्तावेजों की सूची ऐसे प्ररूप में होगी जो राज्य सरकार द्वारा विहित किया जाए ।

(3) जहां किसी दस्तावेज का असली होना विवादग्रस्त नहीं है वहां ऐसी दस्तावेज उस व्यक्ति के जिसके द्वारा हस्ताक्षरित होना तात्पर्यित है, हस्ताक्षर के सबूत के बिना इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में पढ़ी जा सकेगी :

परन्तु न्यायालय, स्वविवेकानुसार, यह अपेक्षा कर सकता है कि ऐसे हस्ताक्षर साबित किए जाएं ।

295. लोक सेवकों के आचरण के सबूत के बारे में शपथपत्र – जब

---

[1] 2005 के अधिनियम सं. 25 की धारा 26 द्वारा खंड (ख) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 21 द्वारा अंतःस्थापित ।

[3] 2005 के अधिनियम सं. 25 की धारा 26 द्वारा जोड़ा गया ।

किसी न्यायालय में इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के दौरान कोई आवेदन किया जाता है और उसमें किसी लोक सेवक के बारे में अभिकथन किए जाते हैं तब आवेदक आवेदन में अभिकथित तथ्यों का शपथपत्र द्वारा साक्ष्य दे सकता है और यदि न्यायालय ठीक समझे तो वह आदेश दे सकता है कि ऐसे तथ्यों से संबंधित साक्ष्य इस प्रकार दिया जाए ।

296. शपथपत्र पर औपचारिक साक्ष्य – (1) किसी भी व्यक्ति का ऐसा साक्ष्य जो औपचारिक है शपथपत्र द्वारा दिया जा सकता है और, सब न्यायसंगत अपवादों के अधीन रहते हुए इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में पढ़ा जा सकता है ।

(2) यदि न्यायालय ठीक समझे तो वह किसी व्यक्ति को समन कर सकता है और उसके शपथपत्र में अन्तर्विष्ट तथ्यों के बारे में उसकी परीक्षा कर सकता है किन्तु अभियोजन या अभियुक्त के आवेदन पर ऐसा करेगा ।

297. प्राधिकारी जिनके समक्ष शपथपत्रों पर शपथ ग्रहण किया जा सकेगा – (1) इस संहिता के अधीन किसी न्यायालय के समक्ष उपयोग में लाए जाने वाले शपथपत्रों पर शपथ ग्रहण या प्रतिज्ञान निम्नलिखित के समक्ष किया जा सकता है –

[1][(क) कोई न्यायाधीश या कोई न्यायिक या कार्यपालक मजिस्ट्रेट ; अथवा] ;

(ख) उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा नियुक्त कोई शपथ कमिश्नर ; अथवा

(ग) नोटरी अधिनियम, 1952 (1952 का 53) के अधीन नियुक्त कोई नोटरी ।

(2) शपथपत्र ऐसे तथ्यों तक, जिन्हें अभिसाक्षी स्वयं अपनी जानकारी से साबित करने के लिए समर्थ है और ऐसे तथ्यों तक जिनके सत्य होने का विश्वास करने के लिए उसके पास उचित आधार है, सीमित होंगे और उसमें उनका कथन अलग-अलग होगा तथा विश्वास के आधारों की दशा में अभिसाक्षी ऐसे विश्वास के आधारों का स्पष्ट कथन करेगा ।

(3) न्यायालय शपथपत्र में किसी कलंकात्मक और विसंगत बात के

---

[1] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 22 द्वारा खंड (क) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

काटे जाने या संशोधित किए जाने का आदेश दे सकेगा ।

298. पूर्व दोषसिद्धि या दोषमुक्ति कैसे साबित की जाए – पूर्व दोषसिद्धि या दोषमुक्ति को, इस संहिता के अधीन किसी, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में, किसी अन्य ऐसे ढंग के अतिरिक्त, जो तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा उपबंधित है, –

(क) ऐसे उद्धरण द्वारा, जिसका उस न्यायालय के, जिसमें ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति हुई, अभिलेखों को अभिरक्षा में रखने वाले अधिकारी के हस्ताक्षर द्वारा प्रमाणित उस दंडादेश या आदेश की प्रतिलिपि होना है ; अथवा

(ख) दोषसिद्धि की दशा में, या तो ऐसे प्रमाणपत्र द्वारा, जो उस जेल के भारसाधक अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित है जिसमें दंड या उसका कोई भाग भोगा गया या सुपुर्दगी के उस वारंट को पेश करके, जिनके अधीन दंड भोगा गया था,

और इन दशाओं में से प्रत्येक में इस बात के साक्ष्य के साथ कि अभियुक्त व्यक्ति वही व्यक्ति है जो ऐसे दोषसिद्ध या दोषमुक्त किया गया, साबित किया जा सकेगा ।

299. अभियुक्त की अनुपस्थिति में साक्ष्य का अभिलेख – (1) यदि यह साबित कर दिया जाता है कि अभियुक्त व्यक्ति फरार हो गया है और उसके तुरन्त गिरफ्तार किए जाने की कोई सम्भावना नहीं है तो उस अपराध के लिए, जिसका परिवाद किया गया है, उस व्यक्ति का [1][विचारण करने के लिए या विचारण के लिए सुपुर्द करने के लिए सक्षम] न्यायालय अभियोजन की ओर से पेश किए गए साक्षियों की (यदि कोई हो), उसकी अनुपस्थिति में परीक्षा कर सकता है और उनका अभिसाक्ष्य अभिलिखित कर सकता है और ऐसा कोई अभिसाक्ष्य उस व्यक्ति के गिरफ्तार होने पर, उस अपराध की जांच या विचारण में, जिसका उस पर आरोप है, उसके विरुद्ध साक्ष्य में दिया जा सकता है यदि अभिसाक्षी मर गया है, या साक्ष्य देने के लिए असमर्थ है, या मिल नहीं सकता है या उसकी हाजिरी इतने विलम्ब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी कि मामले की परिस्थितियों में अनुचित होगी, नहीं कराई जा सकती है ।

(2) यदि यह प्रतीत होता है कि मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय कोई अपराध किसी अज्ञात व्यक्ति या किन्हीं अज्ञात व्यक्तियों द्वारा

---

[1] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 23 द्वारा अंतःस्थापित ।

किया गया है तो उच्च न्यायालय या सेशन न्यायाधीश निदेश दे सकता है कि कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जांच करे और किन्हीं साक्षियों की जो अपराध के बारे में साक्ष्य दे सकते हों, परीक्षा करे और ऐसे लिया गया कोई अभिसाक्ष्य, किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जिस पर अपराध का तत्पश्चात् अभियोग लगाया जाता है, साक्ष्य में दिया जा सकता है यदि अभिसाक्षी मर जाता है या साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो जाता है या भारत की सीमाओं से परे है ।

अध्याय 24
जांचों तथा विचारणों के बारे में साधारण उपबंध

300. एक बार दोषसिद्ध या दोषमुक्त किए गए व्यक्ति का उसी अपराध के लिए विचारण न किया जाना – (1) जिस व्यक्ति का किसी अपराध के लिए सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा एक बार विचारण किया जा चुका है और जो ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध या दोषमुक्त किया जा चुका है, वह, जब तक ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति प्रवृत्त रहती है तब तक न तो उसी अपराध के लिए विचारण का भागी होगा और न उन्हीं तथ्यों पर किसी ऐसे अन्य अपराध के लिए विचारण का भागी होगा जिसके लिए उसके विरुद्ध लगाए गए आरोप से भिन्न आरोप धारा 221 की उपधारा (1) के अधीन लगाया जा सकता था या जिसके लिए वह उसकी उपधारा (2) के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता था ।

(2) किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किए गए किसी व्यक्ति का विचारण, तत्पश्चात् राज्य सरकार की सम्मति से किसी ऐसे भिन्न अपराध के लिए किया जा सकता है जिसके लिए पूर्वगामी विचारण में उसके विरुद्ध धारा 220 की उपधारा (1) के अधीन पृथक् आरोप लगाया जा सकता था ।

(3) जो व्यक्ति किसी ऐसे कार्य से बनने वाले किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, जो ऐसे परिणाम पैदा करता है जो उस कार्य से मिलकर उस अपराध से, जिसके लिए वह दोषसिद्ध हुआ, भिन्न कोई अपराध बनाते हैं, उसका ऐसे अन्तिम वर्णित अपराध के लिए तत्पश्चात् विचारण किया जा सकता है, यदि उस समय जब वह दोषसिद्ध किया गया था वे परिणाम हुए नहीं थे या उनका होना न्यायालय को ज्ञात नहीं था ।

(4) जो व्यक्ति किन्हीं कार्यों से बनने वाले किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया गया है, उस पर ऐसी दोषमुक्ति या दोषसिद्धि

के होने पर भी, उन्हीं कार्यों से बनने वाले और उसके द्वारा किए गए किसी अन्य अपराध के लिए तत्पश्चात् आरोप लगाया जा सकता है और उसका विचारण किया जा सकता है, यदि वह न्यायालय, जिसके द्वारा पहले उसका विचारण किया गया था, उस अपराध के विचारण के लिए सक्षम नहीं था जिसके लिए बाद में उस पर आरोप लगाया जाता है ।

(5) धारा 258 के अधीन उन्मोचित किए गए व्यक्ति का उसी अपराध के लिए पुनः विचारण उस न्यायालय की, जिसके द्वारा वह उन्मोचित किया गया था, अन्य किसी ऐसे न्यायालय की, जिसके प्रथम वर्णित न्यायालय अधीनस्थ है, सम्मति के बिना नहीं किया जाएगा ।

(6) इस धारा की कोई बात साधारण खंड अधिनियम, 1897 (1897 का 10) की धारा 26 के या इस संहिता की धारा 188 के उपबंधों पर प्रभाव न डालेगी ।

स्पष्टीकरण – परिवाद का खारिज किया जाना या अभियुक्त का उन्मोचन इस धारा के प्रयोजन के लिए दोषमुक्ति नहीं है ।

दृष्टांत

(क) **क** का विचारण सेवक की हैसियत में चोरी करने के आरोप पर किया जाता है और वह दोषमुक्त कर दिया जाता है । जब तक दोषमुक्ति प्रवृत्त रहे, उस पर सेवक के रूप में चोरी के लिए या उन्हीं तथ्यों पर केवल चोरी के लिए या आपराधिक न्यासभंग के लिए बाद में आरोप नहीं लगाया जा सकता है ।

(ख) घोर उपहति कारित करने के लिए **क** का विचारण किया जाता है और वह दोषसिद्ध किया जाता है । क्षत व्यक्ति तत्पश्चात् मर जाता है । आपराधिक मानववध के लिए **क** का पुनः विचारण किया जा सकेगा ।

(ग) **ख** के आपराधिक मानववध के लिए **क** पर सेशन न्यायालय के समक्ष आरोप लगाया जाता है और वह दोषसिद्ध किया जाता है । **ख** की हत्या के लिए **क** का उन्हीं तथ्यों पर तत्पश्चात् विचारण नहीं किया जा सकेगा ।

(घ) **ख** को स्वेच्छा से उपहति कारित करने के लिए **क** पर प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा आरोप लगाया जाता है और वह दोषसिद्ध किया जाता है । **ख** को स्वेच्छा से घोर उपहति कारित करने के लिए

क का उन्हीं तथ्यों पर तत्पश्चात् विचारण नहीं किया जा सकेगा जब तक कि मामला इस धारा की उपधारा (3) के अन्दर न आए ।

(ङ) **ख** के शरीर से सम्पत्ति की चोरी करने के लिए **क** पर द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा आरोप लगाया जाता है और वह दोषसिद्ध किया जाता है । उन्हीं तथ्यों पर तत्पश्चात् **क** पर लूट का आरोप लगाया जा सकेगा और उसका विचारण किया जा सकेगा ।

(च) **घ** को लूटने के लिए **क, ख** और **ग** पर प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा आरोप लगाया जाता है और वे दोषसिद्ध किए जाते हैं । डकैती के लिए उन्हीं तथ्यों पर तत्पश्चात् **क, ख** और **ग** पर आरोप लगाया जा सकेगा और उनका विचारण किया जा सकेगा ।

301. लोक अभियोजकों द्वारा हाजिरी – (1) किसी मामले का भारसाधक लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक किसी न्यायालय में, जिसमें वह मामला जांच, विवरण या अपील के अधीन है, किसी लिखित प्राधिकार के बिना हाजिर हो सकता है और अभिवचन कर सकता है ।

(2) किसी ऐसे मामले में यदि कोई प्राइवेट व्यक्ति किसी न्यायालय में किसी व्यक्ति को अभियोजित करने के लिए किसी प्लीडर को अनुदेश देता है तो मामले का भारसाधक लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक अभियोजन का संचालन करेगा और ऐसे अनुदिष्ट प्लीडर उसमें लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक के निदेश के अधीन कार्य करेगा और न्यायालय की अनुज्ञा से उस मामले में साक्ष्य की समाप्ति पर लिखित रूप में तर्क पेश कर सकेगा ।

302. अभियोजन का संचालन करने की अनुज्ञा – (1) किसी मामले की जांच या विचारण करने वाला कोई मजिस्ट्रेट निरीक्षक की पंक्ति से नीचे के पुलिस अधिकारी से भिन्न किसी भी व्यक्ति द्वारा अभियोजन के संचालित किए जाने की अनुज्ञा दे सकता है ; किन्तु महाधिवक्ता या सरकारी अधिवक्ता या लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक से भिन्न कोई व्यक्ति ऐसी अनुज्ञा के बिना ऐसा करने का हकदार न होगा :

परन्तु यदि पुलिस के किसी अधिकारी ने उस अपराध के अन्वेषण में, जिसके बारे में अभियुक्त का अभियोजन किया जा रहा है, भाग लिया है तो अभियोजन का संचालन करने की उसे अनुज्ञा न दी जाएगी ।

(2) अभियोजन का संचालन करने वाला कोई व्यक्ति स्वयं या प्लीडर द्वारा ऐसा कर सकता है ।

303. जिस व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही संस्थित की गई है उसका प्रतिरक्षा कराने का अधिकार – जो व्यक्ति दंड न्यायालय के समक्ष अपराध के लिए अभियुक्त है या जिसके विरुद्ध इस संहिता के अधीन कार्यवाही संस्थित की गई है, उसका यह अधिकार होगा कि उसकी पसंद के प्लीडर द्वारा उसकी प्रतिरक्षा की जाए ।

304. कुछ मामलों में अभियुक्त को राज्य के व्यय पर विधिक सहायता – (1) जहां सेशन न्यायालय के समक्ष किसी विचारण में, अभियुक्त का प्रतिनिधित्व किसी प्लीडर द्वारा नहीं किया जाता है और जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के पास किसी प्लीडर को नियुक्त करने के लिए पर्याप्त साधन नहीं है, वहां न्यायालय उसकी प्रतिरक्षा के लिए राज्य के व्यय पर प्लीडर उपलब्ध करेगा ।

(2) राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से उच्च न्यायालय –

(क) उपधारा (1) के अधीन प्रतिरक्षा के लिए प्लीडरों के चयन के ढंग का,

(ख) ऐसे प्लीडरों को न्यायालयों द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं का,

(ग) ऐसे प्लीडरों को सरकार द्वारा संदेय फीसों का और साधारणतः उपधारा (1) के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए,

उपबंध करने वाले नियम बना सकता है ।

(3) राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा यह निदेश दे सकती है कि उस तारीख से, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाए, उपधारा (1) और (2) के उपबंध राज्य के अन्य न्यायालयों के समक्ष किसी वर्ग के विचारणों के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे सेशन न्यायालय के समक्ष विचारणों के संबंध में लागू होते हैं ।

305. प्रक्रिया, जब निगम या रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी अभियुक्त है – (1) इस धारा में "निगम" से कोई निगमित कम्पनी या अन्य निगमित निकाय अभिप्रेत है, और इसके अंतर्गत सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी भी है ।

(2) जहां कोई निगम किसी जांच या विचारण में अभियुक्त व्यक्ति या अभियुक्त व्यक्तियों में से एक है वहां वह ऐसी जांच या विचारण के प्रयोजनार्थ एक प्रतिनिधि नियुक्त कर सकता है और ऐसी नियुक्ति निगम की मुद्रा के अधीन करना आवश्यक नहीं होगा ।

(3) जहां निगम का कोई प्रतिनिधि हाजिर होता है, वहां इस संहिता की इस अपेक्षा का कि कोई बात अभियुक्त की हाजिरी में की जाएगी या अभियुक्त को पढ़कर सुनाई जाएगी या बताई जाएगी या समझाई जाएगी, इस अपेक्षा के रूप में अर्थ लगाया जाएगा कि वह बात प्रतिनिधि की हाजिरी में की जाएगी, प्रतिनिधि को पढ़कर सुनाई जाएगी या बताई जाएगी या समझाई जाएगी और किसी ऐसी अपेक्षा का कि अभियुक्त की परीक्षा की जाएगी, इस अपेक्षा के रूप में अर्थ लगाया जाएगा कि प्रतिनिधि की परीक्षा की जाएगी ।

(4) जहां निगम का कोई प्रतिनिधि हाजिर नहीं होता है, वहां कोई ऐसी अपेक्षा, जो उपधारा (3) में निर्दिष्ट है, लागू नहीं होगी ।

(5) जहां निगम के प्रबंध निदेशक द्वारा या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा (वह चाहे जिस नाम से पुकारा जाता हो) जो निगम के कार्यकलाप का प्रबंध करता है या प्रबंध करने वाले व्यक्तियों में से एक है, हस्ताक्षर किया गया तात्पर्यित इस भाव का लिखित कथन फाइल किया जाता है कि कथन में नामित व्यक्ति को इस धारा के प्रयोजनों के लिए निगम के प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त किया गया है, वहां न्यायालय, जब तक इसके प्रतिकूल साबित नहीं किया जाता है, यह उपधारणा करेगा कि ऐसा व्यक्ति इस प्रकार नियुक्त किया गया है ।

(6) यदि यह प्रश्न उठता है कि न्यायालय के समक्ष किसी जांच या विचारण में निगम के प्रतिनिधि के रूप में हाजिर होने वाला कोई व्यक्ति ऐसा प्रतिनिधि है या नहीं, तो उस प्रश्न का अवधारण न्यायालय द्वारा किया जाएगा ।

306. सह-अपराधी को क्षमा-दान – (1) किसी ऐसे अपराध से, जिसे यह धारा लागू होती है, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में संबद्ध या संसर्गित समझे जाने वाले किसी व्यक्ति का साक्ष्य अभिप्राप्त करने की दृष्टि से, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट अपराध के अन्वेषण या जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में, और अपराध की जांच या विचारण करने वाला प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में उस व्यक्ति को

इस शर्त पर क्षमा-दान कर सकता है कि वह अपराध के संबंध में और उसके किए जाने में चाहे कर्ता या दुष्प्रेरक के रूप में संबद्ध प्रत्येक अन्य व्यक्ति के संबंध में सब परिस्थितियों का, जिनकी उसे जानकारी हो, पूर्ण और सत्य प्रकटन कर दे ।

(2) यह धारा निम्नलिखित को लागू होती है :–

(क) अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा या दंड विधि संशोधन अधिनियम, 1952 (1952 का 46) के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीश के न्यायालय द्वारा विचारणीय कोई अपराध ;

(ख) ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो या अधिक कठोर दंड से दंडनीय कोई अपराध ।

(3) प्रत्येक मजिस्ट्रेट, जो उपधारा (1) के अधीन क्षमा-दान करता है, –

(क) ऐसा करने के अपने कारणों को अभिलिखित करेगा ;

(ख) यह अभिलिखित करेगा कि क्षमा-दान उस व्यक्ति द्वारा, जिसको कि वह किया गया था स्वीकार कर लिया गया था या नहीं,

और अभियुक्त द्वारा आवेदन किए जाने पर उसे ऐसे अभिलेख की प्रतिलिपि निःशुल्क देगा ।

(4) उपधारा (1) के अधीन क्षमा-दान स्वीकार करने वाले –

(क) प्रत्येक व्यक्ति की अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट के न्यायालय में और पश्चात्वर्ती विचारण में यदि कोई हो, साक्षी के रूप में परीक्षा की जाएगी ;

(ख) प्रत्येक व्यक्ति को, जब तक कि वह पहले से ही जमानत पर न हो, विचारण खत्म होने तक अभिरक्षा में निरुद्ध रखा जाएगा ।

(5) जहां किसी व्यक्ति ने उपधारा (1) के अधीन किया गया क्षमा-दान स्वीकार कर लिया है और उसकी उपधारा (4) के अधीन परीक्षा की जा चुकी है, वहां अपराध का संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट, मामले में कोई अतिरिक्त जांच किए बिना, –

(क) मामले को –

(i) यदि अपराध अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है या यदि संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट

है तो, उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा ;

(ii) यदि अपराध अनन्यतः दंड विधि संशोधन अधिनियम, 1952 (1952 का 46) के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीशों के न्यायालय द्वारा विचारणीय है तो उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा ;

(ख) किसी अन्य दशा में, मामला मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के हवाले करेगा जो उसका विचारण स्वयं करेगा ।

307. क्षमा-दान का निदेश देने की शक्ति – मामले की सुपुर्दगी के पश्चात् किसी समय किन्तु निर्णय दिए जाने के पूर्व वह न्यायालय जिसे मामला सुपुर्द किया जाता है किसी ऐसे अपराध से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सम्बद्ध या संसर्गित समझे जाने वाले किसी व्यक्ति का साक्ष्य विचारण में अभिप्राप्त करने की दृष्टि से उस व्यक्ति को उसी शर्त पर क्षमा-दान कर सकता है ।

308. क्षमा की शर्तों का पालन न करने वाले व्यक्ति का विचारण – (1) जहां ऐसे व्यक्ति के बारे में जिसने धारा 306 या धारा 307 के अधीन क्षमा-दान स्वीकार कर लिया है, लोक अभियोजक प्रमाणित करता है कि उसकी राय में ऐसे व्यक्ति ने या तो किसी अत्यावश्यक बात को जानबूझकर छिपाकर या मिथ्या साक्ष्य देकर उस शर्त का पालन नहीं किया है जिस पर क्षमा-दान किया गया था वहां ऐसे व्यक्ति का विचारण उस अपराध के लिए, जिसके बारे में ऐसे क्षमा-दान किया गया था या किसी अन्य अपराध के लिए, जिसका वह उस विषय के संबंध में दोषी प्रतीत होता है, और मिथ्या साक्ष्य देने के लिए भी अपराध के लिए भी विचारण किया जा सकता है :

परन्तु ऐसे व्यक्ति का विचारण अन्य अभियुक्तों में से किसी के साथ संयुक्ततः नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह और कि मिथ्या साक्ष्य देने के अपराध के लिए ऐसे व्यक्ति का विचारण उच्च न्यायालय की मंजूरी के बिना नहीं किया जाएगा और धारा 195 या धारा 340 की कोई बात उस अपराध को लागू न होगी ।

(2) क्षमा-दान स्वीकार करने वाले ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया और धारा 164 के अधीन किसी मजिस्ट्रेट द्वारा या धारा 306 की उपधारा (4) के अधीन किसी न्यायालय द्वारा अभिलिखित कोई कथन ऐसे विचारण में

उसके विरुद्ध साक्ष्य में दिया जा सकता है ।

(3) ऐसे विचारण में अभियुक्त यह अभिवचन करने का हकदार होगा कि उसने उन शर्तों का पालन कर दिया है जिन पर उसे क्षमा-दान दिया गया था, और तब यह साबित करना अभियोजन का काम होगा कि ऐसी शर्तों का पालन नहीं किया गया है ।

(4) ऐसे विचारण के समय न्यायालय –

(क) यदि वह सेशन न्यायालय है तो आरोप अभियुक्त को पढ़कर सुनाए जाने और समझाए जाने के पूर्व ;

(ख) यदि वह मजिस्ट्रेट का न्यायालय है तो अभियोजन के साक्षियों का साक्ष्य लिए जाने के पूर्व,

अभियुक्त से पूछेगा कि क्या वह यह अभिवचन करता है कि उसने उन शर्तों का पालन किया है जिन पर उसे क्षमा-दान दिया गया था ।

(5) यदि अभियुक्त ऐसा अभिवचन करता है तो न्यायालय उस अभिवाक् को अभिलिखित करेगा और विचारण के लिए अग्रसर होगा और वह मामले में निर्णय देने के पूर्व इस विषय में निष्कर्ष निकालेगा कि अभियुक्त ने क्षमा की शर्तों का पालन किया है या नहीं ; और यदि यह निष्कर्ष निकलता है कि उसने ऐसा पालन किया है तो वह इस संहिता में किसी बात के होते हुए भी, दोषमुक्ति का निर्णय देगा ।

309. कार्यवाही को मुल्तवी या स्थगित करने की शक्ति – [1][(1) प्रत्येक जांच या विचारण में कार्यवाहियां सभी हाजिर साक्षियों की परीक्षा हो जाने तक दिन-प्रतिदिन जारी रखी जाएंगी, जब तक कि ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, न्यायालय अगले दिन से परे स्थगित करना आवश्यक न समझे :

परंतु जब जांच या विचारण भारतीय दंड संहिता की धारा 376, धारा 376क, धारा 376ख, धारा 376ग या धारा 376घ के अधीन किसी अपराध से संबंधित है, तब जांच या विचारण, यथासंभव आरोप पत्र फाइल किए जाने की तारीख से दो मास की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा ।]

(2) यदि न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान करने या विचारण के

---

[1] 2013 के अधिनियम सं. 13 की धारा 21 द्वारा प्रतिस्थापित ।

प्रारंभ होने के पश्चात् यह आवश्यक या उचित समझता है कि किसी जांच या विचारण का प्रारंभ करना मुल्तवी कर दिया जाए या उसे स्थगित कर दिया जाए तो वह समय-समय पर ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसे निबन्धनों पर, जैसे वह ठीक समझे, उतने समय के लिए जितना वह उचित समझे उसे मुल्तवी या स्थगित कर सकता है और यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है तो उसे वारण्ट द्वारा प्रतिप्रेषित कर सकता है :

परन्तु कोई मजिस्ट्रेट किसी अभियुक्त को इस धारा के अधीन एक समय में पन्द्रह दिन से अधिक की अवधि के लिए अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित न करेगा :

परन्तु यह और कि जब साक्षी हाजिर हों तब उनकी परीक्षा किए बिना स्थगन या मुल्तवी करने की मंजूरी विशेष कारणों के बिना, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, नहीं दी जाएगी :

[1][परन्तु यह भी कि कोई स्थगन केवल इस प्रयोजन के लिए नहीं मंजूर किया जाएगा कि वह अभियुक्त व्यक्ति को उस पर अधिरोपित किए जाने के लिए प्रस्थापित दंडादेश के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने में समर्थ बनाए ।]

[2][परंतु यह भी कि –

(क) कोई भी स्थगन किसी पक्षकार के अनुरोध पर तभी मंजूर किया जाएगा, जब परिस्थितियां उस पक्षकार के नियंत्रण से परे हों ;

(ख) यह तथ्य कि पक्षकार का प्लीडर किसी अन्य न्यायालय में व्यस्त है, स्थगन के लिए आधार नहीं होगा ;

(ग) जहां साक्षी न्यायालय में हाजिर है किंतु पक्षकार या उसका प्लीडर हाजिर नहीं है या पक्षकार या उसका प्लीडर न्यायालय में हाजिर तो है, किंतु साक्षी की परीक्षा या प्रतिपरीक्षा करने के लिए तैयार नहीं है वहां यदि न्यायालय ठीक समझता है तो वह साक्षी का कथन अभिलिखित कर सकेगा और ऐसे आदेश पारित कर सकेगा, जो, यथास्थिति, साक्षी की मुख्य परीक्षा या प्रतिपरीक्षा से छूट देने के लिए ठीक समझे ।]

स्पष्टीकरण 1 – यदि यह संदेह करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्राप्त

---

[1] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 24 द्वारा अन्तःस्थापित ।

[2] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 21 द्वारा अन्तःस्थापित ।

कर लिया गया है कि हो सकता है कि अभियुक्त ने अपराध किया है और यह संभाव्य प्रतीत होता है कि प्रतिप्रेषण करने पर अतिरिक्त साक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है तो यह प्रतिप्रेषण के लिए एक उचित कारण होगा ।

स्पष्टीकरण 2 – जिन निबंधनों पर कोई स्थगन या मुल्तवी करना मंजूर किया जा सकता है, उनके अन्तर्गत समुचित मामलों में अभियोजन या अभियुक्त द्वारा खर्चों का दिया जाना भी है ।

310. स्थानीय निरीक्षण – (1) कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के किसी प्रक्रम में, पक्षकारों को सम्यक् सूचना देने के पश्चात् किसी स्थान में, जिसमें अपराध का किया जाना अभिकथित है, या किसी अन्य स्थान में जा सकता है और उसका निरीक्षण कर सकता है, जिसके बारे में उसकी राय है कि उसका अवलोकन ऐसी जांच या विचारण में दिए गए साक्ष्य का उचित विवेचन करने के प्रयोजन से आवश्यक है और ऐसे निरीक्षण में देखे गए किन्हीं सुसंगत तथ्यों का ज्ञापन, अनावश्यक विलम्ब के बिना, लेखबद्ध करेगा ।

(2) ऐसा ज्ञापन मामले के अभिलेख का भाग होगा और यदि अभियोजक, परिवादी या अभियुक्त या मामले का अन्य कोई पक्षकार ऐसा चाहे तो उसे ज्ञापन की प्रतिलिपि निःशुल्क दी जाएगी ।

311. आवश्यक साक्षी को समन करने या उपस्थित व्यक्ति की परीक्षा करने की शक्ति – कोई न्यायालय इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के किसी प्रक्रम में किसी व्यक्ति को साक्षी के तौर पर समन कर सकता है या किसी ऐसे व्यक्ति की, जो हाजिर हो, यद्यपि वह साक्षी के रूप में समन न किया गया हो, परीक्षा कर सकता है, किसी व्यक्ति को, जिसकी पहले परीक्षा की जा चुकी है पुनः बुला सकता है और उसकी पुनः परीक्षा कर सकता है ; और यदि न्यायालय को मामले के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए किसी ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य आवश्यक प्रतीत होता है तो वह ऐसे व्यक्ति को समन करेगा और उसकी परीक्षा करेगा या उसे पुनः बुलाएगा और उसकी पुनः परीक्षा करेगा ।

[1][**311क. नमूना हस्ताक्षर या हस्तलेख देने के लिए किसी व्यक्ति को आदेश देने की मजिस्ट्रेट की शक्ति** – यदि प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट का यह

---

[1] 2005 के अधिनियम सं. 25 की धारा 27 द्वारा अंतःस्थापित ।

समाधान हो जाता है कि इस संहिता के अधीन किसी अन्वेषण या कार्यवाही के प्रयोजनों के लिए, किसी व्यक्ति को, जिसके अन्तर्गत अभियुक्त व्यक्ति भी है, नमूना हस्ताक्षर या हस्तलेख देने के लिए निर्देश देना समीचीन है, तो वह उस आशय का आदेश कर सकेगा और उस दशा में, वह व्यक्ति, जिससे आदेश संबंधित है, ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट समय और स्थान पर पेश किया जाएगा या वहां उपस्थित होगा और अपने नमूना हस्ताक्षर या हस्तलेख देगा :

परन्तु इस धारा के अधीन कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक उस व्यक्ति को ऐसे अन्वेषण या कार्यवाही के संबंध में किसी समय गिरफ्तार न किया गया हो ।]

312. परिवादियों और साक्षियों के व्यय – राज्य सरकार द्वारा बनाए गए किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुए, यदि कोई दंड न्यायालय ठीक समझता है तो वह ऐसे न्यायालय के समक्ष इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के प्रयोजन से हाजिर होने वाले किसी परिवादी या साक्षी के उचित व्ययों के राज्य सरकार द्वारा दिए जाने के लिए आदेश दे सकता है ।

313. अभियुक्त की परीक्षा करने की शक्ति – (1) प्रत्येक जांच या विचारण में, इस प्रयोजन से कि अभियुक्त अपने विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली किन्हीं परिस्थितियों का स्वयं स्पष्टीकरण कर सके, न्यायालय –

(क) किसी प्रक्रम में, अभियुक्त को पहले से चेतावनी दिए बिना, उससे ऐसे प्रश्न कर सकता है जो न्यायालय आवश्यक समझे ;

(ख) अभियोजन के साक्षियों की परीक्षा किए जाने के पश्चात् और अभियुक्त से अपनी प्रतिरक्षा करने की अपेक्षा किए जाने के पूर्व उस मामले के बारे में उससे साधारणतया प्रश्न करेगा :

परन्तु किसी समन-मामले में, जहां न्यायालय ने अभियुक्त को वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्ति दे दी है, वहां वह खंड (ख) के अधीन उसकी परीक्षा से भी अभिमुक्ति दे सकता है ।

(2) जब अभियुक्त की उपधारा (1) के अधीन परीक्षा की जाती है तब उसे कोई शपथ न दिलाई जाएगी ।

(3) अभियुक्त ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने से इनकार करने से या उसके मिथ्या उत्तर देने से दंडनीय न हो जाएगा ।

(4) अभियुक्त द्वारा दिए गए उत्तरों पर उस जांच या विचारण में विचार किया जा सकता है और किसी अन्य ऐसे अपराध की, जिसका उसके द्वारा किया जाना दर्शाने की उन उत्तरों की प्रवृत्ति हो, किसी अन्य जांच या विचारण में ऐसे उत्तरों को उसके पक्ष में या उसके विरुद्ध साक्ष्य के तौर पर रखा जा सकता है ।

[1][(5) न्यायालय ऐसे सुसंगत प्रश्न तैयार करने में, जो अभियुक्त से पूछे जाने हैं, अभियोजक और प्रतिरक्षा काउंसेल की सहायता ले सकेगा और न्यायालय इस धारा के पर्याप्त अनुपालन के रूप में अभियुक्त द्वारा लिखित कथन फाइल किए जाने की अनुज्ञा दे सकेगा ।]

314. मौखिक बहस और बहस का ज्ञापन – (1) कार्यवाही का कोई पक्षकार, अपने साक्ष्य की समाप्ति के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र संक्षिप्त मौखिक बहस कर सकता है और अपनी मौखिक बहस, यदि कोई हो, पूरी करने के पूर्व, न्यायालय को एक ज्ञापन दे सकता है जिसमें उसके पक्ष के समर्थन में तर्क संक्षेप में और सुभिन्न शीर्षकों में दिए जाएंगे, और ऐसा प्रत्येक ज्ञापन अभिलेख का भाग होगा ।

(2) ऐसे प्रत्येक ज्ञापन की एक प्रतिलिपि उसी समय विरोधी पक्षकार को दी जाएगी ।

(3) कार्यवाही का कोई स्थगन लिखित बहस फाइल करने के प्रयोजन के लिए तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक न्यायालय ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसा स्थगन मंजूर करना आवश्यक न समझे ।

(4) यदि न्यायालय की यह राय है कि मौखिक बहस संक्षिप्त या सुसंगत नहीं है तो वह ऐसी बहसों को विनियमित कर सकता है ।

315. अभियुक्त व्यक्ति का सक्षम साक्षी होना – (1) कोई व्यक्ति, जो किसी अपराध के लिए किसी दंड न्यायालय के समक्ष अभियुक्त है, प्रतिरक्षा के लिए सक्षम साक्षी होगा और अपने विरुद्ध या उसी विचारण में उसके साथ आरोपित किसी व्यक्ति के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को नासाबित करने के लिए शपथ पर साक्ष्य दे सकता है :

परन्तु –

(क) वह स्वयं अपनी लिखित प्रार्थना के बिना साक्षी के रूप में न बुलाया जाएगा,

---

[1] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 22 द्वारा अंतःस्थापित ।

(ख) उसका स्वयं साक्ष्य न देना पक्षकारों में से किसी के द्वारा या न्यायालय द्वारा किसी टीका-टिप्पणी का विषय न बनाया जाएगा और न उसे उसके, या उसी विचारण में उसके साथ आरोपित किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई उपधारणा ही की जाएगी ।

(2) कोई व्यक्ति जिसके विरुद्ध किसी दंड न्यायालय में धारा 98 या धारा 107 या धारा 108 या धारा 109 या धारा 110 के अधीन या अध्याय 9 के अधीन या अध्याय 10 के भाग ख, भाग ग या भाग घ के अधीन कार्यवाही संस्थित की जाती, ऐसी कार्यवाही में अपने आपको साक्षी के रूप में पेश कर सकता है :

परन्तु धारा 108, धारा 109 या धारा 110 के अधीन कार्यवाही में ऐसे व्यक्ति द्वारा साक्ष्य न देना पक्षकारों में से किसी के द्वारा या न्यायालय के द्वारा किसी टीका-टिप्पणी का विषय नहीं बनाया जाएगा और न उसे उसके या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध जिसके विरुद्ध उसी जांच में ऐसे व्यक्ति के साथ कार्यवाही की गई है, कोई उपधारणा ही की जाएगी ।

316. प्रकटन उत्प्रेरित करने के लिए किसी असर का काम में न लाया जाना – धारा 306 और 307 में जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, किसी वचन या धमकी द्वारा या अन्यथा कोई असर अभियुक्त व्यक्ति पर इस उद्देश्य से नहीं डाला जाएगा कि उसे अपनी जानकारी की किसी बात को प्रकट करने या न करने के लिए उत्प्रेरित किया जाए ।

317. कुछ मामलों में अभियुक्त की अनुपस्थिति में जांच और विचारण किए जाने के लिए उपबंध – (1) इस संहिता के अधीन जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में यदि न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट का उन कारणों से, जो अभिलिखित किए जाएंगे, समाधान हो जाता है कि न्यायालय के समक्ष अभियुक्त की वैयक्तिक हाजिरी न्याय के हित में आवश्यक नहीं है या अभियुक्त न्यायालय की कार्यवाही में बार-बार विघ्न डालता है तो, ऐसे अभियुक्त का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किए जाने की दशा में, वह न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट उसकी हाजिरी से उसे अभिमुक्ति दे सकता है और उसकी अनुपस्थिति में ऐसी जांच या विचारण करने के लिए अग्रसर हो सकता है और कार्यवाही के किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम में ऐसे अभियुक्त को वैयक्तिक हाजिरी का निदेश दे सकता है ।

(2) यदि ऐसे किसी मामले में अभियुक्त का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा नहीं किया जा रहा है अथवा यदि न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट का यह विचार है

कि अभियुक्त की वैयक्तिक हाजिरी आवश्यक है तो, यदि वह ठीक समझे तो, उन कारणों से, जो उसके द्वारा लेखबद्ध किए जाएंगे, वह या तो ऐसी जांच या विचारण स्थगित कर सकता है या आदेश दे सकता है कि ऐसे अभियुक्त का मामला अलग से लिया जाए या विचारित किया जाए ।

318. प्रक्रिया जहां अभियुक्त कार्यवाही नहीं समझता है – यदि अभियुक्त विकृत-चित्त न होने पर भी ऐसा है कि उसे कार्यवाही समझाई नहीं जा सकती तो न्यायालय जांच या विचारण में अग्रसर हो सकता है ; और उच्च न्यायालय से भिन्न न्यायालय की दशा में, यदि ऐसी कार्यवाही का परिणाम दोषसिद्धि है, तो कार्यवाही को मामले की परिस्थितियों की रिपोर्ट के साथ उच्च न्यायालय भेज दिया जाएगा और उच्च न्यायालय उस पर ऐसा आदेश देगा जैसा वह ठीक समझे ।

319. अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति – (1) जहां किसी अपराध की जांच या विचारण के दौरान साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि किसी व्यक्ति ने, जो अभियुक्त नहीं है, कोई ऐसा अपराध किया है जिसके लिए ऐसे व्यक्ति का अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है, वहां न्यायालय उस व्यक्ति के विरुद्ध उस अपराध के लिए जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, कार्यवाही कर सकता है ।

(2) जहां ऐसा व्यक्ति न्यायालय में हाजिर नहीं है वहां पूर्वोक्त प्रयोजन के लिए उसे मामले की परिस्थितियों की अपेक्षानुसार, गिरफ्तार या समन किया जा सकता है ।

(3) कोई व्यक्ति जो गिरफ्तार या समन न किए जाने पर भी न्यायालय में हाजिर है, ऐसे न्यायालय द्वारा उस अपराध के लिए, जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, जांच या विचारण के प्रयोजन के लिए निरुद्ध किया जा सकता है ।

(4) जहां न्यायालय किसी व्यक्ति के विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन कार्यवाही करता है, वहां –

(क) उस व्यक्ति के बारे में कार्यवाही फिर से प्रारंभ की जाएगी और साक्षियों को फिर से सुना जाएगा ;

(ख) खंड (क) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, मामले में ऐसी कार्यवाही की जा सकती है, मानो वह व्यक्ति उस समय अभियुक्त व्यक्ति था जब न्यायालय ने उस अपराध का संज्ञान किया था जिस

पर जांच या विचारण प्रारंभ किया गया था ।

320. अपराधों का शमन – (1) नीचे दी गई सारणी के प्रथम दो स्तम्भों में विनिर्दिष्ट भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धाराओं के अधीन दंडनीय अपराधों का शमन उस सारणी के तृतीय स्तम्भ में उल्लिखित व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है :–

[1][सारणी

अपराध	भारतीय दंड संहिता की धारा जो लागू होती है	वह व्यक्ति जिसके द्वारा अपराध का शमन किया जा सकता है
1	2	3
किसी व्यक्ति की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने के विमर्शित आशय से शब्द उच्चारित करना, आदि ।	298	वह व्यक्ति जिसकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचना आशयित है ।
स्वेच्छया उपहति कारित करना ।	323	वह व्यक्ति जिसे उपहति कारित की गई है ।
प्रकोपन पर स्वेच्छया उपहति कारित करना ।	334	यथोक्त ।
गंभीर और अचानक प्रकोपन पर स्वेच्छया घोर उपहति कारित करना ।	335	वह व्यक्ति जिसे उपहति कारित की गई है ।
किसी व्यक्ति का सदोष अवरोध या परिरोध ।	341, 342	वह व्यक्ति जो अवरुद्ध या परिरुद्ध किया गया है ।
किसी व्यक्ति का तीन या अधिक दिनों के लिए सदोष परिरोध ।	343	परिरुद्ध व्यक्ति ।

[1] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 23 द्वारा सारणी के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

किसी व्यक्ति का दस या अधिक दिनों के लिए सदोष परिरोध ।	344	यथोक्त ।
किसी व्यक्ति का गुप्त स्थान में सदोष परिरोध ।	346	यथोक्त ।
हमला या आपराधिक बल का प्रयोग ।	352, 355, 358	वह व्यक्ति जिस पर हमला या आपराधिक बल का प्रयोग किया गया है ।
चोरी ।	379	चुराई हुई संपत्ति का स्वामी ।
संपत्ति का बेईमानी से दुर्विनियोग ।	403	दुर्विनियोजित संपत्ति का स्वामी ।
वाहक, घाटवाल, आदि द्वारा आपराधिक न्यासभंग ।	407	उस संपत्ति का स्वामी, जिसके संबंध में न्यासभंग किया गया है ।
चुराई हुई संपत्ति को, उसे चुराई हुई जानते हुए बेईमानी से प्राप्त करना ।	411	चुराई हुई संपत्ति का स्वामी ।
चुराई हुई संपत्ति को, यह जानते हुए कि वह चुराई हुई है, छिपाने में या व्ययनित करने में सहायता करना ।	414	यथोक्त ।
छल ।	417	वह व्यक्ति जिससे छल किया गया है ।
प्रतिरूपण द्वारा छल ।	419	यथोक्त ।
लेनदारों में वितरण निवारित करने के लिए संपत्ति आदि का कपटपूर्वक अपसारण या छिपाना ।	421	उससे प्रभावित लेनदार ।
अपराधी का अपने को शोध्य ऋण या मांग का लेनदारों के	422	उससे प्रभावित लेनदार ।

लिए उपलब्ध किया जाना कपटपूर्वक निवारित करना ।		
अंतरण के ऐसे विलेख का, जिसमें प्रतिफल के संबंध में मिथ्या कथन अंतर्विष्ट है, कपटपूर्वक निष्पादन ।	423	उससे प्रभावित व्यक्ति ।
संपत्ति का कपटपूर्वक अपसारण या छिपाया जाना ।	424	यथोक्त ।
रिष्टि, जब कारित हानि या नुकसान केवल प्राइवेट व्यक्ति को हुई हानि या नुकसान है ।	426, 427	वह व्यक्ति, जिसे हानि या नुकसान हुआ है ।
जीवजन्तु का वध करने या उसे विकलांग करने के द्वारा रिष्टि ।	428	जीवजन्तु का स्वामी ।
ढोर आदि का वध करने या उसे विकलांग करने के द्वारा रिष्टि ।	429	ढोर या जीवजन्तु का स्वामी ।
सिंचन संकर्म को क्षति करने या जल को दोषपूर्वक मोड़ने के द्वारा रिष्टि, जब उससे कारित हानि या नुकसान केवल प्राइवेट व्यक्ति को हुई हानि या नुकसान है ।	430	वह व्यक्ति, जिसे हानि या नुकसान हुआ है ।
आपराधिक अतिचार ।	447	वह व्यक्ति जिसके कब्जे में ऐसी संपत्ति है जिस पर अतिचार किया गया है ।
गृह-अतिचार ।	448	यथोक्त ।
कारावास से दंडनीय अपराध	451	वह व्यक्ति जिसका उस गृह

को (चोरी से भिन्न) करने के लिए गृह-अतिचार ।		पर कब्जा है जिस पर अतिचार किया गया है ।
मिथ्या व्यापार या संपत्ति चिह्न का उपयोग ।	482	वह व्यक्ति, जिसे ऐसे उपयोग से हानि या क्षति कारित हुई है ।
अन्य व्यक्ति द्वारा उपयोग में लाए गए व्यापार या संपत्ति चिह्न का कूटकरण ।	483	यथोक्त ।
कूटकृत संपत्ति चिह्न से चिह्नित माल को जानते हुए विक्रय या अभिदर्शित करना या विक्रय के लिए या विनिर्माण के प्रयोजन के लिए कब्जे में रखना ।	486	यथोक्त ।
सेवा संविदा का आपराधिक भंग ।	491	वह व्यक्ति जिसके साथ अपराधी ने संविदा की है ।
जारकर्म ।	497	स्त्री का पति ।
विवाहित स्त्री को आपराधिक आशय से फुसलाकर ले जाना या निरुद्ध रखना ।	498	स्त्री का पति और स्त्री ।
मानहानि, सिवाय ऐसे मामलों के जो उपधारा (2) के नीचे की सारणी के स्तंभ 1 में भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 500 के सामने विनिर्दिष्ट किए गए हैं ।	500	वह व्यक्ति जिसकी मानहानि की गई है ।
मानहानिकारक जानी हुई बात को मुद्रित या उत्कीर्ण करना ।	501	यथोक्त ।

मानहानिकारक विषय रखने वाले मुद्रित या उत्कीर्ण पदार्थ का यह जानते हुए बेचना कि उसमें ऐसा विषय अंतर्विष्ट है ।	502	यथोक्त ।
लोक-शांति भंग कराने को प्रकोपित करने के आशय से अपमान ।	504	अपमानित व्यक्ति ।
अपराधिक अभित्रास ।	506	अभित्रस्त व्यक्ति ।
किसी व्यक्ति को यह विश्वास करने के लिए उत्प्रेरित करके कि वह दैवी अप्रसाद का भाजन होगा, कराया गया कार्य ।	508	वह व्यक्ति जिसे उत्प्रेरित किया गया ।]

(2) नीचे दी गई सारणी के प्रथम दो स्तम्भों में विनिर्दिष्ट भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धाराओं के अधीन दंडनीय अपराधों का शमन उस न्यायालय की अनुज्ञा से, जिनके समक्ष ऐसे अपराध के लिए कोई अभियोजन लंबित है, उस सारणी के तृतीय स्तंभ में लिखित व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है ।

[1][सारणी

अपराध	भारतीय दंड संहिता की धारा जो लागू होती है	वह व्यक्ति जिसके द्वारा अपराध का शमन किया जा सकता है
1	2	3
गर्भपात कारित करना ।	312	वह स्त्री जिसका गर्भपात किया गया है ।

[1] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 23 द्वारा सारणी के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

स्वेच्छया घोर उपहति कारित करना ।	325	वह व्यक्ति जिसे उपहति कारित की गई है ।
ऐसे उतावलेपन और उपेक्षा से कोई कार्य करने के द्वारा उपहति कारित करना जिससे मानव जीवन या दूसरों का वैयक्तिक क्षेम संकटापन्न हो जाए ।	337	यथोक्त ।
ऐसे उतावलेपन और उपेक्षा से कोई कार्य करने के द्वारा घोर उपहति कारित करना जिससे मानव जीवन या दूसरों का वैयक्तिक क्षेम संकटापन्न हो जाए ।	338	यथोक्त ।
किसी व्यक्ति का सदोष परिरोध करने के प्रयत्न में हमला या आपराधिक बल का प्रयोग ।	357	वह व्यक्ति जिस पर हमला किया गया या जिस पर बल का प्रयोग किया गया था ।
लिपिक या सेवक द्वारा स्वामी के कब्जे की संपत्ति की चोरी ।	381	चुराई हुई संपत्ति का स्वामी ।
आपराधिक न्यासभंग ।	406	उस संपत्ति का स्वामी, जिसके संबंध में न्यास भंग किया गया है ।
लिपिक या सेवक द्वारा आपराधिक न्यासभंग ।	408	उस संपत्ति का स्वामी, जिसके संबंध में न्यास भंग किया गया है ।
ऐसे व्यक्ति के साथ छल करना जिसका हित संरक्षित रखने के लिए अपराधी या तो विधि द्वारा या वैध संविदा द्वारा आबद्ध था ।	418	वह व्यक्ति, जिससे छल किया गया है ।

छल करना या संपत्ति परिदत्त करने अथवा मूल्यवान प्रतिभूति की रचना करने या उसे परिवर्तित या नष्ट करने के लिए बेईमानी से उत्प्रेरित करना ।	420	वह व्यक्ति, जिससे छल किया गया है ।
पति या पत्नी के जीवनकाल में पुनःविवाह करना ।	494	ऐसे विवाह करने वाले व्यक्ति का पति या पत्नी ।
राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल या किसी संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक, या किसी मंत्री के विरुद्ध, उसके लोक कृत्यों के संबंध में मानहानि, जब मामला लोक अभियोजक द्वारा किए गए परिवाद पर संस्थित है ।	500	वह व्यक्ति जिसकी मानहानि की गई है ।
स्त्री की लज्जा का अनादर करने के आशय से शब्द कहना या ध्वनियां करना या अंगविक्षेप करना या कोई वस्तु प्रदर्शित करना या किसी स्त्री की एकांतता का अतिक्रमण करना ।	509	वह स्त्री जिसका अनादर करना आशयित था या जिसकी एकांतता का अतिक्रमण किया गया था ।]

[1][(3) जब कोई अपराध इस धारा के अधीन शमनीय है तब ऐसे अपराध के दुष्प्रेरण का, अथवा ऐसे अपराध को करने के प्रयत्न का (जब ऐसा प्रयत्न स्वयं अपराध हो) अथवा जहां अभियुक्त भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 34 या धारा 149 के अधीन दायी हो, शमन उसी प्रकार से किया जा सकता है ।]

---

[1] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 23 द्वारा उपधारा (3) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(4) (क) जब वह व्यक्ति, जो इस धारा के अधीन अपराध का शमन करने के लिए अन्यथा सक्षम होता, अठारह वर्ष से कम आयु का है या जड़ या पागल है तब कोई व्यक्ति जो उसकी ओर से संविदा करने के लिए सक्षम हो, न्यायालय की अनुज्ञा से, ऐसे अपराध का शमन कर सकता है ।

(ख) जब वह व्यक्ति, जो इस धारा के अधीन अपराध का शमन करने के लिए अन्यथा सक्षम होता, मर जाता है तब ऐसे व्यक्ति का, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में यथापरिभाषित, विधिक प्रतिनिधि, न्यायालय की सम्मति से, ऐसे अपराध का शमन कर सकता है ।

(5) जब अभियुक्त विचारणार्थ सुपुर्द कर दिया जाता है या जब वह दोषसिद्ध कर दिया जाता है और अपील लंबित है, तब अपराध का शमन, यथास्थिति, उस न्यायालय की इजाजत के बिना अनुज्ञात न किया जाएगा जिसे वह सुपुर्द किया गया है, या जिसके समक्ष अपील सुनी जानी है ।

(6) धारा 401 के अधीन पुनरीक्षण की अपनी शक्तियों के प्रयोग में कार्य करते हुए उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किसी व्यक्ति को किसी ऐसे अपराध का शमन करने की अनुज्ञा दे सकता है जिसका शमन करने के लिए वह व्यक्ति इस धारा के अधीन सक्षम है ।

(7) यदि अभियुक्त पूर्व दोषसिद्धि के कारण किसी अपराध के लिए या तो वर्धित दंड से या भिन्न किस्म के दंड से दंडनीय है तो ऐसे अपराध का शमन न किया जाएगा ।

(8) अपराध के इस धारा के अधीन शमन का प्रभाव उस अभियुक्त की दोषमुक्ति होगा जिससे अपराध का शमन किया गया है ।

(9) अपराध का शमन इस धारा के उपबंधों के अनुसार ही किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

321. अभियोजन वापस लेना – किसी मामले का भारसाधक कोई लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक निर्णय सुनाए जाने के पूर्व किसी समय किसी व्यक्ति के अभियोजन को या तो साधारणतः या उन अपराधों में से किसी एक या अधिक के बारे में, जिनके लिए उस व्यक्ति का विचारण किया जा रहा है, न्यायालय की सम्मति से वापस ले सकता है और ऐसे वापस लिए जाने पर –

(क) यदि यह आरोप विरचित किए जाने के पहले किया जाता है तो अभियुक्त ऐसे अपराध या अपराधों के बारे में उन्मोचित कर

दिया जाएगा ;

(ख) यदि वह आरोप विरचित किए जाने के पश्चात् या जब इस संहिता द्वारा कोई आरोप अपेक्षित नहीं है, तब किया जाता है तो वह ऐसे अपराध या अपराधों के बारे में दोषमुक्त कर दिया जाएगा :

परन्तु जहां –

(i) ऐसा अपराध किसी ऐसी बात से संबंधित किसी विधि के विरुद्ध है जिस पर संघ को कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है, अथवा

(ii) ऐसे अपराध का अन्वेषण दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम, 1946 (1946 का 25) के अधीन दिल्ली विशेष पुलिस द्वारा किया गया है, अथवा

(iii) ऐसे अपराध में केन्द्रीय सरकार को किसी सम्पत्ति का दुर्विनियोग, नाश या नुकसान अन्तर्ग्रस्त है, अथवा

(iv) ऐसा अपराध केन्द्रीय सरकार की सेवा में किसी व्यक्ति द्वारा किया गया है, जब वह अपने पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा है या कार्य करना तात्पर्यित है,

और मामले का भारसाधक अभियोजक केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त नहीं किया गया है, तो वह जब तक केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे ऐसा करने की अनुज्ञा नहीं दी जाती है, अभियोजन को वापस लेने के लिए न्यायालय से उसकी सम्मति के लिए निवेदन नहीं करेगा तथा न्यायालय अपनी सम्मति देने के पूर्व, अभियोजक को यह निदेश देगा कि वह अभियोजन को वापस लेने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा दी गई अनुज्ञा उसके समक्ष पेश करे ।

322. जिन मामलों का निपटारा मजिस्ट्रेट नहीं कर सकता, उनमें प्रक्रिया – (1) यदि किसी जिले में किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष अपराध की किसी जांच या विचारण के दौरान उसे साक्ष्य ऐसा प्रतीत होता है कि उसके आधार पर यह उपधारणा की जा सकती है कि –

(क) उसे मामले का विचारण करने या विचारणार्थ सुपुर्द करने की अधिकारिता नहीं है, अथवा

(ख) मामला ऐसा है जो जिले के किसी अन्य मजिस्ट्रेट द्वारा विचारित या विचारणार्थ सुपुर्द किया जाना चाहिए, अथवा

(ग) मामले का विचारण मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाना चाहिए,

तो वह कार्यवाही को रोक देगा और मामले की ऐसी संक्षिप्त रिपोर्ट सहित, जिसमें मामले का स्वरूप स्पष्ट किया गया है, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को या अधिकारिता वाले अन्य ऐसे मजिस्ट्रेट को, जिसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट निर्दिष्ट करे, भेज देगा ।

(2) यदि वह मजिस्ट्रेट, जिसे मामला भेजा गया है, ऐसा करने के लिए सशक्त है, तो वह उस मामले का विचारण स्वयं कर सकता है या उसे अपने अधीनस्थ अधिकारिता वाले मजिस्ट्रेट को निर्देशित कर सकता है या अभियुक्त को विचारणार्थ सुपुर्द कर सकता है ।

323. प्रक्रिया जब जांच या विचारण के प्रारंभ के पश्चात् मजिस्ट्रेट को पता चलता है कि मामला सुपुर्द किया जाना चाहिए – यदि किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष अपराध की किसी जांच या विचारण में निर्णय पर हस्ताक्षर करने के पूर्व कार्यवाही के किसी प्रक्रम में उसे यह प्रतीत होता है कि मामला ऐसा है, जिसका विचारण सेशन न्यायालय द्वारा किया जाना चाहिए, तो वह उसे इसमें इसके पूर्व अंतर्विष्ट उपबंधों के अधीन उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा [1][और तब अध्याय 18 के उपबंध ऐसी सुपुर्दगी को लागू होंगे] ।

324. सिक्के, स्टाम्प विधि या सम्पत्ति के विरुद्ध अपराधों के लिए तत्पूर्व दोषसिद्ध व्यक्तियों का विचारण – (1) जहां कोई व्यक्ति भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अध्याय 12 या अध्याय 17 के अधीन तीन वर्ष या अधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किए जा चुकने पर उन अध्यायों में से किसी के अधीन तीन वर्ष या अधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय किसी अपराध के लिए पुनः अभियुक्त है, और उस मजिस्ट्रेट का, जिसके समक्ष मामला लंबित है, समाधान हो जाता है कि यह उपधारणा करने के लिए आधार है कि ऐसे व्यक्ति ने अपराध किया है तो वह उस दशा के सिवाय विचारण के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजा जाएगा या सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया जाएगा, जब मजिस्ट्रेट मामले का विचारण करने के लिए सक्षम है

---

[1] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 26 द्वारा अन्तःस्थापित ।

और उसकी यह राय है कि यदि अभियुक्त दोषसिद्ध किया गया तो वह स्वयं उसे पर्याप्त दंड का आदेश दे सकता है ।

(2) जब उपधारा (1) के अधीन कोई व्यक्ति विचारण के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजा जाता है या सेशन न्यायालय को सुपुर्द किया जाता है तब कोई अन्य व्यक्ति, जो उसी जांच या विचारण में उसके साथ संयुक्ततः अभियुक्त है, वैसे ही भेजा जाएगा या सुपुर्द किया जाएगा जब तक ऐसे अन्य व्यक्ति को मजिस्ट्रेट, यथास्थिति, धारा 239 या धारा 245 के अधीन उन्मोचित न कर दे ।

325. प्रक्रिया जब मजिस्ट्रेट पर्याप्त कठोर दंड का आदेश नहीं दे सकता – (1) जब कभी अभियोजन और अभियुक्त का साक्ष्य सुनने के पश्चात् मजिस्ट्रेट की यह राय है कि अभियुक्त दोषी है और उसे उस प्रकार के दंड से भिन्न प्रकार का दंड या उस दंड से अधिक कठोर दंड, जो वह मजिस्ट्रेट देने के लिए सशक्त है, दिया जाना चाहिए अथवा द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट होते हुए उसकी यह राय है कि अभियुक्त से धारा 106 के अधीन बंधपत्र निष्पादित करने की अपेक्षा की जानी चाहिए तब वह अपनी राय अभिलिखित कर सकता है और कार्यवाही तथा अभियुक्त को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को, जिसके वह अधीनस्थ हो, भेज सकता है ।

(2) जब एक से अधिक अभियुक्तों का विचारण एक साथ किया जा रहा है और मजिस्ट्रेट ऐसे अभियुक्तों में से किसी के बारे में उपधारा (1) के अधीन कार्यवाही करना आवश्यक समझता है तब वह उन सभी अभियुक्तों को, जो उसकी राय में दोषी हैं, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेज देगा ।

(3) यदि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, जिसके पास कार्यवाही भेजी जाती है, ठीक समझता है तो पक्षकारों की परीक्षा कर सकता है और किसी साक्षी को, जो पहले ही मामले में साक्ष्य दे चुका है, पुनः बुला सकता है और उसकी परीक्षा कर सकता है और कोई अतिरिक्त साक्ष्य मांग सकता है और ले सकता है और मामले में ऐसा निर्णय, दंडादेश या आदेश देगा, जो वह ठीक समझता है और जो विधि के अनुसार है ।

326. भागतः एक न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा और भागतः दूसरे न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित साक्ष्य पर दोषसिद्धि या सुपुर्दगी – (1) जब कभी किसी जांच या विचारण में साक्ष्य को पूर्णतः या भागतः

सुनने और अभिलिखित करने के पश्चात् कोई [1][न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट] उसमें अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकता है और कोई अन्य [1][न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट], जिसे ऐसी अधिकारिता है और जो उसका प्रयोग करता है, उसका उत्तरवर्ती हो जाता है, तो ऐसा उत्तरवर्ती [1][न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट] अपने पूर्ववर्ती द्वारा ऐसे अभिलिखित या भागतः अपने पूर्ववर्ती द्वारा अभिलिखित और भागतः अपने द्वारा अभिलिखित साक्ष्य पर कार्य कर सकता है :

परन्तु यदि उत्तरवर्ती [1][न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट] की यह राय है कि साक्षियों में से किसी की जिसका साक्ष्य पहले ही अभिलिखित किया जा चुका है, अतिरिक्त परीक्षा करना न्याय के हित में आवश्यक है तो वह किसी भी ऐसे साक्षी को पुनः समन कर सकता है और ऐसी अतिरिक्त परीक्षा, प्रतिपरीक्षा और पुनःपरीक्षा के, यदि कोई हो, जैसी वह अनुज्ञात करे, पश्चात् वह साक्षी उन्मोचित कर दिया जाएगा ।

(2) जब कोई मामला [2][एक न्यायाधीश से दूसरे न्यायाधीश को या एक मजिस्ट्रेट से दूसरे मजिस्ट्रेट को] इस संहिता के उपबंधों के अधीन अंतरित किया जाता है तब उपधारा (1) के अर्थ में पूर्वकथित मजिस्ट्रेट के बारे में समझा जाएगा कि वह उसमें अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकता है और पश्चात्कथित मजिस्ट्रेट उसका उत्तरवर्ती हो गया है ।

(3) इस धारा की कोई बात संक्षिप्त विचारणों को या उन मामलों को लागू नहीं होती हैं जिनमें कार्यवाहियां धारा 322 के अधीन रोक दी गई हैं या जिसमें कार्यवाहियां वरिष्ठ मजिस्ट्रेट को धारा 325 के अधीन भेज दी गई हैं ।

327. न्यायालयों का खुला होना – [3][(1)] वह स्थान, जिसमें कोई दंड न्यायालय किसी अपराध की जांच या विचारण के प्रयोजन से बैठता है, खुला न्यायालय समझा जाएगा, जिसमें जनता साधारणतः प्रवेश कर सकेगी जहां तक कि सुविधापूर्वक वे उसमें समा सके :

---

[1] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 27 द्वारा "मजिस्ट्रेट" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1978 के अधिनियम सं. 45 की धारा 27 द्वारा "एक मजिस्ट्रेट से दूसरे मजिस्ट्रेट को" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1983 के अधिनियम सं. 43 की धारा 4 द्वारा धारा 327 उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित ।

परन्तु यदि पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट ठीक समझता है तो वह किसी विशिष्ट मामले की जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में आदेश दे सकता है कि जनसाधारण या कोई विशेष व्यक्ति उस कमरे में या भवन में, जो न्यायालय द्वारा उपयोग में लाया जा रहा है, न तो प्रवेश करेगा, न होगा और न रहेगा ।

[1][(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376, धारा 376क, धारा 376ख, [2][धारा 376ग या धारा 376घ] के अधीन बलात्संग या किसी अपराध की जांच या उसका विचारण बंद कमरे में किया जाएगा :

परन्तु पीठासीन न्यायाधीश, यदि वह ठीक समझता है तो, या दोनों में से किसी पक्षकार द्वारा आवेदन किए जाने पर, किसी विशिष्ट व्यक्ति को, उस कमरे में या भवन में, जो न्यायालय द्वारा उपयोग में लाया जा रहा है, प्रवेश करने, होने या रहने की अनुज्ञा दे सकता है :

[3][परंतु यह और कि बंद कमरे में विचारण यथासाध्य किसी महिला न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाएगा ।]

(3) जहां उपधारा (2) के अधीन कोई कार्यवाही की जाती है वहां किसी व्यक्ति के लिए किसी ऐसी कार्यवाही के संबंध में किसी बात को न्यायालय की पूर्व अनुज्ञा के बिना, मुद्रित या प्रकाशित करना विधिपूर्ण नहीं होगा :]

[3][परंतु बलात्संग के अपराध के संबंध में विचारण की कार्यवाहियों के मुद्रण या प्रकाशन पर पाबंदी, पक्षकारों के नाम और पते की गोपनीयता को बनाए रखने के अध्यधीन हटाई जा सकेगी ।]

क्रमशः ..... (आगामी अंक देखें)

---

[1] 1983 के अधिनियम सं. 43 की धारा 4 द्वारा अन्तःस्थापित ।

[2] 2013 के अधिनियम सं. 13 की धारा 22 द्वारा प्रतिस्थापित ।

[3] 2009 के अधिनियम सं. 5 की धारा 24 द्वारा अंतःस्थापित ।

Cover iii

कार्यालय आदेश तारीख 13 फरवरी, 2017 के अनुसार विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों पर छूट देने की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम व प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पुस्तक की मुद्रित कीमत (रुपयों में)	7 वर्ष से पुराने संस्करण पर 35% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	8 से 15 वर्ष पुराने संस्करण पर 50% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	15 वर्ष से अधिक पुराने संस्करण पर 75% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)
1.	भारत का विधिक इतिहास - श्री सुरेन्द्र मधुकर - 1989	30	—	—	8
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि - डा. एन. वी. परांजपे - 1990	40	—	—	10
3.	वाणिज्य विधि - डा. आर. एल. भट्ट - 1993	108	—	—	27
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धांत - श्री शर्मन लाल अग्रवाल - 1993	40	—	—	10
5.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय - डा. एस. सी. खरे - 1996	115	—	—	29
6.	श्रम विधि - श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा - 1996	452	—	—	113
7.	संविदा विधि - डा. रामगोपाल चतुर्वेदी - 1998	275	—	—	69
8.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान - डा. सी. के. पारिख - 1999	293	—	—	74
9.	आधुनिक पारिवारिक विधि - श्री राम शरण माथुर - 2000	429	—	—	108
10.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) - विधि साहित्य प्रकाशन - 2000	225	—	—	57
11.	हिन्दू विधि - डा. रवीन्द्र नाथ - 2001	425	—	—	106
12.	भारतीय भागीदारी अधिनियम - श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ - 2001	165	—	—	41
13.	प्रशासनिक विधि - डा. कैलाश चन्द्र जोशी - 2001	200	—	—	50
14.	भारतीय दंड संहिता - डा. रवीन्द्र नाथ - 2002	741	—	—	185
15.	विधिक उपचार - डा. एस. के. कपूर - 2002	311	—	—	78
16.	विधि शास्त्र - डा. शिवदत्त शर्मा - 2005	580	—	290	—
17.	मानव अधिकार - डा. शिवदत्त शर्मा - 2006	120	—	60	—

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Cover IV

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 47259/88

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए श्रृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105